श्रीराजमाला

(त्रिपुर राजन्यवर्गों का इतिवृत्त)

चतुर्थ लहर

TRIPURA
ETIHAS, KALA,
SANSKRATI

अनुवादक व लेखक
अरविन्द कुमार त्रिपाठी
अलका त्रिपाठी
E_Mail - aktripathi.tripura@gmail.com
Fone - 8762396880

Shri Rajmala /श्रीराजमाला
Tripur Rajanyavargi ka Etivratta (त्रिपुर राजन्यवर्गों का इतिवृत्त)
Chaturth Lehar/चतुर्थ लहर.

Publisher : **Self / E-Book – PDF**

Key Words
इतिहास, त्रिपुरा, त्रिपुरा इतिहास, कला, संस्कृति, पर्यटन राजमाला, श्रीराजमाला,
Shri Rajmala TRIPURA, ETIHAS, ETIHAAS, KALA, SANSKRATI, PARYATAN

Translator / Editor **ARVIND KUMAR TRIPATHI**
ALKA TRIPATHI

Typeset **ARVIND KUMAR TRIPATHI**
ALKA TRIPATHI

Font used **Hindi/ Devnagari - Kruti Dev 010, Size - 14**
English – Arial, Size - 10

Print **PDF format, Other format available on request**
Self-Publishing (No publisher)
E_Mail - aktripathi.tripura@gmail.com
Phone - 8762396880

Price **Rs 00/-, Free,** निःशुल्क, मुक्त, स्वतन्त्र
ISBN **978-93-5493-770-5**
Book Title : SRIRAJMALA - CHATURTH BHAG

लेखक



अरविन्द कुमार त्रिपाठी, **DIG (Retired)**
पुत्र स्वर्गीय आचार्य श्री भगवान दास त्रिपाठी
शिक्षा– विज्ञान परास्नातक(भौतिकी), शिक्षा स्नातक
सेवारत कोर्स व प्रशिक्षण (कुल 24),
सी सु ब द्वारा प्रदत्त विभिन्न सेवा
पदक व अलंकरण

E_Mail - **aktripathi.tripura@gmail.com**
Fone - **8762396880**

विज्ञान परास्नातक(भौतिकी), शिक्षा स्नातक के पश्चात अध्यापन कार्य करते हुए 1987 में सीमा सुरक्षा बल में सहायक समादेष्टा **(Assistant Commandant)** के पद पर प्रवेश कर उप महानिरीक्षक के पद से लगभग 33साल का सफल कार्यकाल पूर्ण कर अगस्त 2019 में सेवानिवृत्त हुए।

सेवा कार्यकाल में 1993 ई में त्रिपुरा में पहला पदस्थापन हुआ। सेवा काल में लगभग 11वर्ष त्रिपुरा में रहा और इसी संक्रमण में त्रिपुरा इतिवृत्त, समस्त जनजातियों पर विस्तृत अध्ययन कर लेखन कार्य भी किया।



अलका त्रिपाठी
शिक्षा परास्नातक(हिन्दी),
स्नातक(हिन्दी व संस्कृत)
शिक्षा स्नातक व **M. Phil.**

प्रकाशित पुस्तकें
श्रीराजमाला : प्रथम भाग
श्रीराजमाला : द्वितीय भाग
श्रीराजमाला : तृतीय भाग
श्रीराजमाला : चतुर्थ भाग
और अन्य पुस्तकें

Key Words

lok, kala, geet,git, chitra, chitra kala, song, sahitya, business, byapar vyapaar, krashi, backward, pichhadapan, akal, sukha, femanin, kanluage, boli, idiom, kavat, muhavare, natya, nratya, vadya, kahani, folk, gahane, story,newspaper, club, bhavan, kile, durg, nehru,subhash, bose, aazad chandra shekhar, gandhi, pandit,

banda, history etihas, Itihas, Bhaugolic, Bhaugolik, jal, nadi, bandh Dam, Minral, Soil, Mitty, Talab, Mohal, muhalle, mandir, Cencus, Animal, bird, pakshi tree, shrub, herbs, forest, arthik, Economic,Agricultural, kheti, Mahua, chirongi,tourism, paryatan
Ammend

चल–01

श्री राजमाला
त्रिपुरा राजन्य वर्ग का इतिहास
चतुर्थ लहर
सटीक और सचित्र
सेनापति रणचतुरनारायण कथित

श्री कालीप्रसन्न सेन विद्याभूषण

द्वारा

सम्पादित

प्रजा सुखे सुखी राजा तद्‌दुःखे यश्च दुःखित।
न कीर्तियुक्तो लोकेऽस्मिन् प्रेत्य स्वर्गे महीयते।।

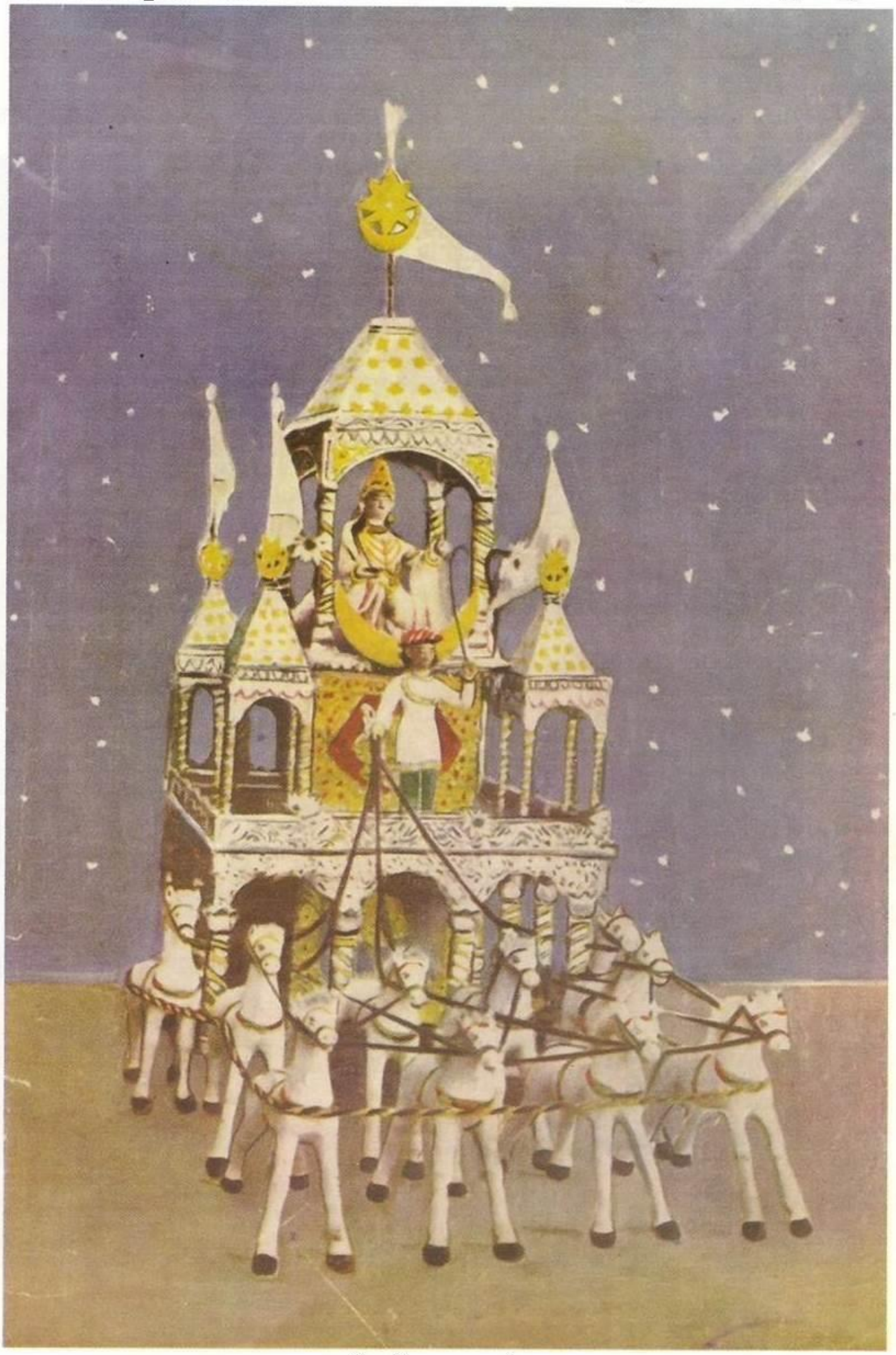
विष्णु संहिता।

श्रीश्रीचन्द्रमा देव
सामुद्रं वैश्यमात्रेयं हस्तमात्रयं सिताम्बरम्। श्वेतं द्विबाहुं बरदं दक्षिणं सगदेतरम्।।
दशाश्वं श्वेत पद्मस्थं विचिन्त्योमाधिदैवतम्। जलप्रत्यधिदैवचं सूर्यास्यमाह्वयेत्तथा।।

चल–01

राजमाला तृतीय लहर

पृष्ठ संख्या –मुख पृष्ठ



श्री श्री चन्द्रमा देव

सामुद्रं वैश्यमात्रेयं हस्तमात्रेयं सिताम्बरं। श्वेतं द्विबाहुं वरदं दक्षिणं सगदेतरम्
दशाश्वं श्वेत पद्मास्थं विचिन्तोय्माधिदैवतम्। जलप्रत्यधिदैवबन्ध सूर्यास्यमाहबयेत्तथा

चल–02

श्री राजमाला
(चतुर्थ लहर)

विषय	–गोविन्दमाणिक्य से कृष्णमाणिक्य तक का विवरण।
वक्ता	–स्व0 जयदेव वजीर और दुर्गामणि वजीर।
श्रोता	–महाराज रामगंगामाणिक्य।
रचना का काल	–उन्नीसवीं सदी प्रथम पाद।

....

चल–03

।। ॐ नमः सरस्वतै।।

श्री राजमाला

(चतुर्थ लहर)

मंगला चरण

वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा।
आदावंते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते।।

पूर्व राजमाला संशोधन

पुरातन राजमाला आछिलो रचित।
प्रसंगेते अलग्निक भाषा ये कुत्सित।।
पूर्व प्रसंग परे पर पूर्वे कोतो।
सेइतो कारणे लोके नाहि बुझे यतो।।
त्रिपुरा राज्येर नाम त्रिपुर ये मते।
त्रिपुर राजार प्रमाण न लिखिछे ताते।।
बारहसौ आटत्रिश सन त्रिपुरा जखनि।
ताहाके सुधिलो(1) पुनि उजीर दुर्गामणि(2)।।
महाभारतादि तंत्र कोरि अन्वेषण।
प्रमाण लिखिलो तार बेद निरूपण।।
एहाते द्विरूक्ति यदि काहार जन्मय।
पुराणादि दर्शिले जे घुचिले संशय।।

मंगला चरण

वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा।
आदावंते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते।।

पूर्व राजमाला संशोधन

पुरातन राजमाला पहले थी रचित।
प्रसंग में अलग्निक भाषा थी जो कुत्सित।।
पूर्व प्रसंगक पूर्व पर पहले था कितना।
कारण यही था कि लोग समझे नहीं उतना।।
त्रिपुर जिस तरह त्रिपुर राज्य का नाम।
लिखा नहीं उसमें राजा का प्रमाण।।
बारह सौ अड़तीस सन् जब था त्रिपुरा।
पुनः उसे वजीर दुर्गामणि(2) ने सुधारा(1)।।
महाभारतादि तंत्रों का कर अन्वेषण।
प्रमाण लिखा उसे कर वेद निरूपण।।
यदि इससे द्विरूक्ति जन्मे किसी मन में।
पुराणादि देख मिटे संशय क्षण में।

---

(1) पहले के राजमाला को संशोधन किया।
(2) दुर्गामणि वजीर का परिचय मध्यमणि में मिलेगा।

चल–04

पुरातन राजमाला आछये विदित।	पुरातन राजमाला है सर्व विदित।
इहा संगे मिलाइले बुझिबे निश्चित।।	इससे मिलाकर समझोगे निश्चित।।
कल्याणमाणिक्य परे जतो राजागण।	कल्याणमाणिक्य बाद हुए जितने राजा गण।
राजा सब लिखा गेलो, तार बिवरण।।	सभी राजा लिखा गये अपना विवरण।।
राधा कृष्ण दुर्गा शिब ब्रह्म परायण।	राधा कृष्ण दुर्गा शिव ब्रह्म परायण।
सरस्वती इष्टदेव कोरिया स्मरण।।	सरस्वती ईष्ट देवी करके स्मरण।।
तान भक्त पदरेणु मस्तके कोरिया।	उनके भक्त पदरेणु कर धारण मस्तक।
कहिबो पांचाली छन्द(1) ताके उद्देशिया।।	उन्हें लक्ष्य करके कहूँगा पांचाली(1) छन्द।।
———	———
प्रस्तावना	प्रस्तावना
जयदेब उजीर छिलो ज्ञान कलेबर।	जयदेव, वजीर थे ज्ञान कलेवर।
तान होइलो दुई पुत्र एक सहोदर।।(2)	उनके थे दो पुत्र एक सहोदर (2)।।
राजमणि उजीर ज्येष्ठ छिलो गुणमणि।	राजमणि वजीर ज्येष्ठ थे गुण खान।
दुर्गामणि कनिष्ठेते बोलिलो आपनि(3)।।	दुर्गामणि कनिष्ठ से कहे स्वयम्।।(3)
गोविन्द माणिक्याबधि जतो राजागण।	गोविन्द माणिक्य अवधि में जितने राजागण।
कृष्ण माणिक्य महाराजा कोरि समापन।।	कृष्ण माणिक्य राजा करता है समापन।।

....

(1) पाँचाली – चालीसा। बंगला में इसे पाँचाली भी कहा जाता है। पहले जमाने में पाँच आदमी मिलकर सुर सहयोग से स्वराष्ट्रोप करके जो सब पद गाते थे, उसे ही पाँचाली कहा जाता है। (हिन्दी में इस तरह के पद साधारणतः चालीसा के तौर पर लिखा जाता है– हिन्दी अनुवादक) इस पाँचाली की नाना छन्दों में एक टोली बनाकर गाया जाता था। दल के मुखिया हाथ में चामर लेकर नाच नाच कर गाते थे। दूसरे लोग इसे दोहराते थे। (बंगला में इन दोहराने वाले को ''दोहार'' कहा जाता था– हिन्दी अनुवादक) बंगला में कृत्तिबास का रामायण, काशीराम का महाभारत, कविकंकण मुकुन्दराम की चण्डी आदि काव्य ग्रंथों की गणना इसी पाँचाली में होती थी। फर्क इतना है कि चालीसा हमेशा छोटा होता है। दासरथी राय, मधुसूदन काइन, घनराम, काना हरिदत्त और विजय गुप्त आदि अनेक कवियों ने नाना विषयों पर पाँचाली की रचना की है।

बंगला भाषा में पाँचाली रचना की पद्धति किस काल की है, यह निर्णय करना सुकठिन है। यह प्रणाली पाँच सौ साल से अधिक समय से चलती आ रही है। मामूली तौर से ऐसा ही सिद्धान्त किया जा सकता है। इसका प्रचलन किस प्रदेश से पहले प्रारम्भ हुआ था? इस समय यह निर्णय करना भी असाध्य है। किसी किसी भाषा तत्वविद् के अनुसार इस प्रणाली की रचना पद्धति पांचाल देश से गृहीत होने की वजह से इसे ''पाँचाली'' या पांचाली हुआ है। यह सिद्धान्त अभ्रान्त है या नहीं यह निर्णय लेने का कोई उपाय नहीं है।

(2) जयदेव वजीर के दो पुत्र एक मातृ गर्भ जात थे।

(3) जयदेव वजीर ने अपने कनिष्ठ पुत्र से कहा।

चल–05

रामगंगा माणिक्य स्थाने बोलिछि पूर्बेते।
राजमाला मध्यावृत लिखोह ताहाते।।
पितृ आज्ञा दुर्गामणि बान्धिया शिरेते।
सेई सब राजागण कोहि साबहिते।।
महाराजा रामगंगामाणिक्य नृपवर।
जयदेव उजीर स्थाने बोलेन सादर।।
तुमि तो उजीर होय कृष्णमाणिक्येर।
बहुदर्शी होय तुमि आमार बंशेर(1)।।
बयोधिक आछो तुमि ज्ञान साबोहित।
नाना शास्त्र ज्ञान आछे तोमार बिदित।।
कल्याण माणिक्याबधि शुनिछि राजागण।
गोबिन्द माणिक्याबधि कोहिबा एखन।।
राजमाला बंशावली बंशेर गौरब।
राजमाला बिने बंशेर ना रहे सौरभ।।
नृप सम्बोधिया उजीर कोहिलो आपन।
मुकुन्द माणिक्य छिलो नृपति जखन।।
सेई काले जन्मियाछि बोलि महाराज।
तार पूर्वे शुनियाछि बृद्धेर समाज।।
जाहा शुनियाछि, जाहा देखिलो आपन।
सेई सब कोहि आमि शुनह राजन।।
कथा पूर्बे, आमि बृद्ध स्थबिर समय।
सब कथा मने राखा कोहिते संशय।।
बहुजना बहुकार्य एक काले कोरे।
पूर्ब परे ना कोहिले एकत्रे ना पारे।।
प्रसंगेर क्रम ग्रंथ पूर्वपरे होय।
ज्ञानबान होइले ताहा बुझये निश्चय।।
———

रामगंगा माणिक्य का स्थान कहा पहले।
राजमाला मध्यावृत्त लिखा है वहाँ।।
पितृ आज्ञा, दुर्गामणि किया मस्तक धारण।
उन सभी राजाओं का किया वर्णन।।
महाराजा रामगंगामाणिक्य नृपवर।
जयदेव वजीर से कहा सादर।।
तुम तो वजीर हो कृष्ण माणिक्य के।
बहुदर्शी हो तुम हमारे वंश के(1)।।
उम्र में बडे हो तुम, ज्ञान तुम में सहजात।
नाना शास्त्रों के ज्ञान हैं तुम्हें ज्ञात।।
कल्याण माणिक्यावधि तक सुना है दास्तान।
गोविन्द माणिक्यावधि अब करोगे बखान।।
राजमाला वंशावली है वंश का गौरव।
राजमाला बिना रहे ना वंश का सौरभ।।
कहा वजीर ने नृप को कर सम्बोधन।
मुकुन्द माणिक्य जब थे वहाँ राजन।।
उन दिनों में जन्मा हूँ, कहता हूँ महाराज।
उसके पहले है सुनाया मुझे वृद्ध समाज।।
जो कुछ सुना है, मैंने जो देखा है स्वयम्।
वही सब कहता हूँ सुनों हे राजन।।
कथा पूर्व में मैं वृद्ध, है स्थविर समय।
सभी बातें रखना मन में, कहने में संशय।।
बहुजन करते हैं एक काल बहु काज।
पूर्व न कहने से, न कहा जाता एक साथ।।
प्रसंग क्रम का ग्रंथ होता है, अग्र पश्चात।
ज्ञानवान होने पर वह समझे निश्चय बात।।
———

---

(1) तुम मेरे वंश के विवरण के बारे में बहुदर्शी हो।

चल–06

गोविन्द माणिक्य खण्ड

पनर श बिराषि षक ज्येष्ठ मास ताते।
त्रयोदस दिन छिलो बुधवार जाते।।
गोविन्द माणिक्य राजा होइलो राजन।
गुणवती महारानी विख्यात भुवन।।
परगणे नुरनगर झिल स्थान(1) छिलो।
महारानी सेई स्थाने सागर खनिलो(2)।।
रानी निज नामे गुणसागरेर नाम।
सागर उत्सर्गिया रानी पूरे मनस्काम।।
राजार महर शिब लिंग संस्थान।
अन्य पृष्ठे राजा रानी नामेर व्याख्यान।।
राजार बैमात्र भ्राता नक्षत्र ठाकुर।
मुर्शुदाबादेते तुले नबाब हूजुर।।
गोबिन्द माणिक्य राजा राजत्व साधन।
कोतो दिन सुखे काल कोरेन क्षेपन।।
नबाब सनद कोरे नक्षत्रे संधान।
राजत्व सनद लोइया आसे त्वरमान।।
उदयपुर नक्षत्र आसये जखन।
मंत्री बर्ग नृपतिते कोरे निवेदन।।
युद्ध कोरो महाराजा ना कोरिओ भय।
कि कोरिते पारे से जे परामर्शे लय।।(3)
गोविन्द माणिक्य राजा बोलिलो तखन।
भाई संगे कोरि युद्ध किसेर कारण।।
आत्म कलह होइले प्रजा नष्ट होय।
पापे त होइबो स्थिति बोलिलो निश्चय।।

गोविन्द माणिक्य खण्ड

पन्द्रह सौ बयासी शक जेठ का महीना।
त्रयोदस दिवस था बुधवार दिना।।
नृप हुए गोविन्द माणिक्य, हे राजन।
महारानी गुणवती थी विख्यात भुवन।।
झील स्थान(1) परगना नूरनगर।
खनन किया महारानी ने वहाँ सागर(2)।।
रानी के निज नामवर हुआ गुणसागर नाम।
सागर उत्सर्ग रानी का पूरा नाम मनस्काम।।
राजा की मुहर पर शिव लिंग का संस्थान।
दूसरी पीठ पर राजा रानी नाम का बखान।।
राजा के वैमात्र भाई थे नक्षत्र ठाकुर।
मुर्शिदाबाद थे जहाँ नवाब हूजुर।।
गोविन्द माणिक्य राजा का राजत्व उस क्षण।
कितने काल सुख से राज्य भोगे दिनो दिन।।
नबाब ने सनद भेजा नक्षत्र के संधान।
राजत्व सनद लेकर वहाँ आया तक्षण।।
उदयपुर नक्षत्र आया जिस क्षण।
मंत्री वर्ग ने नृपति से किया निवेदन।।
युद्ध करो महाराज, न करना कभी भय।
क्या कर सकता है वह, यह जानो निश्चय।।(3)
राजा गोविन्द माणिक्य ने कहा उस क्षण।
भ्राता संग युद्ध करूँ मैं किस कारण।।
आत्म कलह से प्रजा होती नष्ट।
पाप से बिगडे स्थिति यही है स्पष्ट।।

---

(1) जलमय भूमि को झील कहते हैं।
(2) वर्तमान कस्बा थाना के अधीन जाजीयाडा गाँव में यह सुविशाल सरोवर अब भी है।
(3) परामर्श से यह स्थिर होता है कि युद्ध में प्रतिपक्ष सफलता प्राप्त नहीं कर सकता।

चल–07

राजत्व कोरिलो आमि बर्ष परिमाण।
एखनि राजत्व ज्ञान ताहान विधान।।
पोरेते जिज्ञासे राजा विस्तार कोरिया।
कोहिबा जे सब कथा प्रचार कोरिया।।
छत्र माणिक्य राजा होइलो जखन।
गोबिन्द माणिक्य राजा विदेशे गमन।।
कोन पथे गिया छिलो केबा संगे छिलो।
किमतो प्रकारे राजार कालक्षय होइलो।।
कतो दिन पोरे राजा देशेते आसिलो।
पुनरपि राज्य भोग किमते कोरिलो।।
कहो कहो उजीर तुमि ज्ञानेते विहित।
शुनिते श्रवण सुख बंशेर चरित।।
शुनो महाराजा तुमि ए सब कथन।
गोविन्द माणिक्येर यतो कहि विवरण।।
उदयपुर त्यागे राजा गोविन्द नृपति।
रानी संगे मन रंगे रिहांगे(1) बसति।।
राज्य भ्रष्ट देखि राजा रिहांगिया प्रजा।
भक्ति भावे ना पूजिलो सेई महाराजा।।
रानी कहे प्रजा तोरा अनेक होइला।
तेकारणे ग्लानि भाब आमार कोरिला।।
एई शाप अमि दिलो तोमाग ऊपर।
धर सहस्राधिक होइले मोरिबा अपर।।
एई रूपे शाप दिलो रानी गुणवती।
सेई होइते रिहांगियार नाहि अव्याहति।।
हाजार घर उर्द्धे होइले रिहांग प्रजार।
कोनो मते मारा पोडे कुबुद्धि प्रचार(2)।।
एई मत प्रजा दुष्ट नाहिको राजार।
एई कथा त्रिपुरो आछये प्रचार।।

राजत्व किया हूँ एक वर्ष परिमाण।
अभी राजत्व ज्ञान उनका विधान।।
बाद में पूछे राजा, सब कुछ सविस्तार।
कहोगे सारी बातें करके प्रचार।।
छत्र माणिक्य राजा हुए जिस क्षण।
गोविन्द माणिक्य का विदेश गमन।।
किस राह गये साथ था वहाँ कौन।
कैसे राजा के बीते वहाँ दिन।।
फिर कितने दिनों बाद राजा लौटे स्वदेश।
पुनः राज्य भोग किया कैसे नरेश।।
कहो कहो वजीर तुम विहित ज्ञान के ज्ञाता।
वंशचरित श्रवणसुखकर यह कौन नहीं जानता।।
सुनो महाराज तुम हमारा यह कथन।
गोविन्द माणिक्य का जो कुछ कहूँ विवरण।।
उदयपुर को त्यागे राजा गोविन्द नृपति।
रानी संग मन रंगाए रिहांग(1) में की स्थिति।।
राज्य भ्रष्ट देख राजा रिहांगिया प्रजा।
भक्ति भाव से पूजा नहीं अपने महाराजा।।
कहा रानी ने, तुम लोगों का बहुत हुआ।
इसी कारण ग्लानि भाव, मेरे में उपजा।।
यह श्राप मैंने दिया तुम लोगों पर।
घर सहस्राधिक होते ही वह जायेगा मर।।
इस तरह श्राप दिया रानी गुणवती।
तब से ही रिहांगियों की नहीं अव्याहति।।
रिहांग प्रजा की हजार घर से होते ही वृद्धि।
किसी तरह होती मृत्यु, फैलती कुबुद्धि(2)।।
नहीं थी राजा की ऐसी दुष्ट प्रजा।
त्रिपुरा में है प्रचारित यह कथा।।

---

(1) रिहांगे – रियां जाति के वास स्थान को रिहांगे कहा जाता है। इस पार्वत्य जाति का विवरण यथा स्थान प्रदान किया जायेगा।

(2) इनके ध्वंस के द्वारा उनकी कुबुद्धि का फल प्रचारित होता है।

चल–08

चट्ट ग्रामे चलिलेक सेई तो राजन।
जगन्नाथ अनुज संगे चले सेई क्षण।।
रामठाकुर राजपुत्र सुनीति प्रचुर।
द्वितीय ताहान भ्रातृ दुर्गा नाम ठाकुर।।
जगन्नाथ सुत सूर्यप्रतापनारायण।
चम्पक राय आर पुत्र युद्धे बिचक्षण।।
जगन्नाथ तनय छिले आर एकजन।
पंथ होइते फिरि आइसे स्वदेशे गमन।।
जगन्नाथ ठाकुर जामाता सम्बोधिया।
बोलिलेंत आमा पुत्र आनो फिराइया।।
प्रणमिया जामाता जे बोलिले तखन।
केमेते आनिबो ताके राजार नन्दन।।
फिरि यदि नाहि आइसे कोरिबो केमन।
आज्ञा दिलो सुतबर ना आइसे जखन।।
शिरश्छेद कोरि ताहार आनिबे तखन।
एई बाक्ये जामाताय तखने गमन।।
कोतो दूर पथे जाइया कुमारके देखे।
राजार दोयाई दिया दाँडाइलो सम्मुखे।।
फिरिया आइसये ठाकुर बोलिये तोमारे।
नाई आइसो यदि तुमि काटिबो तत्परे।।
क्रोध होइया राजपुत्र खड्ग हाते लोइलो।
जामाता के मारिबारे हस्त उठाइलो।।
तखनेहि जामाताय सिंहनाद कोरिलो।
हाते खडग राज पुत्र स्तब्धबत् रहिलो।।
जामाता के खड्गघात तखने कोरिलो।
सेई घाते राजपुत्र प्राणेते मरिलो।।
जगन्नाथ ठाकुर बोइसे राजार सभाते।
जामाता आनिया शिर दिलेन साक्षाते।।
राजाए दैखिया शिर बिस्मय होइलो।
जगन्नाथ प्रति राजा निष्ठुर बोलिलो।।

चट्ट ग्राम को वहाँ से चले राजन।
जगन्नाथ अनुज चले संग उस क्षण।।
राम ठाकुर राजपुत्र सुनीतिवान।
द्वितीय उनका भाई जिसका दुर्गा ठाकुर नाम।।
जगन्नाथ सुत सूर्यप्रताप नारायण।
चम्पक राय और एक पुत्र युद्ध में विचक्षण।।
और एक थे जगन्नाथ तनय।
लौटे स्वदेश, पथ से ही वहाँ उस समय।।
किया जामाता से सम्बोधन जगन्नाथ ठाकुर।
मेरे पुत्र को ले आओ अभी लौटाकर।।
प्रणत हो जामाता ने कहा उसी क्षण।
कैसे लौटा लाँउ उसे, वह है राज नन्दन।।
यदि नहीं लौटे तो करूँगा मैं क्या फिर।
आज्ञा दिया, यदि न लौटे वह आखिर।।
शिरच्छेद कर उसे लाओगे तत्क्षण।
वाक्य सुन उसी समय जामाता का गमन।।
कुछ दूर आगे बढ़ वहाँ देखा कुमार।
दुहाई दे राजा का, खड़ा हुआ जाकर।।
लौट चलो ठाकुर कहता हूँ मैं तुमको।
नहीं अगर जाओगे तुम्हें काटना है मुझको।।
क्रुद्ध हो राजपुत्र ने खड्ग लिया हाथ।
मारने जामाता को उठाया अपना हाथ।।
तभी जामाता ने किया सिंहनाद।
खड्ग हाथ, राज पुत्र रह गया स्तब्ध।।
जामाता ने तभी किया खड्गाघात।
उसी आघात से राजपुत्र मरा साथ साथ।।
जगन्नाथ ठाकुर बैठे थे राज सभा में।
जामाता लाकर सिर रख दिया सामने।
राजा देख यह सिर, हुआ बडा विस्मित।
निष्ठुर वचन कहा प्रति जगन्नाथ।।

चल–09

ता परे रसांगे राजा उपस्थित होइलो।	इसके पश्चात उपस्थित हुए राजा– रसांग।
रसांगेर राजा निकट सम्माने रहिलो।।	रसांग नरेश ने किया सम्मान उसके संग।।
लोकजन दिया मघे रखिलो सादर।	लोग बाग देखकर मघ ने साथ रखा सादर।
उदयपुर नक्षत्र नृप होइलो तार पर।।	उदयपुर में नक्षत्र नृप तब जाकर।।
क्षत्र माणिक्य राजा ताहान आख्यान।	क्षत्र माणिक्य राजा का सुनिये आख्यान।
सप्तवर्ष राजत्व छिलो कोरि परिमाण।।	सप्त वर्ष राजत्व था करता हूँ परिमाण।।
उदयपुर क्षत्र सागर कोरिया खनन।	उदयपुर में क्षत्र सागर करके खनन।
बसन्त होइया राजार होइलो मरण।।	बसन्त से हुआ वहाँ राजा का निधन।।
ताहान पुत्र छिलो उच्छव राय ठाकुर।(1)	उनके पुत्र थे उच्छव राय ठाकुर।(1)
दानादि कोरिया श्राद्ध कोरिलो प्रचुर।।	किया श्राद्ध, दानादि करके प्रचुर।।
गोबिन्द माणिक्य राजा रसांगेर देशे।	गोविन्द माणिक्य थे राजा रसांग देश।
सुजा बादशाह भ्राता संगे विवाद विशेषे।।	सुजा बादशाह भ्राता संग करे विवाद विशेष।।
औरंगजेब बादशाह तखने होइलो।	औरंगजेब बादशाह उसी समय हुआ।
राज्यभ्रष्ट होइया सुजा रसांगेत गेलो।।(2)	राज्य भ्रष्ट होकर सुजा, रसांग देश गया।।(2)
गोबिन्द माणिक्य राजा सेई स्थाने छिलो।	गोविन्द माणिक्य राजा थे उसी जगह।
हेन काले सुजा बादशा उपस्थित होइलो।।	उसी समय उपस्थित हुआ सुजा बादशाह।।
त्रिपुर रसांग राजा बोइसे सिंहासने।	त्रिपुर रसांग राजा थे बैठे सिंहासन।
बादशा देखिया त्रिपुर उठिलो तखने।।	बादशाह को देख त्रिपुर उठे उसी क्षण।।
सिंहासन होइते लामे त्रिपुर राजन।	सिंहासन से उतरे त्रिपुर राजन।
सुजा बादशाह सिंहासने कोरिलो स्थापन।।	बादशाह सुजा को बैठाया सिंहासन।।
रसांगेर महाराजा बोलिलो आपन।	रसांग के राजा ने तब कहा स्वयं।
कि कारणे म्लेच्छ राजा दिछो सिंहासन।।	किस कारण म्लेच्छ को दे दिया सिंहासन।।
राजा बोले नरेश्वर कोरि निवेदन।	कहा राजा ने मैं करता हूँ निवेदन।
ऐई तो सुजा बादशा विख्यात भुवन।।	यही तो सुजा बादशाह विख्यात भुवन।।
तुमि आमि हेनो राजा आछे बहुजन।	तुम्हारे हमारे सम हैं राजा बहुजन।
ताहान राज्येते कोतो होइच्छे पालन।।	उनके राज्य में कितना हुआ है पालन।।

(1) उत्सव राय ठाकुर।

(2) शाह सुजा भागकर पहले त्रिपुरा में आये। उन्हें मारकर मृत देह को भेजने के लिए औरंगजेब ने त्रिपुरेश्वर को अनुरोध कर एक पत्र भेजा था, इस बारे में पूर्ण विवरण मध्यमणि में मिलेगा।

बसन्त –**Chicken Pox**

चल–10

एहान चाकर निकट ना पारे बोसिते।	ऐसा चाकर, ना बैठ सके यहाँ।
आर सिंहासने त्रिपुर बोसिलो त्वरिते।।	दूसरे सिंहासन पर त्रिपुर जा बैठे वहाँ।।
सभाभंगे राजा सुजा एकत्रे गमन।	सभा भंग राजा सुजा का एक साथ गमन।
सुजा बादशाह गोविन्द माणिक्ये कथन।।	सुजा बादशाह, गोविन्द माणिक्य का हुआ कथन।।
राजा संबोधिया बादशा बोलिलो तखन।	बादशाह ने कहा राजा को कर संबोधन।
आमार मर्यादा तुमि राखिछो एखन।।	मेरी मर्यादा तुमने ही रखा है इस क्षण।।
हेन काले किबा दिबो नाहि किछु हेनो।	इस हालात में क्या दूँ मैं ठहरा महा अभाजन।
(1)दोलित निमचा गले राजा ते प्रदान।।	दोलित निमचा(1) राजा को उसने किया प्रदान।।
महाराजा गले दिलो कोरिया सादर।	महाराजा ने गले लगाया करके सम्मान।
हिरार अँगूरी दिलो मूल्य बहुतर।।	हीरे की अँगूठी दिया महा मूल्यवान।।
रसांगेर राज कन्या बादशा विवा कोइलो।	बादशाह ने किया रसांगराजकन्या से विवाह।।
सेई काले सुजा बादसार कुबुद्धि जन्मिल।।	कुबुद्धि से मन में अपनी विचित्र चाह।।
रसांगेर राजा बध कोरिते यतन।	रसांग के राजा को करके हेतु निधन।
चल्लीस जन मल्ल आनि कोरे नियोजन।।	चाल्लीस मल्ल योद्धाओं का किया नियोजन।।
आंगाजिरा(2) पोइराइया दोलाते उठिया।	आंगाजिरा (2) पहना कर पालकी में बैठाया।
दोला प्रति दुई मल्ल रहिलो बोसिया।।	हर पालकी में दो मल्लों को उसने छिपाया।।
एकखानि दोला मध्ये काहार(3) आष्टजन।	हर पालकी ढोने को लगे आठ कहार।(3)
रसांगेर राजबाडी कोरिछे गमन।।	चले उठाकर पालकी वे रसांग भवन की ओर।।
राजकन्या राजबाडी जाहे बोलि कहे।	राज कन्या राज भवन जा रही है, कहकर।
षष्ठ देहरी पार होइलो ना कोरिया भये।।	छठी देहरी पार किये वे बिना किसी भय डर।।
सप्तम देहरी पोरे बोले चकिदार।	सातवीं देहरी के पश्चात, बोला चौकीदार।
एतो सब दोला आसे ए कोन विचार।।	इतने सभी डाँलियाँ आई यह कैसा विचार।।
द्वारबन्ध द्वारी बृद्धे कोरिलो तालास।	द्वार बन्द कर वृद्ध द्वारी ने उनमें किया तलाश।
दोलाहने नामे युद्धा युद्धेते बिनाश।।	डोली में से उतरे योद्धा, हुआ युद्ध में विनाश।।
मारिलेक युद्धागण राजार भुवन।	मारा योद्धा गण राजा के भवन।
गुप्तभावे सुजासाहा स्थानांते गमन।।(4)	गुप्त भाव से सुजा ने किया स्थानांतर गमन।।(4)
उद्देश नाहिक बादशा कोरिलो तालास।	नहीं मिला वह बादशाह, किया बहुत तलाश।
रसांगेर राजा चित्ते विकार प्रकाश।।	रसांग राजा के मन में हुआ विकार प्रकाश।।

(1) दोलित निमचा – कटि बन्ध स्थित पारस्थ देश का महा मूल्यवान निमचा तलवार।

(2) आंगाजिरा – युद्ध का पोशाक।

(3) कहार– शिक्षिका, वाहक, बेहारा योद्धागणों ने छद्मवेश में शिविका वहन किया था

(4) शाह सुजा के परिणाम के विषय में मत विरोध है। मध्यमणि में इस विषय पर आलोचना होगी।

चल–11

गोविन्द माणिक्य प्रति बोलेन राजन्।
राज्ये याव नरेश्वर आपन भुवन।।
कोतो घर मघ अष्टधातु सिंहासन।(1)
देव जन्ये मघ राजा कोरिलो अर्पण।।
घटि एक भरटेर द्रव्य नाना मत।
एई सब दिया राजा विदाय राज्येत।।
सेई स्थाने होइते राजा चट्टले आसिलो।(2)
छत्र माणिक्य राजा मृत्यु तखने शुनिलो।।
त्रिपुरेर लोक सब चट्टले गमन।
गोविन्द माणिक्य स्थाने कोरे निवेदन।।
उदयपुर आसे राजा आनन्द विस्तर।
पुनर्बार महीपाल होइलो नरेश्वर।।
गोविन्द माणिक्य पूर्वे राजा त्रिपुरार।
केह नृप नाहि दिछे कर बादसार।।
गोविन्द माणिक्य राजा पुनर्बार होइलो।
तदबधि नजराना हस्ती कर दिलो।।
बत्सरे पंच हस्ती करे निबंधिया।
ताहा होते एक हस्ती अर्द्धेक मापिया(3)।।
सेइतो अर्द्धेक हस्ती राज करे जाये।
आर अर्द्धेकेर मूल्य नृपति जे पाए।।
छत्र माणिक्येर पुत्र उच्छवराय नाम।
बोलिलेन्त एई राज्ये काटा मारा काम।।
एई स्थाने आमा स्थिति कभु भालो नय।
तुले(4) थाका जाइबो ढाका आमा मने लय।।

गोविन्द माणिक्य प्रति बोले राजन्।
नरेश्वर तुम जाओ अब अपने भवन।।
कुछ घर मघ और अष्ट धातु सिंहासन।(1)
देवता के लिए मघ राजा ने किया अर्पण।।
एक घडा भर पूर्ण नाना द्रव्यों के साथ।
यह सब देकर विदा किया राजा को साक्षात्।।
वहाँ से आये सीधे चट्टल।(2)
छत्र माणिक्य की मृत्यु सुनी पहले पहल।।
त्रिपुर के लोगों का हुआ चट्ट आगमन।
गोविन्द माणिक्य से सबने किया निवेदन।।
उदयपुर आये राजा हुआ आनन्द विस्तार।
पुनः महिपाल हुए त्रिपुरा नरेश्वर।।
गोविन्द राजा के पहले नृप त्रिपुरा को।
दिया नहीं राजकर त्रिपुर राजा को।।
गोविन्द माणिक्य हुए राजा आकर।
तद्बधि नजराना आकर दिया हस्ती कर।।
वर्ष प्रति पाँच हाथी, हुआ कर निर्धारण।
उसमें एक हस्ती का होगा अर्द्ध (3)नापकरण।।
वही अर्द्धेक हस्ती राजकर में आये।
और अर्द्धेक मूल्य नृपति ही पाये।।
छत्र माणिक्य के पुत्र, उच्छवराय नाम।
कहा इस राज्य में है मारना काटना काम।।
मेरी स्थिति कभी अच्छी नहीं यहाँ।
तुल(4) जाना है ढाका, उनका है मन।।

---

(1) यह सिहांसन इस समय चतुर्दश देवता के व्यवहार में है।

(2) चट्टल – चट्ट गाँव।

(3) हाथी की उच्चता को नापा जाता है। पीठ का जो भाग सामने का पैरों के ठीक ऊपर है। उसी के ऊपर से खासतौर पर जहाँ बैठा जाता है, वहाँ पैर के नाखून तक नापकर उँचाई निर्णित होती है। उँचाई की कमी बेशी पर हाथी के मूल्य का निर्धारण होता है।

(4) तुल – उस समय नवाब के दरबार में त्रिपुरा के पक्ष में एक प्रतिनिधि रखने का नियम था। इस प्रतिनिधि को ''तुल'' कहा जाता था। ''तुल'' शब्द का अर्थ है तुल्य अर्थात राजा के तुल्य क्षमता के अधिकार प्राप्त व्यक्ति।

चल–12

मसाराते जागीर राज्य कोरिया निश्चय।	मसारात में जागीरदारी कर निश्चय।
तुलेते जाइया रहे राजार तनय।।	तुल जाकर रहे नृपति तनय।।
जेई सब तुले थाके आछे निरूपण।	जो रहते हैं बनकर तुल उनका है निरूपण।
साबेक रत्तननगर मसारा पायन।।	रतन नगर शाह है पाते मासिक वेतन।।
ताहार जे परिवर्त कादबा परगना।	उसके बदले कादबा परगना।
बेदारा आमिराबाद कोरिया सिमाना।।	बेदारा आमिराबाद करके सीमाना।।
ये तिन परगना पाये उच्छव राये।	यह तीन परगना मिला उच्छवराय के हित।
गोविन्द माणिक्य राजा दिलो मसाराये।।	गोविन्द माणिक्य ने दिया मासिक वेतन ठीक।।
चट्टेलेत चन्द्रशेखर मठ निर्मिया।	चट्ट में चन्द्रशेखर ने किया मठ निर्माण।
देवार्थेते महाराजा जलाशय दिया।।	देवार्थ में महाराजा किया जलाशय खनन।।
गोविन्दसागर नाम कोरिलो तखन।	गोविन्द सागर किया तभी उसका नाम।
तिषिना उदयपुरे कोरिछे शोभन।।	तृष्णा उदयपुर का कर रहा शोभन।।
गंगा तीर गेलो राजा स्नान कोरिबार।	गंगा तीर गये राजा करने हेतु स्नान।
स्तुति कोरि भागीरथी होइते निस्तार।।	उद्धार हित किया वहाँ भागीरथी स्तवन।।
ताम्र पत्रे सनद लिखि द्विजेते अर्पण।	ताम्र पात्र में सनद लिख किया द्विजों को अर्पण।
कनकेर तुला कोइलो पुण्येर कारण।।	कनक तुला दान पुण्य के कारण।।
नाना देशी द्विजवर पाइलो भूमि दान।	नाना देश के द्विजों ने पाया भूमि दान।
गोविन्द माणिक्य राजा वंशेर प्रधान।।	गोविन्द माणिक्य राजा थे वंश के प्रधान।।
चारि आना काणि(1) भूमि कोरे राजकर।	चार आना कानि(1) प्रति किया राजकर।
चारि आना निज नामे मारिलो मोहर।।	चार आना अपने नाम से लगा दिया मोहर।।
आमा वंशे चारि आना काणि कर लय।	मेरे वंश में चार आना होता है कानि कर।
सेई राजा चारि आनी मारिबो निश्चय।।	वही राजा चार आना लेगे जोड़कर।।
आर राजार सिकिर कार्य होयेत जखन।	और राजा एक चौथाई कार्य होगा जब।
गोविन्द माणिक्येर सिकि कोरिबो तखन।।	गोविन्दमाणिक्य का सिकि कार्य करेगा तब।।
राजार निषेध वाणी शुनहो राजन।	राजा की निषेध वाणी सुनो हे राजन।
अन्य राजा सिकि मोहर ना मारे कखन।। (2)	अन्य राजा चारआने का न मारे कभी मुहर।।(2)

---

(1) एक कानिः ये बीधा से बड़ा है। साधारणतः 33 **Decimal** एक बीघा कहते हैं। और 40 **Decimal** का एक कानि। त्रिपुरा में बीघा के बदले कानि का हिसाब चलता हैं।

(2) महाराज गोविन्द माणिक्य चार आना अर्थात रूपये का एक चौथाई को बंगला में सिकि कहते है। महाराज गोविन्द माणिक्य ने इस रूपये के एक चौथाई अर्थात एक सिकि की मोहार का प्रचलन किया था। इस समय भूमि के कर को कम करके चार आना/ एक सिकि/25पैसा प्रति कानि किया गया था। उस समय उन्होंने कहा था, ''हमारे वंश में जो राजा चार आना/ एक सिकि प्रति कानि कर चलायेगें। वही चार आने की मोहर या मुद्रा प्रचलन के अधिकारी होगें। जो इससे अतिरिक्त कर लेगें,

चल–13

राज सनदेर मोहर पद्मेर आकृति।	राज सनद की मुहर थी पद्म आकृति।
निज नाम मध्ये बोसे पद्म–मोहर ख्याति।।	निज नाम मध्ये अंकित पद्म मोहर ख्याति।।
चतुर्भिते पंचनाम आपना पूर्बेर।	पाँच पँखुडिओं में अंकित पूर्व नाम पंच राजा।
वेष्टित लिखित नाम थाके जे राजार।।(3)	मध्य स्थान नाम सुशोभित नाम महाराजा।।(3)
एक जन सदागरे आनिलो लबण।	ले आया नमक एक सौदागर।
हस्ती दिया सेई लबण लोइलो राजन।।	बदले में हस्ती दे लाये नमक दोकर।।
उदयपुर प्रजा जतो पात्र मित्रगण।	उदयपुर के प्रजा और पात्र मित्रगण।
सकलके महाराजा दिलो से लबण।।	सभी को महाराजा ने दिया वह लवण।।
राजा बोले एई लबण खाव जेई जन।	नृप ने कहा यह नमक खायेगें जो सभी जन।
आमा वंशे दुष्ट भाव ना करो कखन।।(4)	मेरे वंश पर दुष्ट भावना न करो किसी क्षण।।(4)

उनके लिए रूपये की एक चौथाई मुद्रा का प्रचलन करना निषिद्ध रहेगा। आवश्यकता पड़ने पर वे सभी राजा मेरे प्रचारित इस सिक्के का व्यवहार कर सकते हैं'' महाराज गोविन्द के इस आदेश के सम्मानार्थ परवर्ती राजाओं ने पूर्ण मुद्रा का प्रचार किया, किसी ने अर्द्ध मुद्रा या चौथाई मुद्रा का प्रचलन नहीं किया।

महाराज गोविन्द माणिक्य ने इस आदेश की आलोचना करने से परवर्ती काल के और एक आदेश की बात स्मृति पटल पर उदित होती है। बंगाल के शासक साइस्ता खाँ के शासनकाल में रूपये में आठ मन चावल बेचा जाता था। वे ढाका नगरी परित्याग कर जाने के पहले पश्चिम के सदर द्वार से निकले और उस स्थान को बन्द कर आदेश दिया कि जिस शासनकर्ता के समय पुनः रूपये में आठ मन चावल बेचा जायेगा वे ही ये द्वार खोलेगें। इसके अलावा यह द्वारा खोलना निषिद्ध है। इस आदेश अनुसार दीर्घ काल तक दरवाजा बन्द ही रहा। बंगाल के शासक सरफराज खाँ के समय पुनः एक रूपये में आठ मन चावल जब बिकने लगा तो उन्होंने महासमारोह के साथ उस द्वार को खोला गया। महाराज गोविन्द माणिक्य के साथ इस आदेश का सादृश्य परिलक्षित होता है।

(3) त्रिपुरेश्वरों की खास मोहर ''पद्म मोहर'' के नाम से विख्यात है। इसमें पंच दल विशिष्ट एक पद्म अंकित है। जिस राजा की मोहर है उसके पहले पाँच राजाओं के नाम उन पाँच पँखुडियों पर अंकित है और मोहर पद्म के मध्य स्थल में प्रचलनकारी राजा का नाम उत्कीर्ण किया गया है। यह सील/मोहर त्रिपुरेश्वर के खास दरबार से प्रचारित सनद और दस्तावेजों में व्यवहृत होती थी। सील/मोहर विषयक विवरण यथा स्थान दिया जायेगा। महाराज गोविन्द माणिक्य के समय से यह पद्म मोहर प्रचलन का आरम्भ हुआ है।

(4) इस अंकित के द्वारा ज्ञात होता है कि महाराज गोविन्द माणिक्य के पहले त्रिपुरा राज्य में विदेशी (विलायती) नमक का व्यवहार नहीं होता था। महाराज गोविन्द माणिक्य ने ही इसका प्रर्वतन किया था। इसके पहले कैसे लवण का व्यवहार होता था। इस बारे में आगे चलकर मध्यमणि में आलोचना की जायेगी।

इस नमक क्रय के बारे में विवरण राजा बाबू के घर प्राप्त राजमाला में निम्नलिखित मत लिखा गया है :–

''धनबंत एक साधु देशेते आसिलो। दुई सहस्त्र मण लवण नौकाते आनिलो।।

चल–14

पूर्बाबधि मेहेरकुल झिल स्थान छिलो।
गोमतीर दुई कुले आइल बान्धिलो।।
से अबधि मेहेरकुल आबाद होइलो।
अद्याबधि तान कीर्ति लोकेते रोहिलो।।
रसांगेते हिरांगुरी बादसा दियाछिलो।
से आंगुरी महाराजा विक्रय कोरिलो।।(1)
गोमती नदीर कूले मजिद स्थापिया।
सुजा बादशार नामे मजिद कोरिया।।
सुजा नामे एक गंज राजाए बोइसाइलो।
सुजागंज बोलि नाम ताहार राखिलो।।
गोविन्द माणिक्य राजार बयस निर्णय।
एकचल्लीस बत्सर काले राजा होय।।
बृद्धता होइया राजा होइलो कफातुर।
उनाशी बयसे राजा गेलो स्वर्गपुर।।

त्रिपदी छन्द

एक कम चल्लिसेर, गोविन्द जे माणिक्येर
राजनीति राज धर्म मते।(2)
काल बस होइया राजा, त्यागिया पृथ्वी प्रजा
स्वर्ग गेलो राम नाम लोइया।
कान्दे रानी गुणवती, त्रिपुराते जार ख्याति
आर कान्दे राम–दुर्गा ठाकुर।

पूर्वावधि मेहेरकुल था झीलमय।
बाँधा गोमती के दो किनारे, करके निश्चय।।
तब से मेहेरकुल हो गया आबाद।
अद्यावधि उनकी कीर्ति है लोक संवाद।।
हिरांगुरी दिया था बादशाह ने रसांग में।
उस आंगुरी को महाराजा ने किया विक्रय।।(1)
गोमती नदी तीर किया मस्जिद निर्माण।
सुजा बादशाह के नाम कर दिया अर्पण।।
सुजा नाम एक गंज, राजा ने बैठाया।
सुजागंज नाम उसका नृपति ने किया।।
गोविन्द माणिक्य राजा की उम्र निर्णय।
इकतालीस साल में हुए राजा उदय।।
वृद्ध हुए राजा हुए कफातुर।
उनासी वर्ष में राजा गये स्वर्गपुर।।

त्रिपदी छन्द

उनचालीस, गोविन्द माणिक्य का
राजनीति राजधर्म मानकर।(2)
कालवश होकर राजा, त्यागा पृथ्वी प्रजा
स्वर्ग गये राम नाम लेकर।
रोयें रानी गुणवती, त्रिपुरा में जिसकी ख्याति
और रोये राम–दुर्गा ठाकुर

....

राजार साक्षाते साधु पत्र पठाइलो।
उपयुक्त चर पाठाइलो तार काछे।
आनिछि राजार देशे हस्तीर कारण।
साधुर एमत कथा राजाय सुनिया।
उदयपुर बसती आछिलो जतो जन।
आर सब देशे यतो प्रजागण छिलो।
आमार वंशेते होय राजा जतो जन।
पत्र शुनि महाराज सन्तोष होइलो।।
लबणेर किरूप मूल्य कहो सविशेषे।।
लवण आनिछि आमि दुई सहस्र मन।।
साधुरे दिलेक हस्ती लबण राखिया।।
जन संख्या क्रमे दिलो सबारे लबण।।
जार सेई अभिप्राय विबर्तिया दिलो।।
ना कोरिबा अनिष्टता स्मरिया लबण।।

अर्थात – एक धनी साधु इस देश में आये। वह दो हजार मन नमक नाव में लादकर लाया था। राजा के यहाँ साधु ने एक पत्र के जरिये बताया कि वह एक हाथी लेने आया है और बदले में दो हजार मन नमक लाया है। राजा ने नमक रखकर उसे एक हाथी दे दिया। उदयपुर में जितने लोग थे, जनसंख्या के हिसाब से सबके भीतर नमक बाँट दिया। दूसरे राज्यों के प्रजाओं में अपना अभिप्राय व्यक्त किया और कहा हमारे देश में जितने राजा होगें, किसी का अनिष्ट न करना कम से कम इस नमक का स्मरण करके

(1) अंगुठी को अपने व्यवहार में न लाकर जिन्होंने प्रदान किया था उसी की स्मृति रक्षार्थ में प्रदान न करना ही महाराजा ने उचित समझा था। परिस्थितियों को देखकर ऐसा ही लगता है।

(2) यह समय निर्धारण प्रमादपूर्ण है। मध्यमणि में इस विषय पर आलोचना होगी।

चल–15

मरे राजा कान्दे प्रजा नृप शून्य होइया भूजा
आर राजा मने अभिलाष।
रामदेव युवराज, श्राद्ध कोरे बहु साज
गोविन्द माणिक्य देव सुते।
नानादेश निबासी, विप्रगण श्राद्धे आसि
दान लोये गोविन्देर प्रीते।
जगन्नाथ ठाकुर अति पुण्यबान होय।
तिषिनाते दीघि दिल(1) पुण्येर संचय।।
धनसम्पद लोकेर किछु नहे थाके।
कीर्ति सजीब होये देखे सर्बलोके।।
रामगंगामाणिक्य राजा जिज्ञासा कथन।
जयदेव उजीर कहे बंश बिबरण।।
गोविन्द छत्र माणिक्य ए दुई राजन।
ताहान कीर्ति पदबद्ध होइलो समापन।।

इति राजखण्ड तत्वे
गोविन्दमाणिक्य और क्षत्रमाणिक्य प्रसंग
समाप्त।
———

मेरे राजा रोये प्रजा   नृप शून्य होकर भुजा
और राजा के मन अभिलाष पर।
रामदेव युवराज, करे श्राद्ध कर बहु साज
गोविन्द माणिक्य देव सुत।
नाना देश निवासी, विप्र आये अप्रत्यासी
दान ग्रहण किया गोविन्द हित।
जगन्नाथ ठाकुर थे अति पुण्यमय।
तिष्णा में सागर(1) दिया, किया पुण्य संचय।।
कभी न देती साथ किसी की धन सम्पदा।
कीर्ति ही सजीव देखें सभी सदा सर्वदा।।
रामगंगामाणिक्य राजा ने किया जिज्ञासा कथन।
जयदेव वजीर कहे वंश विवरण।।
गोविन्द छत्र माणिक्य ये दो राजन।
पद्य बद्ध कीर्ति का हुआ समापन।।

इति राजखण्ड तत्वे
गोविन्दमाणिक्य और क्षत्रमाणिक्य प्रसंग
समाप्त।
———

....

(1) इस सरोवर का नाम जगन्नाथ दिधि है। दिधि किसी बडे तालाब या सरोवर को कहते हैं। कुमिल्ला से चट्ट गाँव की ओर जो सुदीर्घ राज पथ है, यह सरोवर उसके पूर्व के किनारे पर है। सरोवर के पश्चिम किनारे से होकर यह सड़क चली गई है। सरोवर प्रायः एक मील लम्बा है और चौड़ाई कुछ कम ही दिखाई देती है। यह सरोवर तिष्णा परगना के अन्तर्गत केचकिमुडा मौजा में स्थित है।

चल–16

राम माणिक्य खण्ड	राम माणिक्य खण्ड
गोविद माणिक्य राजा स्वर्गेते गमन।	गोविन्द माणिक्य राजा गये स्वर्ग धाम।
रामदेव युवराज बोईसे सिंहासन।।	रामदेव युवराज बैठे सिंहासन।।
उदयपुर राजधानी अति मनोहर।	राजधानी उदयपुर अति मनोहर।
राममाणिक्य नाम ताथे शशधर।।	राम माणिक्य का नाम वहाँ था शशधर।।
राजनीति क्रमे राजा कोरिलो विधान।	राजनीति क्रम से राजा ने किया विधान।
पात्र मित्र मंत्रीवर्ग विख्यात संधान।।	पात्र मित्र और साथ लेकर मंत्रीगण।।
पालिलेक प्रजा लोक निज बाहुबले।	किया प्रजा पालन, अपने बाहु बल से।
धर्मरूप महाराजा जन्मिलो भूतले।।	धर्मरूप महाराजा, जन्में भूतल।।
राजा नामेते मोहर कोरिलो आख्यान।	राजाज्ञा मुहर बना राजा के नाम।
गज सिक्का मारियाछे ब्राह्मणे प्रदान।।(1)	गज सिक्का(1) किया ब्राह्मणों को दान।।
बहुजन छिलो रानी परम सुन्दरी।	रानिया अनेक थी परमा सुन्दरी।
अष्टादश राजसुत राज्य अधिकारी।।	अष्टादश राजपुत्र हुए सिंहासन अधिकारी।।
प्रधानादि रानी गर्भे जनमिया छिलो।	प्रधान रानी के गर्भ से जो जन्मा था।
रत्नठाकुर नाम ताहान राखिलो।।	रत्नठाकुर नाम जिसका, नृपति ने रखा था।।
रत्न माणिक्य राजा होइलो सेई जन।	वही रत्न माणिक्य राजा हुए एक दिन।
तार पोरे घनश्याम ठाकुर आर जन।।	उसके बाद घनश्याम ठाकुर बैठे सिंहासन।।
महेन्द्र माणिक्य नाम होइलो ताहार।	महेन्द्र माणिक्य नाम हुआ उनका।
दुर्योधन नाम छिलो धर्म माणिक्येर।।	दुर्योधन नाम था धर्म माणिक्य का।।
मुकुन्द देव मुकुन्द माणिक्य विख्यात।	मुकुन्द देव, मुकुन्द माणिक्य थे बडे विख्यात।
नानाविध दान कोइलो देबेर साक्षात।।	नानाविध दान किया देवता समक्ष।।
सराइल जमीदार नाछिर आली छिलो।	नासिर अली थे सराइल जमींदार।
राजपुत्र चन्द्रसिंहके शिकारे बधिलो।।	राजपुत्र चन्द्रसिंह का बध भूलवश, करते शिकार।।
तार पिता नूर माहामूद ए सब शुनिया।	उसके पिता नूर मुहम्मद, यह सब सुना।
राजार निकटे पुत्र दिलो पाठाइया।।	नृप समक्ष पुत्र भेजा।।

---

(1) राजा की प्रचारित मुद्रा "गज सिक्का" नाम से परिचित थी। राजा के अभिषेक में स्वयं प्रचारित मुद्रा, ब्राह्मणों को दक्षिणा स्वरूप देने का नियम था।

चल–17
राम माणिक्य राजा पुण्येर भाजन।
पुत्र बधि नाछिरके ना मारे राजन।।
राजा बोले ताके बधि किबा फल होबे।
तार फल परलोके सेई जे पाइबे।।(1)
आर एक प्रसंग जे होइलो स्मरण।
राम माणिक्य द्वारिकार ये मत कारण।।
दुर्गा ठाकुरेर पुत्र द्वारिका नाम धरे।
मुर्शुदाबाद तुले राखिलो ताहारे।।
एक दिन नबाबेत कोरिलो बिदित।
अमार जेष्ठता राजा होइयाछे पीडित।।
बृद्ध काल होइछे राजा चक्षे नाहि देखे।
कर्णे नाहि शुने कथा बाणी नाहि मुखे।।
एई मतो दुष्ट वाक्य नबाबेते बोले।
राजा होईबार सेई चेष्टित होइले।।
एई बार्ता उदयपुरे शुने नृप नाथ।
मिथ्या बोलि पत्र लिखे नबाब साक्षात।।
द्वारिका ठाकुर आमा यतो मन्द कोये।
मिथ्या सब बोलियाछे जानिबे निश्चये।।
नृपतिर एई पत्र शुनिया नबाब।
शोयार के पठाइलो देखिते स्वभाब।।
शोयार आसिया देखे राजा भालो आछे।
द्वारिकाये जतो बाक्य प्रलाप बोलिछे।।
नबाबेते जनाइलो ए सब वृत्तांत।
प्रत्यय होइलो तोबे शून्या मतिमंत।।
एई मतो कोतो होइछे वंशेते तोमार।
कथा श्रेणी मतो सब होइबो प्रचार।।
राम माणिक्य राजा स्वभाव छिलो आर्य।
प्रजार पालन कोरे थाकिया गांभीर्य।।

राम माणिक्य राजा पुण्य भाजन।
पुत्र हंता नासिर को, नहीं मारे राजन।।
राजा ने कहा उसके बध का होगा क्या फल।
अपना फल उसे परलोक में जायेगा मिल।।(1)
और एक प्रसंग जो हुआ है स्मरण।
राम माणिक्य द्वारिका के मत के कारण।।
दुर्गा ठाकुर का पुत्र, द्वारिका जिसका नाम।
मुर्शिदाबाद 'तुल' बनाकर रखा ससन्मान।।
एक दिन नवाब से किया निवेदन।
मेरे ज्येष्ठ हुए राजा, पीडित दिनो दिन।।
वृद्ध काल में आँखों से नही़ सकते देख।
श्रवण क्षीण, वाणी भी होती नहीं स्पष्ट।।
कहा नवाब से इस तरह के दुष्ट बचन उसने।
राजा होने की तीव्र लालसा, उसके मन में।।
यह वार्ता उदयपुर में सुने जब नृप नाथ।
मिथ्या कहा आपसे, नृप ने लिखा तुरंत।।
द्वारिका ठाकुर, हमें गलत बात बोले।
मिथ्या सब बोला ये जानिये निश्चय।।
नृपति का यह पत्र पाकर नबाब।
भेजा एक सवार देखने हालात।।
आकर देखा सवार ने नृपति को स्वस्थ।
द्वारिका की सारी बातें ही हैं असत्य।।
कहा नवाब से उसने यह सारा वृत्तांत।
प्रत्यय हुआ उन्हे न हुए वे विभ्रांत।।
ऐसे हुए हैं कितने वंश में तुम्हारे।
श्रेणी अनुसार होगी ये बातें प्रचार।।
राम माणिक्य राजा का स्वभाव था आर्य।
प्रजा पालन के साथ साथ था उनमें गांभीर्य।।

---

(1) नूर मुहम्मद के पुत्र का विवरण मध्य मणि में राम माणिक्य प्रसंग में वर्णन किया जायेगा।

चल–18

उदयपुर तिषिनाते सागर खनन।	उदयपुर तिष्णा में किया सागर खनन।
राम सागर नाम कोरिलो स्थापन।।	राम सागर नाम, इसका किया स्थापन।।
ताम्र पत्रे लिखि सनद कोरिया यतन।	ताम्र पत्र सनद करके लिखा यतन।
राम सत्य(1) नामे भूमि द्विजेते अर्पण।।	'राम सत्य'(1) नाम से भूमि किया द्विजार्पण।।
नित्य नौमित्तिक वार्षिक नाना मनोरम।	नित्य नौमित्तिक और वार्षिक नाना मनोरम।
चौदद्देव खार्ची(2) गंगा पूजा निरूपन।।	चौदहदेव खार्ची(2) गंगा पूजन निरूपण।।
एईमते वारो वत्सर राजत्व कोरिया(3)।	इस तरह बारह साल किया राजत्व।(3)
नाना सुख भोग कोरे पुत्र गण लोइया।।	नाना सुख भोगा पुत्रो के साथ नित्य।।
त्रिपदी छन्द	त्रिपदी छन्द
राममाणिक्य राजन, बृद्ध होइलो यौबन,	राममाणिक्य राजन, वृद्ध हुआ यौवन,
दिबानिशि भाबे नारायण।	दिवानिशि ध्यान करें नारायण।
कोन दिन यमालये, भाबे दरशन होये,	किस दिन यमालय, कौन जाने कब जाना हो,
कि मत जे धर्मेर विचार।	पता नहीं कैसा होगा धर्म विचार।।
धर्म शास्त्र जेई रूपे, ताहा शुनि प्राण काँपे,	धर्म शास्त्र जिस कदर, काँपता प्राण सुनकर,
धर्मेर जे अति सूक्ष्म गति।	धर्म की है अति सूक्ष्म गति।
एई मत भावि मने, रोग बारे दिने दिने,	इस तरह की सोचने में, रोग बढ़ता है बदन में,
स्वर्गे गेलो इष्टनाम लोइया।	इष्ट नाम ले उनकी हुई उर्द्ध गति।
राम राजा मृत्यु होइलो, रानी सब व्यस्त होइलो,	राम राजा की मृत्यु हुई, रानियाँ सब व्यस्त हुई,
दिबानिशि क्रन्दनेर रोल।	दिन रात थी करती क्रन्दन।
राजपुत्र सब जन, कोरिछिलो क्रन्दन,	राजपुत्र सभी जन, क्रन्दन रत दिन रात,
आर कोतो मंत्रीर समाज।	और थे सभी मंत्री समाज।
श्राद्ध आयोजन कोरि, रत्न ठाकुर अधिकारी,	श्राद्ध आयोजन करें, अधिकारी रत्नठाकुर बनें,
आर पुत्र नाना दान कोरे।।	और पुत्र विविध दान करें आज।।

---

(1) महाराज राम माणिक्य सील मोहर का नाम 'राम सत्य' नाम अंकित था।

(2) चतुर्दश देवता स्थापन की तिथि के दिन (आषाढ महीने की शुक्ला अष्टमी की तिथि) महा समारोह के साथ उस देवालय का वार्षिक उत्सव होता है और अर्चना की जाती है। इस पूजा को खार्ची पूजा कहते हैं। राजमाला के प्रथम लहर 143 पृष्ठ में इस पूजा का उल्लेख है।

(3) यह समय निर्धारण विशुद्ध नहीं है। आगे मध्यमणि में इस विषय पर आलोचना की जायेगी।

चल–19

बृषोत्सर्ग तिल दान, यथाविधि अनुष्ठान,	वृषोत्सर्ग तिल दान, यथाविधि अनुष्ठान,
स्वर्ग पथ कोरिलो सोपान।	किया स्वर्ग पथ सोपान।
विप्रगण बहुजन, श्राद्धे आइसे सेई क्षण,	आये अनेक विप्रगण, आये श्राद्ध में उसी क्षण,
दान दिलो यथायोग्य मते।।	यथायोग्य दिया सबको दान।।
पदबन्द	पदबन्ध
एई मते राजा राम माणिक्य प्रसंग।	इस तरह राजा राम माणिक्य प्रसंग।
कोहिलो वृत्तांत सब होइलो जे सांग।।	कहा अब हुआ वृतांत अंत।।
महाराजा रामगंगा माणिक्य नृप स्थाने।	महाराजा रामगंगा माणिक्य नृप स्थान।
जयदेव उजीर कहे राजा विद्यमाने।।	जयदेव वजीर कहे जहाँ राजा विद्यमान।।
इति राजखण्ड तत्वे	इति राजखण्ड तत्वे
राजा राम माणिक्य प्रसंग	राजा राम माणिक्य प्रसंग
समाप्त।	समाप्त।
———	———
रत्न और महेन्द्र माणिक्य खण्ड।	रत्न और महेन्द्र माणिक्य खण्ड।
राम माणिक्येर कथा होइलो समापन।	राम माणिक्य की कथा हुई समापन।
तान पुत्र रत्नमाणिक्य कोहिबो कथन।।	उनके पुत्र रत्नमाणिक्य का करूँगा कथन।।
शुन देव महाराज अद्‌भुत काहिनी।	सुनो देव महाराज अद्‌भुत कहानी।
राज्य लोभे भ्रातृ बध कोरिलो आपनि।।	राज्य लोभ में भ्रातृ वध की कहानी।।
राम माणिक्य राजार जबे स्वर्ग होइलो।	स्वर्गवास हुआ जब राम माणिक्य का।
पंच वत्सर शिशुकाल रत्न देव छिलो।।	पाँच वर्ष का शिशु काल रत्न देव का।।
बलि भीम नारायण बैसाये सिंहासने।	बलि भीम नारायण, उसे बैठाये सिंहासन।
रत्नमाणिक्य आख्यान करिलो तखने।।	किया आख्यान रत्नमाणिक्य का।।
बलि भीम युवराज होइलो आपनि(1)।	बलि भीम युवराज हुए स्वयं(1)।
शिशु राजा नाम कोरि राज्येर शासनि।।	शासन करता शिशु राजा के नाम।।
राम माणिक्य महाराजा अति पुण्यबान।	राम माणिक्य महाराजा अति पुण्यवान।
तान पुत्र अष्टादश छिलो योग्यमान।।	उसके अठारह पुत्र थे योग्यमान।।
प्रधानस्त राजपुत्र छिलो कोतोजन।	प्रधान राजपुत्र थे, कितने ही जन ।
बलि भीम युवराजे कोरे संहारण।।	बलि भीम ने ही किया उनका संहारण।।

---

(1) बलि भीम महाराज राम माणिक्य के श्यालक (साला) थे और रत्नमाणिक्य के मामा थे। राम माणिक्य ने इन्हें युवराज की उपाधि प्रदान की थी। रत्नमाणिक्य के शासनकाल में भी यह उपाधि बरकरार थी।

चल–20

चारि पुत्र राजा होइलो पुण्येर भाजन।
धर्म बले बाँचि छिलो बंशेर कारण।।
रत्नमाणिक्य राजा युवक होइलो।
छय कुडि जन कन्या बिबाह कोरिलो।।
मुख्य रानी रत्नाबती बोसिलो विदित।
आर रानी चतुर्भिते होइयाछे शोभित।।
शुभ क्षणे महाराजा बिबाह कोरिलो।
एमति कन्यार शोभा केह ना शुनिलो।।
सूर्य प्रताप नारायण जगन्नाथ सुत।
उजीर कोरिलो ताके बुझिया बिहित।।
समर प्रताप नारायण नेबउजीर(1) छिलो।
जयमर्दन सुबाके प्राणेते बधिलो।।
राजा शिशुकाल छिलो मंत्रीर समाज।
आत्म वर्ग बध कोरि कोरे राज काज।।
  एक विप्र वैद्यनाथे स्वप्न देखाये।
राजा पादोदक लोइले रोगशान्ति पात्र।।
सेई द्विज नृप स्थाने चाये पादोदक।
ब्राह्मण कातर देखि दिलो बस्त्रोदक(2)।।
जल खाई ब्राह्मणेर रोगशान्ति होइलो।
धन दिया द्विजबर बिदाय कोरिलो।।
  बलि भीम युवराज पुण्य आचरण।
मेहारकुल दुर्गापुरे दीधि कोरिलो खनन।।
कस्बाते काली मूर्ति कोरिलो स्थापन।
दश भुजा भगबती पतित तारण।।(3)
  ढाकाते शास्ता खाँ नाम नबाब जखन।
बलि भीम युबराजेर दुष्टता श्रबण।।

चार पुत्र राजा हुए पुण्य के भाजन।
धर्म बल से थे जीवित वंश के कारण।।
रत्नमाणिक्य राजा हो गया जवान।
एक सौ बीस कन्याओं का किया पाणिग्रहण।।
मुख्य रानी रत्नावती हुई जगत विदित।
और रानियाँ चारों ओर हुई सुशोभित।।
शुभ क्षण में महाराजा ने कर लिया विवाह।
न सुना किसी ने ऐसी कन्याओं की शोभा बेपनाह।।
सूर्य प्रताप नारायण जगन्नाथ सुत।
वजीर किया उसे सोचकर विहित।।
थे सहकारी वजीर समर प्रताप नारायण।(1)
जय मर्दन सुबा का प्राणों से किया निधन।।
राजा के शिशु काल में था मंत्री का समाज।
आत्म जनों की हत्या कर, करें राज काज।।
  एक विप्र को वैद्यनाथ ने देखा था स्वप्न।
राजा पादोदक से हो रोग का शमन।।
वह विप्र राजा से माँगे पादोदक।
देख कातर ब्राह्मण को, दिया वस्त्रोदक(2)।।
ब्राह्मण का रोग शमन हुआ पानी पीकर।
धन देकर विदा किया द्विजेश्वर।।
  बलि भीम युवराज पुण्य आचरण।
मेहेरकुल दुर्गापुर में किया तालाब खनन।।
कस्बा में काली मूर्ति किया स्थापन।
दस भुजा भगवती पतित तारण।।(3)
  ढाका में शायेस्ता थे, नवाब उस समय।
सुना बलि भीम की दुष्टता उसने उस समय।

---

(1) नेब उजीर – प्राचीन बंगला में नेब उजीर का अर्थ है –नायब वजीर, वजीर के सहकारी।

(2) रोगग्रस्त एक ब्राह्मण वैद्यनाथ को स्वप्न हुआ कि अगर महाराज रत्नमाणिक्य का पादोदक ग्रहण करें तो वे रोग मुक्त हो जायेगें। ब्राह्मण को पादोदक प्रदान करना गर्हित कार्य होगा, सोचकर उन्हें वस्त्र धौत जल प्रदान किया गया था।

(3) यह कालिका मूर्ति बलि भीम नारायण के तत्वाधान महाराज रत्नमाणिक्य के शासनकाल में प्रतिष्ठित हुई थी। मध्यमणि में इस विग्रह विवरण मिलेगा।

चल–21

केशरिदास नामे एक सरदार छिलो।	केशरीदास नाम का एक सरदार।
बहु सैन्य तार संगे कुमिल्ला आसिलो।।	बहु सेनाउसके संग, आई कुमिल्ला चलकर।।
बलि भीम युबराज संगराइस ग्रामे।	बलि भीम युवराज थे संगराइस ग्राम।
तथा होइते केशरिदास धरिलेक श्रमे।।	पकड़ा केशरीदास, करके कठिन श्रम।।
ढाका निया मुर्शुदाबादे कोरिलो चालान।	ढाका से मुर्शिदाबाद कर दिया चालान।
तथा होइते दिल्ली सहरे कोराये पयान(1)।।	वहाँ से दिल्ली शहर करा दिया प्रस्थान(1)।।
राज जामाता जयदेब तुले छिलो यबे।	राज जामाता जयदेब जब थे, वहाँ तुल।
ताहाके युबराजि दिलेक नबाबे।।	नवाब ने उन्हें युवराज दिया, बहुत सोचकर।।
जयदेब युवराज ढाकाते आछिलो।	जयदेब युवराज थे, रहते ढाका में।
द्वारिकाके तुले दिया युबराज आसिलो।।	द्वारिका को 'तुल' बना, युवराज आये घर में।।
द्वारिकार कनिष्ठ भ्राता श्रीगौरीचरण।	द्वारिका के अनुज थे श्रीगौरीचरण।
ढाका जाइया नबाबेत कोरिलो मिलन।।	ढाका जाकर नवाब से किया मिलन।।
राज भ्रातृ बलि तार परिचय छिलो।	राजा के अनुज रूप में था उनका परिचय।
ऐई हेतू नबाब ताके युबराजि दिलो।।	इसलिए नवाब ने उन्हें किया युवराज निश्चय।।
ढाका होते युबराज उदयपुर आसिया।	ढाका से युवराज आये उदयपुर।
सूर्य प्रताप उजीरके प्राणेते बधिया।।	सूर्य प्रताप वजीर को वध किया आकर।।
द्वारिकाते पत्र लेखे भाई यदि होये।	द्वारिका को लिखा पत्र यदि हो भाई।
फौज लोइया आइसो तुमि जानिबा निश्चये।।	फौज लेकर तुम यहाँ आओगे निश्चय ही।।
एई पत्र पाइलेक द्वारिका दुरंत।	यह पत्र पाकर द्वाारिका ने तुरंत।
राजा दलसिंह स्थाने कोहिलो वृत्तांत।।	राजा दलसिंह को कहा सारा वृतांत।।
दुर्योधन ठाकुरके तुलेत राखिया।	दुर्योधन ठाकुर को वहां 'तुल' पर रखकर।
ढाका होते फौज लोइया द्वारिका आसिया।।	ढाका से आये द्वारिका बहुत बड़ी फौज लेकर।।
रत्नमाणिक्येर संगे युद्ध आरंभिलो।	रत्नमाणिक्य के साथ हुआ युद्ध आरंभ।
युद्ध भंग दिया राजा गोपने रहिलो।।	गोपन स्थान गये, करके रण में भंग।।
गोमती उजाने गेलो उदयपुर पूर्ब।	गोमती नदी के ऊपर गया उदयपुर से पूरब।
रानी संगे बहु सैन्य आर मंत्री सर्ब।।	रानी संग बहुत सेनायें और रहे मंत्री सब।।
मीरखंजन नामेते राजार श्वशुर।	मीरखंजन नाम से थे, वहाँ राजा के ससुर।
निर्भय नारायण छिलो रणे महाशूर।।	निर्भय नारायण थे, साथ रण में महाशूर।।

---

(1) इसके बाद बलि भीम नारायण की क्या हालत हूुई, इसका पता नहीं चलता। संभवतया राज्य में लौट आना उनके भाग्य में संभव नहीं हुआ।

चल–22

गजभीम नारायण मयुरध्वज नाम।
जयमर्दन सुबा हंसध्वज अनुपाम।।
राजार संगे एई सब आछे जे छापिया।
देवयान चम्पक राय गेलो पलाइया।।
तान संगे राज मातुल अनन्तराम नाम।
प्राण भये बन पथे गेलो चट्टग्राम।।
  द्वारिका नृपति होइलो नरेन्द्र माणिक्य।
राजाके आनिते चाहे कोहि मिष्ट वाक्य।।
दूत पाठाइया दिलो राजार निकट।
धर्माधर्म कोरि आने फलेते कपट।।
सेई धर्म जानि राजा उदयपुर आसिलो।
पात्र मित्र यतो राजार कएद कोरिलो।।
मंत्री वर्ग कोतोजन मारिया फेलिलो।
आर कोतो जन ताके कारागारे दिलो।।
  अनन्तराम चम्पकराय चट्टग्रामे छिलो।
नरेन्द्र माणिक्य राजा एई तत्व पाइलो।।
बाहादुर खाँ संगेत पाठाये दुई हाती।
चट्टग्राम सूबा संगे कोरिते पिरीति।।
चम्पकराय अनन्तराम ए कथा शुनिलो।
तथा होईते पोलाइया भुलुआ आसिलो।।
बाहादुर खाँ जमादार चट्टले ना पाय।
भुलुआते धोरिलो अनन्त चम्पकराय(1)।।
रत्नमाणिक्य उकील आमिर खाँ छिलो।
बुद्धिमंत सेई जन दुर्वृत्तता भालो।।
चम्पकरायेर बार्ता आमिर खाँ पाइया।
तुरू खाँ अनन्त चम्पक आनिलो काड़िया।।
तारा दुई जन त्वरा ढाकाते लोइया गेलो।
ढाका निया दुर्योधन निकटेते दिलो।।

गजभीम नारायण मथुर ध्वज नाम।
जयमर्दन राजा हंस ध्वज अनुपम।।
राजा के साथ थे, सभी रहते थे घेरकर।
दीवान चम्पक राय जा छिपे भागकर।।
उनके संग राज मातुल अनन्तराम नाम।
प्राण भय से, वन पथ गये चट्ट ग्राम।।
  द्वारिका नृपति हुए नरेन्द्र माणिक्य।
राजा वह लाना चाहे कहकर मीठी वाक्य।।
दूत भेज दिया राजा के यहाँ उसी क्षण।
धर्माधर्म करके लाये भीतर कपटी मन।।
वही धर्म सोचकर राजा आया उदयपुर।
पात्र मित्र जो थे राजा के, रखा कैदकर।।
मंत्रियों में कितनों को ही उसने दिया मार।
और कितनों को लेकर दिया कारागार।।
  अनन्त राम और चम्पकराय थे चट्टग्राम।
नरेन्द्र माणिक्य को मिला उनका नाम धाम।।
बहादुर खाँ के साथ उसने भेजा दो हाथी।
चट्टग्राम सूबा के साथ करने हेतु प्रीति।।
चम्पकराय अनन्तराम ने जब सुनी यह बात।
भागे शीघ्र वहाँ से, भुलुया आये रातों रात।।
चट्टल न पाया उन्हें बहादुर खाँ जमादार।
अनन्त चम्पकराय को भुलुया में पकड़ा जाकर।।(1)
रत्नमाणिक्य के थे आमीर खाँ वकील।
बुद्धिमंत के साथ थे दुष्टता में सुशील।।
चम्पकराय की वार्ता आमीर खाँ ने पाया।
तुरू खाँ, अनन्त चम्पक को छीन लाया।।
वे दोनों त्वरित ढाका गये लेकर।
दुर्योधन को सौंपा उन्हे ढाका ले जाकर।।

---

(1) नरेन्द्र माणिक्य के प्रेरित लोगों ने भुलुया में जाकर अनन्त और चम्पक राय को पकड़ा था।

चल–23

आमिर खाँ दुर्योधन आर चम्पक राय।	आमिर खाँ, दुर्योधन और चम्पक राय।
तीने मिलि यत्न रत्नमाणिक्य सहाय।।	तीनों मिलकर करे हुए रत्नमाणिक्य सहाय।।
नबाबेते कहे रत्नमाणिक्य पराभब।	नवाब से कहे रत्नमाणिक्य पराभव।
नरेन्द्र माणिक्य होइया कोरिलो लाघव।।	नरेन्द्र माणिक्य ने कर दिया मुक्त।।
क्रोध होइया नवाब सैन्य दिलो पाठाइया।	नवाब ने भेजा सेना क्रोध कर।
नरेन्द्र माणिक्य राजा आनिलो धरिया।।	नरेन्द्र माणिक्य लाये पकड़ कर।।
रत्नमाणिक्य पुन होइलो नरेश्वर।	रत्नमाणिक्य पुनः हुए नरेश्वर।
द्विजे भूमिदान राज्य शासन तत्पर।।	द्विजों को भूमिदान, रहे राज्य शासन तत्पर।।
चम्पकराय देवान छिलो होइलो युबराज।	चम्पकराय थे दीवान, हो गये युवराज।
तार भग्नी द्वितीया नाम कोरे पुण्य काज।।	उनकी भगिनी द्वितीया नाम, करती पुण्य काज।।
मेहारकुल उदयपुर दीर्घिका खनिलो।	मेहेरकुल उदयपुर में दिर्घिका खनाया।
दौल सेतु चण्डीमुड़ा चण्डिका स्थापिलो।।	दौल सेतु चण्डीमुड़ा में चण्डिका बैठाया।।
कोरिलो विविध दान मंगल कारण।	किया विविध दान मंगल कारण।
पुन शुनो महाराज निर्बन्ध कथन।।	पुनः सुनो महाराज निर्बन्ध का कथन।।
विश्वासेते अविश्वास दैबेर घटन।	विश्वास में अविश्वास है दैव घटन।
जेई मते होईलेक राजार मरण।।	जिस कारण राजा का हो गया मरण।।
राममाणिक्य पुत्र घनश्याम ठाकुर।	राममाणिक्य के पुत्र थे घनश्याम ठाकुर।
मुर्शुदाबाद तुले छिलो नबाब हुजूर।।	मुर्शिदाबाद में 'तुल' थे जहाँ नवाब हुजूर।।
राजा होईबार फौज लोईया आसिलो।	राजा बनने हेतु आया फौज लेकर।
रत्नमाणिक्य राजा एई तत्व पाइलो।।	रत्नमाणिक्य ने तुरंत पाई यह खबर।।
मंत्रीवर्ग कहिलेन युद्ध कोरिबार।	मंत्रियों ने परामर्श दिया युद्ध की तैयारी की।
संग्राम कोरिते मत नाहिक राजार।।	राजा की अनिच्छा थी संग्राम करने की।।
पुनःपुनः मंत्री कहे ना शुने राजन।	पुनः पुनः कहा मंत्रियों ने पर न सुने राजन।
विधिर निर्बन्ध कर्म ना जाये खण्डन।।	विधि का निर्बन्ध कर्म न होता है खण्डन।।
घनश्याम ठाकुर आइसे राजार जे पुरी।	घनश्याम ठाकुर आये राजपुरी।
सिंहासन होते नामाय राजहस्ते धरि।।	हाथ से पकड़ उसने सिंहासन से उतारी।।
तथाच ना जाने राजा मरिबो आपने।	तथापि न जाने राजा वे मरेंगे स्वयं।
रत्नमाणिक्य बन्दि कोरिलो तखने।।	रत्नमाणिक्य को उसने बन्दी किया तक्षण।।
राजा बोले भाई महेन्द्र क्षणेते आसिलो।	राजा ने कहा भाई महेन्द्र क्षण में आया।
महेन्द्र माणिक्य नाम राजाऐ राखिलो।।	महेन्द्र माणिक्य नाम राजा ने रख दिया।।

चल–24

राजकीर्ति नारायण खामार बाड़ीते।
रत्नमाणिक्य बन्दि राखिलो तथाते।।
गंगानारायणी धात्री कोहिलो अनेके।
रत्नमाणिक्य बधिबारे कहे दुष्ट लोके।।
एक देशे दुई राजा ना होये उचित।
एक बने दुई ब्याघ्र थाके कदाचित।।
एक स्त्रीते दुई स्वामी ना थाके कखन।
एक कोषे दुई खड्ग न होये पोषण।।
हेनो मते राजा स्थाने कुतर्क जन्माये।
भ्रातृ बध भय राजा ना चिंतिलो ताये।।
कोतो दिन पोरे नृपेर आदेश होइया।
दूते मारे रत्नमाणिक गलाते चापिया।।

त्रिपदी छन्द

राजार मरण देखि, जलपूर्ण होइलो आक्षि
आक्षेपये रानी रत्नावती।
कोन जन्में छिलो पाप, राज–रानीर एतो ताप
कोन विधि एमत कोरिलो।।
पति मुख दरशिया, शोकेते आकुल होइया
पुनःपुनः आक्षेप करये।
चिता स्थाने गिया रानी, प्रदक्षिण पुनिपुनि
राजपुरी दरशन कोरे।
यदि ऐबे धर्म थाके, स्वर्णद्वार देखे लोके
धर्माग्निये दाहन करये।
एई बाक्य बोलि रानी, स्वर्णद्वार देखे पुनि
सेई क्षणे अग्निये दहिलो।
अग्नि देखिया सती, चिता प्रवेश शीघ्रगति
राम नाम इष्टेते अर्पण।
राजा रानी स्वर्गे गेलो, रानीर सतीत्व रहिलो
सर्ब लोके धन्य धन्य कोरे।

राजकीर्तिनारायण खेत के घर में।
बन्दी रखा रत्नमाणिक्य को वही पर।।
गंगानारायणी धात्री ने समझाया बहुत।
दुष्टों ने कहा रत्नमाणिक्य का करने वध।।
एक देश में दो राजा का रहना नहीं उचित।
एक वन में दो ब्याघ्रों का रहना कदाचित।।
दो स्वामी एक स्त्री के कभी नहीं होते।
एक म्यान में दो खड़ग कभी नहीं रहते।।
इस तरह के कुतर्क करते राजा के यहाँ।
भ्रातृ वध का भय, राजा को हुआ कहाँ।।
कुछ दिनों के पश्चात् राजा के आदेश पर।
दूत ने मारा रत्नमाणिक को, गला घोंटकर।।

त्रिपदी छन्द

राजा का मरण देख, जलपूर्ण हुई आँख
रानी रत्नावती आक्षेप में उठी।
किस जन्म का था पाप, राजरानी का इतना ताप
इस तरह कर दिया है कौन विधि।।
पति मुख दर्शन, शोक में आकुल होकर
करती आक्षेप पुनः पुनः।
रानी गई चिता स्थान, पुनः पुनः कर प्रदक्षिण
राजपुरी करे दर्शन।
यदि अब धर्म रहे, स्वर्ण द्वार लोग देखते रहें
धर्माग्नि में करे दहन।
रानी यह वाक्य कहकर, देखा पुनः स्वर्णद्वार पर
अग्नि दहन किया उसी क्षण।
अग्नि देखकर सती, चिता प्रवेश शीघ्र गति
राम नाम किया ईष्ट में अर्पण।
राजा रानी स्वर्ग गये, रानी का सतीत्व रहे।
सभी लोग करे धन्य धन्य।

चल–25

महेन्द्रमाणिक्य नृपति, लोके कोहे पाप मति
राजा वंशे कलंक राखिलो।
पदबन्ध
रत्नमाणिक्य राजार बयस निरूपण।
पंच बत्सर बयस होइछे राजन।।
बत्रिस बत्सर राजा राजत्व कोरिछे।
छत्रिश बत्सर बयसे मृत्यु जे होइछे।।
रत्नमाणिक्य राजार स्वभाव सुस्थिर।
आत्म पर भेद राजार ना छिलो शरीर।।
महेन्द्र माणिक्य भ्रातृ बधे होइलो पूर्ण।
दिने दिने शुष्क तनु खाइते ना पारे अन्न।।
शयने स्वपने देखे यदि निद्रा होये।
गलाचापि धरे ताके प्राण काँपे भये।।
एई मते आढ़ाई बत्सर राजत्व शासिलो।
उदयपुरे महेन्द्रादि सागर(1) खनिलो।।
कालपूर्ण होइया राजा मृत्युपद पाइलो।
अल्प दिन भोगजन्ये अकीर्ति राखिलो।।
सत्संगे बहुरंगे थाकिबो राजन।
असत् पंथगामी होइले त्वरिते पतन।।
बृद्ध मुखे एई मत शुनिछि कथन।
से सब बृत्तान्त आमि कोहिलो राजन।।
रत्न महेन्द्रमाणिक्य ए दुई राजन।
उजीर कहे महाराजा होइलो समापन।।
इति राजखण्ड तत्वे
रत्न – महेन्द्रमाणिक्य
राज कथनं समाप्त।
————

महेन्द्र माणिक्य नृपति, लोग कहें पापमति।
राजा वंश में हो गया कलंक।
पदबन्ध
रत्नमाणिक्य राजा का वय निरूपण।
पाँच वर्ष उम्र में वे हुए राजन।।
बत्तीस बर्षों तक उन्होंने किया राजत्व।
छत्तीस वर्ष में उनकी हो गई मौत।।
रत्नमाणिक्य राजा का स्वभाव सुस्थिर।
आत्म पर भेद वाला न था राजा का शरीर।।
महेन्द्र माणिक्य का भ्रातृबध हुआ पूर्ण।
दिनों –दिन शुष्क शरीर न खा सके अन्न।।
शयन स्वप्न में देखते सदा नींद आने पर।
गला दबाए उनका, प्राण काँपे भय से।।
इस तरह ढाई साल उसने राजत्व किया।
उदयपुर में महेन्द्रादि(1) सागर खनाया।।
काल पूर्ण होकर राजा मृत्यु प्राप्त हुआ।
अल्प काल भोग कर, अकीर्ति अर्जन किया।।
सतसंग में बहुरंग में रहेगें राजन।
असत् पथगामी, होता त्वरित पतन।।
वृद्धों से सुना है मैनें इस तरह से कथन।
ये सभी वृतान्त मैनें कह दिया राजन।।
रत्न महेन्द्रमाणिक्य थे ये दो राजन।
वजीर कहे महाराजा यह हुआ समापन।।
इति राजखण्ड तत्वे
राजा रत्न महेन्द्रमाणिक्य
राज कथन समाप्त।
————

---

(1) उदयपुर खिलपाडा मौजा में महेन्द्र सागर है। इस जलाशय का परिसर 280गुणे 140 गज है। यह 1/10 गंडा (60 डेसिमल) भूमि पर खोदा गया है।

चल–26

धर्ममाणिक्य खण्ड

राजा बोले धर्ममाणिक्य राजा छिलो।
चम्पकराय युवराज राजा ना होइलो।।
उजीर बोले महाराजा बोलि बिबरण।
महेन्द्र माणिक्य राजार होइलो मरण।।
सेई क्षणे दुर्योधन बोइसे सिंहासन।
चम्पकराय युवराज छिलो अन्य जन।।
शक्तिमंत्र उपासना छिलो महाराज।
शक्तिरूपे मुक्तिदाता सुता गिरिराज।।
धर्मेते पालिलो क्षिति कोरि राजनीति।
नाना सुखे राजराज्ये प्रजार बसति।।
धर्ममाणिक्य महाराजा धर्मशीला रानी।
एईमत गज सिक्का होये राजधानी।।
ज्येष्ठ पुत्र नाम छिलो ठाकुर गंगाधर।
ताहान कनिष्ठ होये ठाकुर गदाधर।।
युबराज कोरिलेन भ्राता चन्द्रमणि।
पुत्र युबराज नहे भेद होइबो जानि।।
अनंतराम उजीर ज्ञानेत विहित।
रणभीमनारायण रणे साबहित।।
परगणे खण्डल नाम डिमातलि ग्राम।
मत्त एक हस्ती बान्धे कोरिया विश्राम।।
राजमंगल हस्ती नाम राखिलो राजन।
एईमत गज लोके ना देखे कखन।।
राजमंगल हस्ती बाँधे त्रिपुर सेनापति।
सेई हेतू नाम होइलो गजभीम ख्याति।।
उदयपुर पूर्वदिके हिरापुर स्थान।
सेई बने जगतबेड़(1) कोरिलो राजन।।

धर्ममाणिक्य खण्ड

नृप ने कहा धर्ममाणिक्य राजा हुए।
चम्पकराय युवराज राजा न हो पाये।।
कहा वजीर ने महाराजा कहता हूँ मैं विवरण।
महेन्द्र माणिक्य राजा का हो गया मरण।।
इसी क्षण दुर्योधन बैठे सिंहासन।
चम्पक राय युवराज, थे अन्य जन।।
शक्तिमंत्र के उपासक थे महाराज।
शक्तिरूपा मुक्ति दातृ दुहिता गिरिराज।।
धर्म से पाला क्षिति, करके राजनिति।
नाना सुख से प्रजा की थी अच्छी स्थिति।।
धर्ममाणिक्य महाराजा और धर्मशीला रानी।
इसी तरह गज सिक्का बनता था राजधानी।।
ज्येष्ठ पुत्र नाम था ठाकुर गंगाधर।
उनका कनिष्ठ ठाकुर गदाधर।।
युवराज हुए भाई चन्द्रमणि।
युवराज पुत्र, नही भेद न हो कहीं।।
अनंतराम वजीर थे परम ज्ञानी।
रण भीम नारायण थे महारणी।।
खण्डल परगणा का नाम डिमातलि ग्राम।
मत्त एक हस्ती बान्धा, किया विश्राम।।
राजमंगल हस्ती का नाम रखा राजन।
इस तरह का गज न देखा किसी कोई।।
राजमंगल हस्ती बाँधा त्रिपुर सेनापति।
इसलिए तो गजभीम की ख्याति।।
उदयपुर के पूर्व दिशा में हीरापुर स्थान।
उस वन में जगतबेड़(1) किया राजन।।

---

(1) पशु आदि शिकार के निमित पाट(पटुया) की बनी रस्सी के सुदृढ़ जाल से विशाल वन भूमि को चारों ओर से घेर लिया जाता था इसे ही जगतबेड़ कहा जाता था।

चल–27

सैन्य समे नाजिर राजकीर्ति नारायण।	सेना सम नाजिर राजकीर्ति नारायण।
तीन मासे सेई बेड कोरे समापन।।	तीन माह में घेरा का कर दिया समापन।।
धर्ममाणिक्य छिलो क्रोधेते प्रचण्ड।	धर्ममाणिक्य थे क्रोध में प्रचण्ड।
अल्प अपराधे प्रजार कोरे महद्दण्ड।।	अल्प अपराध पर प्रजा को दें महा दण्ड।।
कर दित हस्ती खेदा कोरिया उत्पन्न।	कर देने हित हस्ती खेदा करके उत्पन्न।
बत्सरेते हस्ती कर नियम तिप्पान्न।।	साल में 53 हस्ती कर, नियम था तीक्ष्ण।।
उदयपुरे मघ प्रजा बहु सैन्य छिलो।	उदयपुर में मघ प्रजा की थी बहु सेनायें।
सेई गर्बे नृपतिके भय ना कोरिलो।।	इसी गर्ववश नृप को भय नहीं किया किसी ने।।
ताहार चरित्र राजा दूत मुखे शुने।	उनका चरित्र सुना राजा, दूत मुख।
किमते निग्रह करा चिंतिलेक मने।।	कैसे निग्रह किया जाये सोचा मन में।।
एक दिन मघ सब निमंत्रण कोरि।	एक दिन किया निमंत्रण सभी मघों को।
खावाइलो नाना मत नृपतिर पुरी।।	खिलाया नाना भोजन राजप्रासाद में।।
मद्य मांस खाइया मघे विह्वल होइलो।	मद्य मांस खाकर मघ हुए बड़े विह्वल।
सेई क्षणे दारीश्वरे कपाट मारिलो।।	उसी क्षण द्वारीश्वर ने बन्द किया महल।।
नृपतिर आज्ञा पाइया द्वारी कोतोजन।	नृपति के आज्ञा से द्वारियों ने मिलकर।
खड्गाघाते कोरे मघेर मस्तक छेदन।।	खड्गाघात से काट लिया मघों का सिर।।
हेनो मते बहु सैन्य प्राणे हत होइलो।	इस तरह सेना हुई बहुत हत।
प्राचीर लंघिया आर जतो पलाइलो।।	प्राचीर लाँघ भाग गई सेनायें बहुत।।
तदवधि मघ प्रजा निग्रह होइलो।	उस समय मघ सेना से तब हुआ निग्रह।
राजार अनिष्ट हेतू मनेते चितिंलो।।	राजा के अनिष्ट हेतु वे सोचते निरन्तर।।
सदरेर हस्ती बाकी होइलो जखन।	देना था अभी बाकी सदर हस्ती कर।
मुर्शुदाबाद राज उकील छिलो एक जन।।	मुर्शिदाबाद में राज वकील रहते थे वहीं पर।।
पुनःपुनः पत्र लिखे हस्ती पाठाइते।	पुनः लिखा राजा को हस्ती भेजने यहाँ।
राजकर महाराजा पाठाइते त्वरिते।।	राजकर देने में न करें देर वहाँ।।
एई सब पत्र नाहि शुनये राजन।	इन पत्रों पर कभी ध्यान नहीं देते राजन।
छत्र माणिक्य परपौत्र(1) छिलो एकजन।।	छत्र माणिक्य का प्रपौत्र था एक जन।।
जगत राम नाम छिलो गुणे मतिमान।	जगत राम था नाम गुण में मतिमान।
ढाकाते बसति तार ज्ञातिर संतान।।	ढाका में निवास था ज्ञाति संतान।।

(1) परपौत्र – प्रपौत्र

चल–28

जातीय त्रिपुर लोक नाहि समागम।	वहाँ नहीं त्रिपुर जातीय समागम।
त्रिपुर नृपति होइते कोरे नानाश्रम।।	त्रिपुर नृपति बनने को करते नानाश्रम।।
बहु दिनाबधि सेई कोरिछे यतन।	बहुत दिनों से वह करता है जतन।
कोनोरूपे त्रिपुरार होइते राजन।।	किसी तरह त्रिपुरा का हो सके राजन।।
धर्ममाणिक्येर हस्ती कर बाकी होइलो।	धर्ममाणिक्य का था बाकी देना हस्ती–कर।
जगत राम सेई काले दरकास्त दिलो।।	जगत राम ने तक्षण दिया दरखास्त कर।।
नबाबेते जानाये जे जगत राम ठाकुर।	नवाब को बताया जगत राम ठाकुर।
बाकी हस्ती दिबो राज्य पाइले त्रिपुर।।	बाकी हस्ती दूँगा यदि मिले राज्य त्रिपुर।।
नबाबे हुक्म दिलो सैन्य समभ्यार।	नवाब ने हुक्म दिया जाने सेनाओं के साथ।
बहु सैन्य लोइया आइसे राजा होइबार।।	बहु सेना लेकर आया, नृप होने की साध।।
स्वर्णद्वार आछे(1) शुनि त्रिपुर राजार।	सुना है त्रिपुर राजा का है स्वर्ण द्वार।(1)
कांगाली दु:खित मघ सैन्य समभ्यार।।	कांगाली दुखी मघ सेना चलना है लेकर।।
मातृ बोले शुनो पुत्र आमार बचन।	कहा माता ने, सुनो पुत्र मेरा वचन।
युद्ध जय होइले तुमि पाइबा बहु धन।।	युद्ध विजय होने पर मिलेगा बहु धन।।
सैन्य सभे उदयपुरे युद्ध आरंभिलो।	सेनाओं ने किया उदयपुर में युद्धारम्भ।
जगत रामेर सैन्य युद्धेते पोडिलो।।	जगत राम की सेना का हुआ रण में भंग।।
आर कोतो सैन्य तार धरिया राखिलो।	कितनी उसकी सेनाओं को लिया वहाँ पकड़।
पायेत निगड़ दिया परेते मारिलो।।	बेड़ी बाँधे पैरों में, अंत में दिया उन्हें मार।।

---

(1) उदयपुर के राज भवन का प्रवेश द्वार स्वर्णमय था। उस सिंह द्वार का नाम था 'स्वर्ण द्वार' अथवा 'सुवर्ण द्वार' था। राजमाला के द्वितीय लहर में भी इस द्वार का उल्लेख मिलता है। यथा–

पोरे ममारक खॉके पिंजरे राखिया।	बाद में ममारक खां को पिजरें में बन्द रखा।
सुवर्ण द्वारेर बाहिर राखिलेक निया।।	सुवर्ण द्वार के बाहर इसको रखा।।
राजमाला द्विल विजयमाण्क्यि खण्ड 50पृ	राजमाला द्विल विजयमाण्क्यि खण्ड 50पृ

अर्थात, ''बाद में ममारक खाँ को पिंजडे में बन्द कर स्वर्ण द्वार के बाहर ले जाकर रखा गया।''

आलोच्य लहर में सन्निविष्ट महाराज रत्नमाणिक्य की महिषि महारानी रत्नावती के मृत पति के साथ चितारोहण के समय जिस अभिसंपात वाक्यों का प्रयोग किया था, इसमें स्वर्ण द्वार का उल्लेख है –

चिता स्थाने गिया रानी, प्रदक्षिण पुनिपुनि	रानी गई चिता स्थान, पुनः पुनः कर प्रदक्षिण
राजपुरी दरशन कोरे।	राजपुरी करे दर्शन।
यदि ऐबे धर्म थाके, स्वर्णद्वार देखे लोके	यदि अब धर्म रहे, स्वर्ण द्वार लोग देखते रहें
धर्माग्निए दाहन करये।	धर्माग्नि में करे दहन।
राजमाला रत्नमाणिक्य खण्ड चल 24पृ	राजमाला रत्नमाणिक्य खण्ड चल 24पृ

अर्थात, ''रानी चिता स्थान पर गई और चिता को पुनः पुनः प्रदक्षिण किया और कहा यदि इस समय कहीं धर्म हो तो जिस स्वर्ण द्वार को लोग देखते हैं, उसे धर्माग्नि दहन कर देगी।''

चल–29

युद्धे पराभव होइया भंग दिलो ताये।	युद्ध में पराभूत होकर किया इसका त्याग।
कोनो स्थाने स्थिति नाहि ढाका चलि जाये।।	कहीं पर स्थिति नहीं, गया ढाका भाग।।
युद्ध विवरण कोहे नबाब बिदित।	नवाब से कहा उसने सारा विवरण।।
महा क्रोध होइया नबाब बोलिलो त्वरित।।	महा क्रोध वश नवाब ने कहा त्वरित।।
फौजेर सरदार तरे बोलिलो तखन।	फौजी सरदार से कहा उसी क्षण।
शीघ्र चलो उदयपुर युद्धेर कारण।।	शीघ्र चलो उदयपुर युद्ध के कारण।।
एक भाग फौज गेलो गोमती नदी दिया।	एक भाग फौज आई गोमती नदी की राह से।
आर भाग फौज आइसे नुरनगर होइया।।	और एक भाग आई होकर नूरनगर से।।
दूत मुखे एई तत्व शुनिलो राजन।	दूत के मुख से यह तत्व पाये राजन।
उदयपुर फौज आसि युद्ध आरंभन।।	उदयपुर में आई फौज, युद्ध के कारण।।
राज सैन्ये नाना मते युद्ध दिया छिलो।	राज सैन्य ने युद्ध में भारी प्रयास किया।
युद्धे भंग महाराजा गोपने रहिलो।।	युद्ध भंग कर, महाराज ने गोपन किया।।
उदयपुर सेई सैन्य कोतो दिन छिलो।	उदयपुर में सैन्यों ने कुछ दिन किया निवास।
राज्य भ्रष्ट होइया लोके पर्वतेत गेलो।।	राज्य भ्रष्ट हो कितनों ने पर्वत में किया वास।।
चल्लिस हजार टाका नृपतिर सने।	नृप के पास रूपये थे चालीस हजार।
बाछाड़े(1) संगेत निलो पर्बते गोपने।।	गये पर्वत पर छिपकर बाछाड़े(1) होकर पार।।
राजकीर्ति नाजिर रानीर समभ्यार।	राजकीर्ति नाजिर गये रानी को लेकर।
गोमती उजाने गेलो बसति राजार।।	राजा बसा गोमती के ऊपरी तट पर।।
राजमंगल आदि कोरि जतो हस्ती छिलो।	राजमंगल आदि थे जितने हाथी।
राजधानी जाहा पाइलो लुटिया जे निलो।।	राजधानी को लुटा, लेकर सारे साथी।।
तार पोरे राजास्थाने उकीले लिखिलो।	वकील ने राजा के यहाँ लिख भेजा सवांद।
से पत्र पाइया राजा मुर्शुदाबाद(2) गेलो।।	पाकर पत्र, गये राजा तुरन्त मुर्शिदाबाद(2) ।।
धर्ममाणिक्य राजा छिलो ज्ञानबान।	धर्ममाणिक्य राजा थे बडे ज्ञानवान।
जगत शेट(3) द्वारेते जे कोरिलो सन्धान।।	गये जगत शेठ(3) के यहाँ तक्षण।।
पोरे जगत शेट होइलो सापक्ष राजार।	बाद में लिया जगत सेठ ने उनका पक्ष।
नबाब संगे दरशन राज व्यवहार।।	नवाब के दर्शन हित गये उनके समक्ष।।
नवाब राजाके देखि बोले कि कारण।	देख राजा को पूछा नवाब ने आने का कारण।
जेमतो सुनिछि राजा ना देखि लक्षण।।	कहा, जैसा सुना राजा, नही इनमें वे लक्षण।।

---

(1) बाछाड़– बाछाल का विवरण राजमाला के प्रथम लहर 216पृ में दिया गया है।

(2) मुर्शुदाबाद – मुर्शिदाबाद।

(3) जगत शेट – जगत सेठ।

चल–30

जगत शेट स्थाने नवाब बुझिते लक्षण।	जगत सेठ से कहा नवाब ने परखने लक्षण।
कोरिया परीक्षा तुमि बुझिबा राजन।।	परख–निरख तुम देखो कैसा है राजन।।
भालो तरोवाल मध्ये मन्द साज दिया।	अच्छे तलवार को खोटे म्यान देकर।
मन्द तरोवाल भालो सज्जित कोरिया।।	खोटे तलवार को अच्छी तरह सजाकार।।
बहु मूल्य रत्नांगुरी मन्द रंग जड़िलो।	बहु मूल्य रत्नागुंरी निकृष्ट रंग जड़कर।
अल्प मूल्य रत्न मध्ये भालो रंग दिलो।।	अल्प मूल्य रत्न पर अच्छा रंग मढ़कर।।
भालो अश्वे मन्द साज देखिते कुत्सित।	अच्छे नस्ल अश्व पर मन्द साज कुत्सित।
मन्द अश्वे भालो साज देखिते शोभित।।	मन्द अश्व सुन्दर साज देखने को शोभित।।
अस्त्रादि घोटक रत्न मूल्य जेबा होइलो।	अस्त्रादि घोडों का जो हुआ रत्न मूल्य।
राजाते कोहिलो शेट मूल्यादि अतुल।।	राजा से कहा सेठ इनका दाम है अतुल।।
राजाय देखिया कहे जार जेई मूल्य।	राजा ने बताया, जिसका जो मूल्य सही।
नबाबेते कहे शेट बोलिछे साकुल्य।।	नवाब ने कहा सेठ, कह रहा है सही।।
राजा हेनो प्रत्यय नबाब तखने कोरिलो।	राजा की तरह आशा नवाब ने तभी किया।
अश्व हस्ती आर खिलात नृपति पाइलो।।	अश्व हस्ती और पुरुस्कार नृपति को दिया।।
खिलात होइया राजा आनन्दित मन।	पुरुस्कार पाकर नृप का आनन्दित मन।
विदाय लोइया राजा देशे आगमन।।	लेकर विदा, राजा का स्वदेश आगमन।।
एईमत कोतो काल राजत्व कोरिया।	इसी तरह बहुत काल राजत्व किया।
नाना सुखे राज्य भोग द्विजे भूमि दिया।।	नाना सुख भोग, द्विजों को भूमि दान किया।।
मेहेरकुल, छत्र ग्राम, कस्बा, धर्मपुर।	मेहेरकुल, छत्र ग्राम, कस्बा, धर्मपुर।
स्थाने स्थाने खनिलो धर्म नामेते सागर।।	हर स्थानों पर धर्म हित किया खनन सागर।।
तिल, धेनु, तुलापुरूष आर जे विपुल।	तिल, धेनु, तुलापुरूष और कितने ही विपुल।
शास्त्र प्रमाण दान भूम्यादि अतुल।।	किया शास्त्र प्रमाणदि से भूमिदान अतुल।।
महाभारत आदि कोरि जतेक पुराण।	महाभारत आदि जितने हैं पुराण।
शुनिया नृपति दिलो दक्षिणा प्रमाण।।	श्रवण कर नृपति ने द्विजो को दिया दान।।
एई मते अष्टादश(1) वर्ष परिमाण।	इस तरह बीता अठारह वर्ष प्रमाण।(1)
राज्य शासे नृपमणि धर्मेर समान।।	राज्य शासन करें नृप हुए धर्म समान।।
कालवश होइया राजा कंठे दुर्गा वाणी।	कालवश हुए राजा कंठ में दुर्गा नाम।
प्राणत्याग कोरि गेलो स्वर्गेते तखनि।।	प्राण त्याग किया राजा गये स्वर्ग धाम।।

(1) यह निर्धारित समय विशुद्ध नहीं है। मध्यमणि में इस विषय पर आलोचना की जायेगी।

चल–31

त्रिपदी छन्द	त्रिपदी छन्द
धर्ममाणिक्य नृपति, धर्मेते पालिया क्षिति	धर्ममाणिक्य नृपति, धर्म पाला क्षिति
राजा गेलो विश्वेश्वरेर स्थान।	राजा गये विश्वेश्वर के स्थान।
शक्तिमंत्रे उपासना, राजा कोरे प्रार्थना	शक्तिमंत्र से उपासना, करे राजा प्रार्थना
शक्ति देवी मुक्तिर कारण।	शक्ति देवी मुक्ति का कारण।
गंगाधर गदाधर, दुई पुत्र सहोदर	गंगाधर गदाधर, दोनों पुत्र सहोदर
श्राद्ध कोरे शास्त्रेर विहित।	श्राद्ध करें शास्त्र के विधान।
नानामते दान करे, राजा तुष्ट स्वर्गपुरे	नाना मत से करें दान, राजा तुष्ट स्वर्ग धाम
ब्राह्मणेते दिलो बहु धन।	ब्राह्मणों को दिया बहुधन।
एई मत दान धर्म, सांग होइलो श्राद्ध कर्म	इसी तरह दान धर्म, समाप्त हुआ श्राद्ध कर्म
राजा धर्ममाणिक्य कथन।	राजा धर्ममाणिक्य का कथन।
धर्ममाणिक्य आख्यायन, उजीर कहे व्याख्यायन	धर्ममाणिक्य आख्यायण, वजीर करे व्याख्यायण
कोहिलेन नृपति आदेशे।	राजाज्ञा पर किया वर्णन।
इति राज खण्ड तत्वे	इति राज खण्ड तत्वे
राजा धर्ममाणिक्य प्रसंग	राजा धर्ममाणिक्य प्रसंग
समाप्त।	समाप्त।
———	———
मुकुन्द माणिक्य खण्ड	मुकुन्द माणिक्य खण्ड
रामगंगा माणिक्य पुन जिज्ञासे कथन।	रामगंगा माणिक्य ने पुनः पूछा यह कथन।
आमा पितामह, पिता मुकुन्द राजन।।	मेरे पितामह, पिता मुकुन्द राजन।।
किमते शासन छिलो किबा व्यवहार।	कैसा था शासन कैसा था व्यवहार।
कोतो बत्सर शासे राज्य कोहिबा ताहार।।	कितने वर्ष शासन किये कहो सविस्तार।।
उजीर कोहे धर्ममाणिक्य काल होय(1)।	वजीर कहे, धर्ममाणिक्य का जब हुआ निधन।(1)
अराजक होइया राज्य सेई तो समय।।	अराजक हुआ राज्य उसी क्षण।।
चन्द्रमणि युबराज वैष्णव चरित्र।	चन्द्रमणि युवराज वैष्णव चरित्र।
राज सिंहासने बोइसे होइया पवित्र।।	बैठे राज सिंहासन हुआ पवित्र।।

(1) काल होय – स्वर्गीय हुए।

चल–32

अभिषिक्त कोरे द्विजे बेदेर बिहिते।(1)	अभिषिक्त करें द्विज, मान वैदिक विधान।(1)
दरियार बाद्ये(2) सेलाम जानाय लोकेते।।	दरिया वाद्य(2) देता है सलामी भुवन।।
मुकुन्द माणिक्य नाम गजसिक्का होइलो।	मुकुन्द माणिक्य नाम हुआ गजसिक्का।
प्रभावती महारानी मोहरे लिखिलो।।	प्रभावती महारानी का नाम मोहर में लिखा।।
तान छिलो दुई रानी श्रेष्ठा प्रभावती।	थी उनकी दो रानी श्रेष्ठा प्रभावती।
जैन्ता राजा ज्ञाति सूता धर्मे छिलो मति।।	जयंतिया राज जाति सूता धर्म में थी मति।।
ज्येष्ठ पुत्र पाँचकड़ि मुर्शुदाबाद तुले।	ज्येष्ठ पुत्र पाँचकड़ि मुर्शिदाबाद में थे तुल।
कृष्णमणि जयमणि तीन भाई छिले।।	कृष्णमणि, जयमणि सब तीन भाई थे मिल।।
रूक्षमिणि रानीते जन्मे हरि जयमणि।(3)	रूक्षमिणि से पैदा हरि जयमणि(3)।
दुई पक्षे पंच पुत्र छिलो नृपमणि।।	दोनों पक्षों से पाँच पुत्रों के पिता थे राजन।।
जयमणिर मृत्यु होइलो अति शिशुकाल।	जयमणि की मृत्यु हुई अति शिशु काल।
भद्रमणि काल प्राप्त तार पोरे होइलो।।	उसके पश्चात भद्रमणि हुए प्राप्त काल।।
पार्शि शास्त्रेते भालो विद्या छिलो ज्ञान।	पारसी शास्त्रों में अच्छी विद्या और था ज्ञान।
जेमत राजार पुत्र तेमत विद्वान।।	जैसे राजा के पुत्र थे वैसे थे विद्वान।।
बृन्दावन चन्द्र गोसाई नित्यानन्द वंश।	वृन्दावन चन्द्र गोसाई नित्यानन्द के वंश।
तान कीर्ति कोतो बोलि तिनि देव अंश।।	उनकी कीर्ति कितना कहूँ थे वे देव अंश।।
मुकुन्द माणिक्य राजार तिनि ईष्ट देब।	मुकुन्द माणिक्य देव के थे ईष्ट देव।
राजा मने कोरे ईष्ट नामे स्थापे देब।।	राजा मन में उपजा ईष्ट नाम से स्थापना देव।।
ईष्ट मते धातुर विग्रह निर्माइलो।	ईष्ट देव के मत से किया धातु विग्रह निर्माण।
बृन्दाबन चन्द्र ईष्ट नामेते राखिलो(4)।।	वृन्दावन चन्द्र रखा ईष्टदेव के नाम।।(4)

(1) राज्यभिषेक की पद्धति की आलोचना मध्यमणि में मिलेगी।

(2) त्रिपुरा के एक सम्प्रदाय को ''दरिया दफा'' के नाम से जाना जाता है। ये अपने वाद्य यंत्र के जरिये राजा को सलामी देते थे। इस वाद्य को दरियार वाद्य (दरिया का वाद्य) या सेलामवारी वाद्य अर्थात सलामी का वाद्य कहा जाता था।

(3) यहाँ पर ''जयमणि'' नाम लिपिकार के प्रमाद दोष से हो गया है। नाम होगा भद्रमणि। जयमणि प्रथम महिषि के गर्भजात कुमार थे। उनका नाम इसकी ऊपर पंक्ति में आया है।

(4) महाराज मुकुन्द माणिक्य ने अपने दीक्षा गुरू के नामानुसार वृन्दावन चन्द्र नाम से विग्रह स्थापन किया। इस विग्रह का विवरण मध्यमणि में मिलेगा।

चल–33

दश कर्म(1) कराइलो यथाविधि मते।	दस कर्म(1) किया यथाविधि मानकर।
उदयपुर स्थापिलेक मन्दिर ताहाते।।	स्थापन किया भव्य एक मन्दिर उदयपुर।।
धर्म कर्म नाना मते कोरे नृपवर।	धर्म कर्म नाना तरह करें नृपवर।
स्थाने स्थाने द्विजे भूमि दिलेक तत्पर।।	भूमि दान द्विजों को विभिन्न स्थानों पर।।
उदयपुर तिषिना फागुनकरा ग्राम।	उदयपुर तिष्णा में फागुनकरा ग्राम।
सागर खनिलो राजा मुकुन्द सागर नाम।।	सागर खनाया राजा मुकुन्द सागर नाम।।
मुकुन्द माणिक्य राजा छिलो ज्ञानबंत।	मुकुन्द माणिक्य राजा थे ज्ञानवंत।
मर्यादार भय नृप कोरितो अत्यन्त।।	मर्यादा भय नृप करते अत्यंत।।
गदाधर नाजिर होइलो पुण्यवंत अति।	गदाधर नाजिर हुए पुण्यवान अति।
तान पिता राजकीर्ति नाजिर ये ख्याति।।	उनके पिता राजकीर्ति, नाजिर की ख्याति।।
हुजुरेर कर हस्ती बहु बाकी पड़े।	हुजुर का हस्तीकर बहुत सा रह गया अधूरा।
महशुल(2) पांचकड़ि ठाकुर ऊपरे।।	तगादा(2) पांचकड़ि ठाकुर पर पड़ा।।
पांचकड़ि पत्र लिखे हस्ती दिते कर।	पांचकड़ि ने पत्र लिखा देने हस्ती कर।।
भालो हस्ती नाहि मिले होइलो दुष्कर।।	अच्छा हाथी मिलना अब हो गया दुष्कर।।
फौजदार पाठाइलो राज तदन्तर।	फौजदार पठाया तब राजा के दरबार।
उदयपुर आइसे फौज(3) लोईते हस्ती कर।।	उदयपुर आई फौज लेने हस्ती कर।।
राजपुत्र जगन्नाथ ठाकुर पुण्यबान।	राजपुत्र जगन्नाथ ठाकुर थे पुण्यवान।
तान पुत्र सूर्य प्रताप उजीर आख्यान।।	उनके पुत्र सूर्य प्रताप वजीर थे महान।।
ताहार पुत्र होये हरिधन ठाकुर।	उनके पुत्र थे ठाकुर हरिधन।
ताहान तनय दुई विक्रमे प्रचुर।।	उनके तनय दो थे पराक्रमी महान।।
रूद्रमणि ज्येष्ठ होय हाड़िधन कनिष्ठ।	रूद्रमणि ज्येष्ठ थे हाड़िधन कनिष्ठ।
रूद्रमणि छिलो सुबा राजार अभीष्ट।।	रूद्रमणि थे सुबा, राजा के अभीष्ट।।

---

(1) दस कर्म – शास्त्रानुमोदित दस विधि संस्कार को दस कर्म कहा जाता है। हारित संहिता, संस्कार तत्व, याज्ञवल्क संहिता, मलमास तत्व आदि बहुत से शास्त्र ग्रन्थों में दस विधि संस्कार का उल्लेख मिलता है। दस कर्म पद्धति ग्रंथ में इस विषय में विस्तार से आलोचना की गई है। भवदेव भट्ट द्वारा सामवेदिओं का पशुपति भट्ट द्वारा यजुर्वेदीय एवं कालेशि द्वारा ऋगवेदिओं के आचरणीय दस कर्म पद्धति की रचना की गई है। सभी ग्रंथों के अनुसार नीचे लिखे संस्कारों को दस कर्म संस्कार कहते हैं– (1) गर्भाधान, (2) पुंसवन, (3) सीमंतोन्नयन, (4) जातकर्म, (5) निष्क्रामण, (6) नामकरण, (7) अन्नप्रासन, (8) चूड़ाकरण, (9) उपनयन, (10) विवाह।

विग्रह प्रतिष्ठा के समय, मनुष्य की तरह विग्रह को पूर्वोक्त दसविध संस्कारों से संस्कृत करना पड़ता है। यहां पर उसी का उल्लेख है।

(2) महशूल – तागिद।

(3) फौज – सेना।

चल–34

पुनः पुनः कोरे खेदा(1) रूद्रमणि सुबाए।	पुनः पुनः करते खेदा(1) रूद्रमणि सूबेदार।
कदापिह भालो हस्ती ना मिले खेदाए।।	फिर भी ना मिला कहीं श्रेष्ठ हाथी वहाँ पर।।
फौजदार आगमन सुबाए शुनिया।	फौजदार का आगमन सुबेदार ने सुनकर।
राजा स्थाने पत्र लिखि दिलो पाठाइया।।	राजा के एक पत्र भेजा वहाँ लिखकर।।
पत्र लिखे खेदायेते हस्ती ना पाइया।	पत्र लिखा खेदा में हस्ती न पाकर।
राज आज्ञा होइले फौज दिबो खेदाइया।।	राजाज्ञा होने पर, दूँगा फौज खदेडकर।।
राजा कहे पांचकड़ि नबाब निकट।	राजा ने कहा पांचकड़ि नवाब निकट।
फौजदार खेदाइले होइबे संकट।।	फौजदार के खदड़ेने पर होगा भारी संकट।।
ऐईमत महाराजा मने बिबेचिया।	इस पर महाराज ने मन में कर विचार।
फौजदार निकटे पत्र दिलो पाठाइया(2)।।	पत्र भेज दिया था जहाँ फौजदार।।(2)
पत्र देखि फौजदार होईलो कुपित।	पत्र देख फौजदार हो गया कुपित।
राज प्रबंचना हेनो बुझे बिपरीत।।	राज प्रबंचना के रूप में समझा विपरीत।।
सेईक्षणे नृप तलप दिलो फौजदार।	उसी समय राजा को तलब किया फौजदार।
मुकुन्द माणिक्य नृप राखे कारागार।।	मुकुन्द माणिक्य नृप को रखा कारागार।।
कृष्णमणि संगे छिलो तनय नृपेर।	कृष्णमणि के साथ थे तनय नृप के।
आर गदाधर पुत्र धर्म माणिक्येर।।	साथ थे गदाधर पुत्र धर्म माणिक्य के।।
राजा कारागारे देखे सैन्य त्रिपुरार।	देख सेना त्रिपुरा की नृप को कारागार।
चतुर्दिगे बेड़े सैन्ये मारिते फौजदार।।	चारों ओर से घेर, मारे सेना फौजदार।।
अपमान पाइया नृप विष कोरे पान।	अपमानित होकर नृप ने किया विष पान।
विषतेजे महाराजा त्यजिलो जीबन।।	विष तेज से महाराजा ने त्यागा स्वजीवन।।
राजा मृत्यु देखि सैन्ये मने विमर्शिलो।	राजा मृत्यु देख सेना का हुआ विर्मश मन।
राज पुत्र तुले आछे युद्ध नहे भालो।।	राज पुत्र है तुल, पर उचित नहीं है रण।।
प्रातःकाले मृत राजा निकालिया दिलो।	प्रातःकाल मृत राजा को निकाल बाहर।
त्रिपुरार प्रजालोके तखने आनिलो।।	त्रिपुरा की प्रजा उन्हें ले आई नगर।।
फौजदार संगे बिबाद होइलो जखन।	फौजदार के साथ विवाद हुआ जिस दिन।
मेहार कुल बागशिमौइल रानीर गमन।।	मेहेरकुल के बागशिमौइल में रानी का गमन।।
रानी नाहि छिलो बलि भावे मंत्रिगण।	रानी नहीं थी कहकर सोचे मंत्रीगण।
तोइलो मध्ये राखे राजा कोरिया जतन।।	तेल में रखा राजा को, करके जतन।।

....

(1) खेदा – जंगली हाथी पकड़ने की प्रणाली। राजमाला तृतीय लहर के मध्यमणि में खेदा का विवरण दिया गया है।

(2) रूद्रमणि द्वारा सुबेदार के लिखित पत्र को फौजदार के यहाँ भेजा गया था।

चल–35

नृप मृत्यु शुनि रानी होइलो मोहित।	नृप मृत्यु सुनी रानी हो गई अचेत।
सप्त दिने उदयपुर होइलो उपस्थित।।	सातवें दिन उदयपुर हो गई उपस्थित।।
तोइलो कटा होने नृप निकाले(1)त्वरित।	तेल के तगाडे से निकाला नृप त्वरित।(1)
सहगामी होइते चले राजार सहित।।	सहगामी होने चली राजा के सहित।।
फौजविचार नारायण श्रेष्ठ सेनापति।	फौजविचार सेनापति श्रेष्ठ नारायण।
रूद्रमणि सूबा राजा कोरिते तार मति।।	रूद्रमणि को राजा बनाने की उसकी मति।।
मंत्रणा कोरिया कहे रानीर बिदित।	मंत्रणा करके कहा रानी के समक्ष।
अराजक कोरि जाय राजार सहित।।	अराजक होती है राजा के साथ।।
ए बोलिया मृत राजा आटक राखिलो।	यह कहकर मृत राजा को रोक उसने दिया।
प्रजा सम्बोधिया रानी तखने बोलिलो।।	प्रजा सम्बोधन कर तब रानी ने कहा।।
राज पुत्र पाँचकड़ि ठाकुर तुलेते।	राजकड़ि ठाकुर हैं 'तुल' पर।
धर्म माणिक्य पुत्र गंगाधर ढाकाते।।	धर्म माणिक्य पुत्र गंगाधर है ढाका पर।।
फौजविचार कोहिलेक लोकेर संगति।	फौजविचार ने कहा लोगों के प्रति।
आर जतो प्रधानस्तगण सेनापति।।	और जितने थे प्रधान वहाँ सेनापति।।
नव्य राजा सिंहासने वसिया आसन।	नये राजा बैठे जब सिंहासन।
मृत राजा दहिबारे आदेश कोरेन।।	आदेश करेगें वहीं मृत राजा के दहन।।
तोमा बंशे रूद्रमणि राजा होइते पारे।	तुम्हारे वंश में रूद्रमणि हो सकते राजन।
रानीर आज्ञा होइले राजा कोरिबो ताहारे।।	रानी की आज्ञा से उसे बैठाउँ सिंहासन।।
पुनः पुनः कहे लोके रानीर निकट।	पुनः पुनः कहा लोगों ने रानी के निकट।
रानी बोले किबा बोलो ए बड संकट।।	रानी बोली क्या बोलूं यह बडा संकट।।
बिलम्ब ना कोरो जाबो राजार संगेत।	बिलम्ब न करो जाउँगी राजा के साथ।
पोरे तोमा मने जाहा करह विहित।।	पश्चात जो हो मन में उसका करो विहित।।
सेईकाले रानी आज्ञा सकले भाषाये।(2)।	उस समय रानी आज्ञा सबको बताया।(2)
रूद्रमणि सूबाके सिंहासनेते बोइसाये।।	रूद्रमणि सूबेदार को सिंहासन बैठाया।।
जयमाणिक्य नाम ताहान कोरिछे।	जयमाणिक्य नाम उनका रखा गया।
दरिया वाद्ये सेलाम ताते जानाइछे।।	दरिया वाद्य ने उन्हें सलाम जनाया।।
पाँचकडि ठाकुर छिलो नबाब सदन।	पाँचकड़ि ठाकुर थे नवाब के सदन।
बिदाय होइया आइसे देशे आगमन।।	विदा लेकर किया स्वदेश आगमन।।

---

(1) निकाले – बाहर किया, निकाला। यह निकालना हिन्दी शब्द है।

(2) भाषाये – प्रवाहित किया या प्रचार किया या बताया।

चल–36

कृष्णमणि पत्र पद्मातीरेते पाइलो।	कृष्णमणि ने पत्र पद्मा तीर पाया।
पितार मरण राजा जय माणिक्य होइलो।।	पितृ मरण और राजा जयमाणिक्य हुआ।।
एर्द पत्र पाइया तेनि फिरिया जे जाये।	पत्र पाकर पुनः लौट आया।
मुर्शुदाबाद गंगाते पौंछिलो त्वराये।।	मुर्शिदाबाद आया पुनः गंगा के तट।।
त्रिपदी छन्द	त्रिपदी छन्द
पांचकड़ि नृप सुत, पितृ शोक अविरत	पांचकड़ि नृप सुत, पितृ शोक अविरत
आर शोक मातृ सहगामी।	और शोक मातृ सहमरण।
स्वर्गे गेलो नृप शुनि, राजा होइलो रूद्रमणि	स्वर्ग गए नृपवर, रूद्रमणि पाया राज्य भार
नबाबेतो कहे बिबरण ।	नवाब ने कहा विवरण।
नबाबे शुनिलो जतो, आश्वासिलो नृप सुत	सुन नवाब ने सब, आश्वासित नृपसुत को तब
कहे राजा तुमि से राज्येर।	कहा तुम्ही हो वहाँ के राजा।
गमिर खिलात(1) काल, सोनालि जडित भाल	गमि का खिलात(1) स्वर्णिम दमकता भाल
खिलात पात्र पांचकड़ि ठाकुर।	पाचकड़ि ठाकुर हुए उपहार पात्र।
श्राद्ध आयोजन कोरे, क्रिया कोरे गंगातीरे	श्राद्ध आयोजन करें, क्रिया गंगा तीर करें
मुकुन्द माणिक्य आर रानी।	मुकुन्द माणिक्य और रानी कर स्मरण।
बेद मंत्र नाना दान, कोरिया जे समाधान	वेद मंत्र नाना दान, करके सब समाधान
गंगातीरे द्विजेते अर्पण।	गंगा तीर द्विजों को अर्पण।
ठाकुर जे कृष्णमणि, आर पुत्र हरिमणि	ठाकुर जो कृष्णमणि, और पुत्र हरिमणि
बिधिमते श्राद्ध राजधानी।	विधिवत श्राद्ध राजधानी।
मुकुन्द माणिक्य राजन, श्राद्ध होइलो समापन	मुकुन्द माणिक्य राजन, श्राद्ध हुआ समापन
सप्त बत्सर कोरिलो राजत्व।	सात साल शासन से सुखी हर प्राणी
मुकुन्द माणिक्य पोरे, सप्त दिन अभयन्तरे	मुकुन्द माणिक्य के बाद, सप्त दिवस पश्चात
सहगामी रानी प्रभावती।	प्रभावती ने किया सहमरण।
नृपतिर श्राद्ध पोरे, सप्त दिन अंतरे	नृपति के श्राद्ध पश्चात, बीता जब दिन सात
रानीर श्राद्ध एइसे कारण(2)।	रानी का श्राद्ध इस कारण।(2)
मुकुन्द माणिक्य कथन, होइलेक समापन	मुकुन्द माणिक्य कथन, हुआ अब समापन
उजीर कहे बिस्तार कोरिया।।	वजीर ने किया सविस्तार वर्णन।।
इति राज खण्ड तत्वे	इति राज खण्ड तत्वे
मुकुन्द माणिक्य राज कथनं	मुकुन्द माणिक्य राज कथनम्
समाप्त।	समाप्त।

---

(1) गमिर खिलात – उत्सव का उपहार? गमि शब्द का प्रकृत अर्थ यहाँ पर शोभा नहीं देता।

(2) इस कार्य का शास्त्रीय प्रमाणादि मिलना मुश्किल है। अनुकूल मत मिलने पर मध्यमणि में इस विषय पर आलोचना की जायेगी।

चल–37

जयमाणिक्य खण्ड	जयमाणिक्य खण्ड
नृपति जिज्ञासा कोरे उजीर अंतरे।	नृपति ने पूछा वजीर से सहृदय।
जयमाणिक्य राजार किबा अभ्यंतरे।।	जय माणिक्य राजा का कैसा था हृदय।।
पांचकड़ि ठाकुर छिलो नवाब बिदित।	पांचकड़ि ठाकुर थे नवाब के परिचित।
किबामते राज्याधिप कहो बिस्तारित।।	कैसे वे राजा हुए कहो विस्तारित।।
उजीर कहे जयमाणिक्य होइलो नृपबर।	कहा वजीर ने जयमाणिक्य हुए नृपवर।
फौजदार निकालिया दिलेन तत्पर।।	फौजदार को निकाल दिया तत्पर।।
जयमाणिक्य राजा यशोदा नाम रानी।	जयमाणिक्य राजा रानी नाम था यशोदा।
एई नामे गजसिक्का कोरिलो आपनि।।	इस नाम से चलाया राजा ने गजसिक्का।।
राज्येर शासन कोरे होइया नृपबर।	राज्य शासन करते थे होकर नृपवर।
प्रजाते सुख्याति तान होइलो विस्तर।।	प्रजा में सुख्याति उनकी थी चारों ओर।।
नबाब साक्षाते आछे पांचकड़ि ठाकुर।	नवाब के यहाँ थे पांचकड़ि ठाकुर।
सुख्याति पाइलो राजा भाबित विस्तर।।	सुख्याति मिली उन्हें पर चिंता से भरपूर।।
राजार जामाता श्रीनाम सूबा होइलो।	राजा के जामाता श्रीनाम हुए सूबेदार।
उत्तरसिंह नारायण उजीर कोरिलो।।	उत्तरसिंह नारायण को बनाया वजीर।
गौरीप्रसाद नाजिर होइलो ताहान।	गौरी प्रसाद हुए उनके नाजिर।
जयसिंह कारकन बिक्रमे बाखान।।	जयसिंह कारकन व्रिकमी महाशूर।।
एई मत जयमाणिक्य प्रजार शासन।	इस तरह जयमाणिक्य ने किया शासन।
पांचकड़ि दरखास्त राज्येर कारण।।	पांचकड़ि ने दरखास्त किया राज्य के कारण।।
बाकि हस्ती किस्तिबन्दि कोरिया तखन।	बाकी हस्ती किस्ती बन्दी करके उस समय।
राजत्व फरमान(1) लोइया राज्ये आगमन।।	राजत्व फरमान(1) लेकर हुआ उदय।।
सिंहासने बोइसे राजा कोरि शुभ क्षण।	सिंहासन पर बैठे राजा देख शुभ क्षण।
नृपति नामेते भूमि द्विजेते अर्पण।।	नृपति नाम से भूमि द्विजों को अर्पण।।
इन्द्रमाणिक्य राजा दुर्गा महरानी।	इन्द्रमाणिक्य राजा दुर्गा महारानी।
राजा रानी नामे गजसिक्का राजधानी।।	राजा रानी नाम से गजसिक्का राजधानी।।
कृष्णमणि अनुज होइलो युवराज।	कृष्णमणि अनुज हुए युवराज।
गंगाधर बडो ठाकुर कोरे महाराज।।	गंगाधर को बडे ठाकुर बनाये महाराज।।

---

(1) फरमान – आदेश, सनद पत्र।

चल–38

युगिराम सूबा छिलो रामधन उजीर।	युगिराम सूबेदार था रामधन वजीर।
धर्म माणिक्य जामाता से बडई चतुर।।	धर्म माणिक्य जामाता बड़ा ही चतुर।।
बदंग नाम त्रिपुर देबान कोरिलो।	बदंग नाम त्रिपुरा का बनाया दीवान।
राज्येते अख्याति तान अद्यापि रहिलो।।	राज्य में था अब तक वो बदनाम।।
जयमाणिक्य महाराजा पात्र मन्त्रि लोइया।	जयमाणिक्य महाराजा पात्र मंत्री लेकर।
उदयपुर दक्षिणे मोताई रहे गिया।।	उदयपुर से दक्षिण बसे मताई जाकर।।
मोताइते राजधानी कोरिलो राजन।	मताई में राजधानी की किया स्थापना।
त्रिपुरा पाहाड़ दक्षिण करये शासन।।	त्रिपुर का दक्षिण पहाड़ करने लगे शासन।।
दक्षिण त्रिपुरा लोक जयमाणिक्य मते।	दक्षिण त्रिपुरा के लोग जयमाणिक्य के साथ।
ताहान मंगल ध्याये बांगाल सहिते।।	उसका मंगल ध्याये बांगाल के साथ।।
इन्द्रमाणिक्य त्रिपुर बांगाल सहित।	इन्द्रमाणिक्य त्रिपुरा को बांगाल सहित।
जयमाणिक्य धरिबारे छिलेन चेष्टित।।	जयमाणिक्य को पकड़ने हेतु थे चेष्टित।।
कोतो दिन पोरे जयमाणिक्य मंत्रि सने।	कुछ दिनों पश्चात जयमाणिक्य मंत्रियों संग।
सन्धाने धोरि इन्द्रमाणिक्य राजने।।(1)	इन्द्रमाणिक्य(1) उनका कर लिया संधान।।
नबाब साक्षाते नृप बद्ध पाठाइलो।	बद्ध कर भेजा नृप ने नवाब के वहाँ।
जयमाणिक्य सदरेत मंत्रणा कोरिलो।।	जयमाणिक्य ने सदर में किया मंत्रणा यहाँ।।
कादबार जगतराम भ्राता नरहरि।	कादबा के जगत राम भ्राता नरहरि।
युबराज कोरे ताके राज्य अधिकारी।।	युवराज किया उसे राज्य अधिकारी।।
इन्द्रमाणिक्येर ताहुत(2) बाकी पोरे कर।	इन्द्रमाणिक्य ताहुत(2) रह गिया था देना।
ताहान राजत्व निते मंत्रणा परस्पर।।	उनके राजत्व लेने हेतु परस्पर किया मंत्रणा।।
मुर्शुदाबाद दरबार नानामते कोरे।	नाना तरह मुर्शुदाबाद में किया वह दरबार।
दुई राजा पक्षे बिबाद कोरे परस्परे।।	दोनों राजा स्वपक्ष में विवाद करे परस्पर।।
हस्ती कर बाकी परे तार मूल्य टाका।	हस्ती कर बाकी रहा उसका मूल्य टका में।
प्रति हस्ती हाजार टाका दिते छिलो ढाका।।	प्रति हस्ती एक हजार टका देना था ढाका में।।
निरूपित कर बाकी बिबाद राजन।	निरूपित कर बाकी, विवाद में राजन।
एक राज्य तिन राजा बाकी से कारण।।	एक राज्य में तीन राजा बाकी इसी कारण।।
धर्म माणिक्येर पुत्र नाम गंगाधर।	धर्म माणिक्य का पुत्र नाम गंगाधर।
उदय माणिक्य नाम होइया नरेश्वर।।	उदय माणिक्य नाम हुआ होने पर नरेश्वर।।

(1) जयमाणिक्य नवाब द्वारा पकड़े गये थे, मध्यमणि में इस पर आलोचना की जायेगी।

(2) ताहुत – बन्दोबस्त के अनुसार निर्धारित राजस्व।

चल–39

इन्द्रमाणिक्य बाकी हस्ती ताहुत कोरिया।	इन्द्रमाणिक्य ने बाकी हस्ती का ताहुत किया।
नबाबे परोयाणा(1) दिलो बहु आश्वासिया।।	नवाब ने परवाना(1) दिया बहु आश्वासन।।
राज्याधिपति होइया हरषित मन।	राज्याधिपति होकर हरषित मन।
नबाबेते बिदाय होइया राज्ये आगमन।।	लेकर विदा नवाब से किया राज्य आगमन।।
मेहार कुल आसि छिलो मंत्रणा बिस्तर।	मेहेर कुल आये थे मंत्रणा लेकर।
उदयपुर राजधानी होइते नृपवर।।	उदयपुर राजधानी से होकर नृपवर।।
जयमाणिक्य राजा एई सब जानिया।	जयमाणिक्य राजा यह सब जानकर।
नवाब साक्षात कोहे सब विस्तारिया।।	नवाब से कहा सब कुछ सविस्तार।।
उदय माणिक्य यदि होयेत नृपति।	उदय माणिक्य यदि होता है नृपति।
ताहुतेर बाकी कर परिबेक हाती।।	ताहुत का बाकी कर दे सकेगा हस्ती।।
ए सब बृत्तान्त नबाब शुनिया तत्पर।	नवाब ने सुना यह सब वृतान्त।
उदय माणिक्य फिराइया निलेक सत्वर।।	उदय माणिक्य को लौटा लाया तुरन्त।।
परिजन समे राजा ढाकाते रहिलो।	राजा रहे ढाका परिजनों के साथ।
सेई स्थाने नृपतिर कालप्राप्त होइलो।।	वहीं पर नृपति कालवश हुआ अकस्मात।।
तान पुत्र छाड़िया ठाकुर मतिमान।	उनके पुत्र छाड़िया ठाकुर थे मतिमान।
कोतो दिन पोरे मृत्यु होइलो निःसन्तान।।	कुछ दिन पश्चात मृत्यु हुए थे निःसन्तान।।
हाजीहोसन मगल(2) ढाकाते बसति।	हाजी होसेन मुगल(2), था ढाका में निवास।
समसर गाजी दस्य(3) दक्षिणसिक स्थिति।।	समसर गाजी दस्यु(3) दक्षिण में था आवास।।
गाजी मने कोरे त्रिपुर राज्य लोइते।	गाजी के मन में हुआ त्रिपुर राज्य लेना।
हाजी होसन मुरूब्बी(4) कोरिलो कोन मते।।	हाजी होसेन को मुरूब्बी(4) बनाया अपना।।
हाजी होसन स्थाने समसर कोहिलो बिस्तर।	हाजी होसेन के यहाँ समसेर ने कहा सविस्तार।
इन्द्रमाणिक्येर बाकी हुजुरेर कर।।	इन्द्रमाणिक्य पर, हुजूर का कर है अपार।।
राजार निग्रह यदि कोरोये नबाबे।	राजा पर निग्रह करे यदि नवाब।
त्रिपुर राज्येर कर पाइबेक तबे।।	त्रिपुर राज्य का कर मिलेगा तब।।
एई कथा शुनिया हाजी करिलो गमन।	यह बात सुनकर हाजी ने किया गमन।
मुर्शुदाबाद चलि गेलो नबाब सदन।।	मुर्शिदाबाद गया वह नवाब के सदन।।
इन्द्रमाणिक्य राजार बाकी होये कर।	इन्द्रमाणिक्य पर बाकी रहे कर।
नबाब निकट कहे कुतर्क बिस्तर।।	नवाब से किया कुतर्क सविस्तार।।

(1) परवाना – आदेश लिपि।

(2) हाजी होसेन का विवरण मध्यमणि में मिलेगा।

(3) दस्य – दस्यु

(4) मुरूब्बी – अभिभावक, सहाय।

चल–40

माहाम्मद जंग(1) नवाब शुनिया काहिनी।	मुहम्मद जंग(1) नवाब ने सुनी कहानी।
हाजी के हुक्म दिलो आसिते राजधानी।।	हाजी, हुक्म से आए राजधानी।।
हाजीहोसन समसर एकता होइया।	हाजीहोसन व समसर में एकता हुई।
चलिलेक होसनद्दी नवाब(2) लोइया।।	चले होसनद्दी नवाब(2) को लेकर।।
बहु सैन्य लोइया नवाब उदयपुर आइसे।	बहु सैन्य लेकर नवाब उदयपुर आऐ।
इन्द्रमाणिक्य सने युद्ध होइलो अशेषे।।	इन्द्रमाणिक्य संग युद्ध हुआ अशेष।।
चित्ते बिमर्षिल राजा युद्ध जय पाइले।	खुशी चित्त राजा युद्ध जय पाया।
पोरेते कि होबे जानि नवाब संगे मिले।।	अब क्या करना जानने नवाब संगे मिले।।
होसनद्दी नवाब कहे राजा सम्बोधिया।	होसनद्दी नवाब कहे राजा को सम्बोधित।
मुर्शुदाबाद जाइबार कहे आश्वासिया।।	मुर्शुदाबाद जाने को कहा दिया आश्वासन।।
नवाब आश्वास राजा पाइया विस्तर।	नवाब आश्वासन, राजा ने पाया विस्तर।
कृष्णमणि युवराजके बोलिलो सत्वर।।	कृष्णमणि युवराज को बोला सत्वर।।
आमि जाबो हुजूरेते ना भाबो अन्यथा।	मैं जाउंगा हुजूर, आप न ले अन्यथा।
परिबार निया जाव पूर्बकुल(3) यथा।।	परिबार ले जाउेगा पूर्बकुल(3) में यथा।।
राजधानी थाके यदि उपद्रब होबे।	राजधानी में यदि उपद्रब होए।
बहु शत्रु राज्ये होइलो पराभब दिबे।।	बहु शत्रु राज्य के हरा दिये।।

---

(1) यह नवाब आली वर्दी खाँ की उपाधि है। वे पटना के वज्जरा नाम के प्रबल दस्यु दल और उसके अंचल के जमींदारों को दमन करके दिल्ली के दरबार के ''महवत् जंग'' की उपाधि उन्हें दी गई थी। यहाँ पर उपाधि को विकृत करके महामम्दजंग किया गया है। किसी किसी जगह महामुद जंग भी लिखा गया है। आली वर्दी खाँ भी उनका नाम नहीं है, यह भी उनकी उपाधि है। इसका पूर्व नाम था महम्मद अली। राज महल के फौजदार के पद पर नियुक्त रहते समय सम्राट से उन्हें ''आली वर्दी'' उपाधि मिली थी। यह उपाधि ही उनके नाम से चल पड़ी। ये 1740 से 1756 ई0 तक बंग, बिहार और उडीसा के शासक थे।

(2) नवाब आली वर्दी खाँ बंग देश के शासक होकर, अपने जामाता निबाइस महम्मद को ढाका का नायब नाजिम के पद पर और होसेन कुली खाँ को उनके सहकारी के रूप में नियुक्त किया। इस होसेन कुली को ही ''होसनद्दी नवाब'' के नाम से उल्लेख किया गया है।

(3) पूर्व कुल के अवस्थान के बारे में ''कृष्ण माला'' ग्रन्थ में उल्लेख है –

हिडिम्ब देशेर दक्षिणेते एक नदी।	बरबक्र नाम तार घोषे अद्‌यावधि।।
खंलमा बलये तारे त्रिपुर सकले।	कुकी सबे बसति करये तार कुले।।
रूकनी नामेते नदी ताहार दक्षिण।	तथाते बसति करये कुकिगण।।

र र र र र र र र र र

ताहार दक्षिण स्थल सुन्दरे आछये।
कांगलाई नामें एक पर्बतेर श्रृंग।
ताहार दक्षिणे नदी नामेते चाथेंग।।
इ सब स्थानेते बोइसे जतो कुकिचय।
पूर्ब कुलिया बोलि ता सबारे कोय।। ''कृष्ण माला''

अर्थात हिडिम्ब देश के दक्षिण में बरबक्र(आधुनिक बराक) नाम की एक नदी अब तक बहती है। खंलमा के इलाके में उसके किनारे कुकियों का वास है। रूकनी नदी उसके दक्षिण में बहती है। वहीं पर सभी कुकी निवास करते है।

र र र र र र र र र र

इसका दक्षिण स्थल सुन्दर है। वही पर कांकलाई नाम का एक पर्वत श्रंग है। उसके दक्षिण में चाथेंग नाम की एक नदी है वहीं पर बहुत से कुकी रहते है। उन्हें पूर्व तीर निवासी या पूर्ब कुलिया कहते हैं।

चल–41

कृष्णमणि युबराज परिवार समे।	कृष्णमाणिक्य युवराज परिवार के संग।
उदयपुर त्यागि चले पूर्बकुल धामे।।	उदयपुर त्याग चले पूर्वकुल धाम।।
करबंग पाड़ाते जे गेलो युबराज।	करबंग गाँव गये युवराज।
पिंगचांद कलिराय युद्ध कोरे साज।।	पिंगचाँद कलिराय करे युद्ध साज।।
जयमाणिक्य भृत्य तारा दुई जन।	जयमाणिक्य के भृत्य तारा दो जन।
युबराज संगे युद्ध कोरे सेई क्षण।।	युवराज संग करे युद्ध उस क्षण।।
पराभब होइया तारा पृष्ठ भंग दिलो।	पराजित हो उन्होंने किया पृष्ठ प्रदर्शन।
कृष्णमणि युबराज कैलासरे गेलो।।	कृष्णमाणिक्य युवराज का कैलाशहर गमन।।
तथाये पांचकड़ि सुड़ि देबग्रामें घर।	वहाँ पर पांचकड़ि सुड़ि का देवग्राम में घर।
युबराज संगे युद्ध कोरिलो तत्पर।।	युवराज के साथ युद्ध किया तुरन्त वहां पर।।
पराभब होइया कहे हाजी होसन स्थान।	हार कर कहा जहाँ हाजी होसेन स्थान।
कैलाशहर घाट मारे युबराज प्रधान।।	कैलाशहर के घाट पर मारा है युवराज प्रधान।।
तथा होते युबराज हेडम्बेत गेलो।	वहाँ से युवराज गये हेडम्ब राज।
सेई स्थाने युबराज कोतो दिन छिलो।।	वहाँ थे कुछ दिनों तक युवराज।।
इन्द्रमाणिक्य राजा मुर्शुदाबाद पाइया।	इन्द्रमाणिक्य राजा ने मुर्शिदाबाद जाकर।
भागीरथी स्नान दान गंगाते रहिया।।	भागीरथी में स्नान दान गंगा में रहकर।।
जयमाणिक्य राजा कारसाजि(1) मते।	जयमाणिक्य राजा ने करके कारसाजी।(1)
इन्द्रमाणिक्य राजार बाकी हस्ती दिते।।	इन्द्रमाणिक्य राजा का जो देना था बाकी हाथी।।
उदयपुर आसिलेक राजत्व लोइया।	उदयपुर वह आया लेकर राजत्व।
राज्य शासये राजा द्विजे भूमि दिया।।	भूमि दान द्विजों को, कर शासन राज्य।।
तिन राजार बिबादेते हस्ती बाकी कर।	तीन राजा के विवाद से, बाकी हस्ती कर।
जयमाणिक्य पुन गेलो नवाब गोचर।।	जयमाणिक्य पुनः गया नवाब के गोचर।।
इन्द्रमाणिक्य राजा छिलो जिद्धबंत।(2)	इन्द्रमाणिक्य राजा था बडा जिद्दीवंत।(2)
जेई सेई कर्मेते जे असह्य अत्यन्त।।	जैसे तैसे कर्म को सह न सकता अत्यंत।।
पारसि शास्त्रेते विद्या आछिलो बहुल।	पारसी शास्त्र की विद्या थी विशाल।
तान भाषा शुन्या मगल होइलो व्याकुल।।	उसकी भाषा सुनकर मुगल होते थे व्याकुल।।
कि बोलिते किबा आइसे पारसि भाषाये।	क्या कहते क्या आती पारसी भाषा।
अशुद्ध होइले ताके दोषये राजाए।।	अशुद्ध होने पर टोकते रहते सुधारने में।।

(1) कारसाजि – कौशल, चतुरता।
(2) जिद्धबंत – जिद्दी, एक रूख वाला।

चल–42

मुरछिदिया गीत(1) राजा सुस्वरे बोलितो।	मुरछिदिया गीत(1) राजा सुस्वर से कहते।
भाबेत आवेश मंगल(2) रोदन कोरितो।।	भावावेश में मुगल(2) तब रोने लगते।।
इन्द्रमाणिक्य चारि बत्सर राजत्व कोरिलो।	इन्द्रमाणिक्य ने चार साल किया राजत्व।
अकस्मात् पीड़ित होइया गंगाप्राप्ति होइलो।।	पीड़ित हो अक्समात्, गंगाप्राप्ति हुई उनकी ।।
कृष्णमणि युवराज हेडेम्बेर देशे।	कृष्णमणि युवराज थे हिडिम्ब के देश।
इन्द्रमाणिक्य मृत्यु पत्र पायेत बिदेशे।।	इन्द्रमाणिक्य का मृत्युपत्र मिला उन्हें विदेश।।
रानी दुर्गा पतिब्रता निःसंतान तरे।	रानी दुर्गा पतिव्रता थी निःसंतान।
इन्द्रमाणिक्य श्राद्ध हेडम्बेते कोरे।।	इन्द्रमाणिक्य का श्राद्ध किया हेडम्ब स्थान।।
इन्द्रमाणिक्य राजार काल प्राप्ति होये।	इन्द्रमाणिक्य राजा का जब अंतकाल हुआ।
पुनरपि जय माणिक्य दरखास्त करये।।	पुनः जय माणिक्य ने दरखास्त तब दिया।।
सनद पाइया राजा होइलो हरषित।	सनद पाकर राजा हुए हरषित।
मंत्री संगे उदयपुर आसिलो त्वरित।।	मंत्री संग उदयपुर आ गये त्वरित।।
मुरारी ठाकुर पत्नी सेई होइयाछे मरण।	मुरारी ठाकुर की पत्नी का हुआ देहांत।
राज ज्ञाति पत्नी सेई अशौच तखन।।	राज ज्ञाति पत्नी हुइ अशौच उस क्षण।।
ताहार अशौचअंत जे दिबसे गेलो।	उनके अशौच का अंत हुआ जिस दिन।
सेई दिबसे जयमाणिक्य काल प्राप्ति होइलो।।	जयमाणिक्य की मृत्यु हुई उसी दिन।।
एई मते बिबादेते काल होइलो गत।	इसी तरह विवादों में बीत गया बहुकाल।
जय माणिक्य चारि बत्सर करोए राजत्व।।	जय माणिक्य ने राजत्व किया चार साल।।
ताहान तनय छिलो जयमंगल ठाकुर।	उनके तनय थे जयमंगल ठाकुर।
बिविध बिधाने श्राद्ध कोरिलो बिस्तर।।	विधि विधान से श्राद्ध किया भरपूर।।
जयमंगल ठाकुर राजार संतान।	जयमंगल ठाकुर थे राजा की संतान।
बिधिर निर्बन्ध पुत्र ना होये ताहान।।	विधि का निर्बन्ध, न हुई कोई पुत्र संतान।।
जय, इन्द्र माणिक्य ए दुई राजन।	जय, इन्द्र माणिक्य ये थे दोनों राजन।
दुयेर विवाद उदयमाणिक्य कथन।।	विवाद दोनों का है यह उदयमाणिक्य कथन।।
संक्षेपे कहिलो तिन राजत्व काहिनी।	कहा संक्षेप तीन राज्य की कहानी।
विस्तारि कोहिते श्रोता श्रद्धा नहे पुनि।।	सविस्तार कहते श्रोता श्रृद्धा नहीं, की अनसुनी।।
एई सब प्रसंग शुनए नृपमणि।	ये सभी प्रसंग सुने नृपमणि।
उजीरे कोहेन सब देखिया आपनि।।	कहा वजीर ने ये सारी कहानी।।
इति राज खण्ड तत्वे	इति राज खण्ड तत्व में
इन्द्र, जय, उदयमाणिक्य प्रसंग	इन्द्र, जय, उदयमाणिक्य प्रसंग
समाप्त।	समाप्त।

---

(1) मूरछिदिया गीत – मुरसेदिया अर्थात परमार्थ विषयक संगीत।
(2) मंगल – बंगला में मुगल को वजीर ने मंगल कहा है। यह प्रयोग उनका अपना है।

चल–43

विजय माणिक्य(द्वितीय) खण्ड

इन्द्र, जयमाणिक्य राजत्व समापन।
विजयमाणिक्य भूप कहिबो कथन।।
जयमाणिक्य राजार होइलो मरण।
राजार मृत्यु नबाब शुनिलो तखन।।
त्रिपुरार राज्याधिप नाहि कोनो जन।
हाजी होसन दरखास्त नबाब सदन।।
त्रिपुरार जमिदारी वयादादर(1) होइलो।
भुलुआ आदि वयादा(2) हाजीये लोइलो।।
तार प्रस्ते रोशनाबाद दिलेक तशील।
राज्येर प्रजार कर आपने शासिलो।।
जयमाणिक्येर भ्राता हाड़िधन नाम।
हाजी होसनेर संगे कोरिलो संधान।।
त्रिपुरार जमींदारी हाजी वयादा थाके।
त्रिपुरार राज्याधिप कोरे हाड़िधनके।।
खेदा कोरिया हस्ती हुजूरे राजा दिबे।
बत्सरेत बारो हाजार मसरा(3) पाइबे।।
राजत्वेर जमिदारी वयादाते थाकिबो।
राज्येते दखल राजार किछु ना रहिबो।।
त्रिपुरार राजा मात्र खेदार कारण।
एई मते हाजी बोले नवाब सदन।।
ए सब शुनिया नवाब अनुमति दिलो।
हाड़िधन राजा होइते परोयाना पाइलो।।
विजयमाणिक्य नाम तान होलो ख्याति।
मसाहेरा पाइया हूजुरे दिबो हाती।।

विजय माणिक्य(द्वितीय) खण्ड

इन्द्र, जयमाणिक्य राजत्व समापन।
विजयमाणिक्य भूप का अब होगा कथन।।
जयमाणिक्य राजा का हो गया मरण।
राजा की मृत्यु सुना नवाब ने तक्षण।।
त्रिपुरा का राज्याधिप नहीं कोई इस क्षण।
हाजी हुसैन ने दरखास्त किया नवाब सदन।।
त्रिपुरा की जमीदारी का हुआ बन्दोबस्ती ग्रहण।(1)
भुलुआ आदि का बन्दोबस्त(2) लिया हुसैन।।
रोशनाबाद तहसील दिया उसके प्रस्ताव पर।
अपने जिम्में ले लिया राज्य प्रजा कर।।
जयमाणिक्य के भ्राता हाड़िधन था नाम।
हाजी हुसैन के संग किया संधान।।
त्रिपुरा की जमींदारी रही हाजी के नाम।
त्रिपुरा का राजा किया हाड़िधन को उसने।।
देगें हुजूर को हस्ती राजा खेदा कर।
वृत्ति(3) उन्हें साल में मिलेगी बारह हजार।।
राजत्व की जमीदारी रहेगी बन्दोबस्त पर।
राजत्व में दखल राजा को न होगा कहीं पर।।
त्रिपुरा के राजा केवल हस्ती खेदा के कारण।
इस तरह हाजी ने कहा नवाब के सदन।।
यह सब सुन नवाब ने दी सहमति।
हाड़िधन को राजा होने की मिली अनुमति।।
विजयमाणिक्य के नाम उनकी हुई ख्याति।
मासिक वृत्ति मिलते ही दूगाँ हूजुर को हाथी।।

---

(1) बयादादार – बन्दोबस्त ग्रहीता।
(2) बयादा – बन्दोबस्त।
(3) मसरा – मासिक वृत्ति।

चल–44

माहाम्मदजंगेर परोयाना लोइया।	मुहम्मद जंग का परवाना लेकर।
ढाका हने हाड़िधन ठाकुर आसिया।।	ढाका आये हाड़िधन ठाकुर ।।
बिजयमाणिक्य नामे बोसे सिंहासन।	विजयमाणिक्य नाम से बैठे वे सिंहासन।
सुनन्दा नामेते रानी ख्याति सेई क्षण।।	सुनन्दा नाम की रानी उनकी थी उस क्षण।।
त्रिपुरार लोक दिया खेदा कोरिबारे।	त्रिपुरा के लोगों से चाहे करना खेदा।
ना मिले त्रिपुरा सब कि कोरिते पारे।।	नहीं मिला त्रिपुरा का, क्या करे कोई,।।
माघ मासे गंगा पूजा बार्षिक कोरिलो।	माघ महीने में किया वार्षिक गंगा पूजन।
हस्ती खेदा कोरिया जे दिते ना पारिलो।।	हस्तीखेदा करके भी न दे सका वहाँ राजा।।
मने मने चिन्ते राजा कि होबे उपाय।	मन मन में सोचे राजा क्या होगा उपाय।
त्रिपुरासुन्दरी(1) राजार ना होइलो सहाय।।	त्रिपुरा सुन्दरी(1)राजा की नहीं हुई सहाय।।
राजा हइया छय मास उदयपुरे छिलो।	राजा होकर छह महीने रहे उदयपुर।
हूजुरेर हस्ती जन्ये तागादा कोरिलो।।	हस्ती हित तागादा किया हुजूर।।
तखने सागर गाजी(2) बिपक्ष अशेष।	समसेर गाजी(2) उस समय था विपक्ष।
हाजी होसन स्थाने कहे कपाट विशेष।।	जाकर कहा कपटबातों को हाजी के समक्ष।।
हस्ती आमि धरि दिबो बिना मसराते।	हस्ती मैं पकड़ दूँगा बिना लिये माहवार।
रोशनाबाद कर दिबो ताहूतेर मते।।	दूँगा कर रोशनाबाद का जैसे हो उपहार।।
ए सब वृत्तान्त नवाब शुनिलो जखन।	यह सब वृतांत जब नवाब ने सुना।
विजयमाणिक्य ढाका निलो सेई क्षण।।	विजयमाणिक्य से ढाका लिया उसी क्षण।।
पूर्बकुल राखिया जे परिबारगण।	पूर्वकुल में रखकर सभी परिवार गण।
रिहांग पाड़ा युबराज आसिलो तखन।।	रिहांगपाडा युवराज आए तक्षण।।
दूतमुखे समसर शुनिया खबर।	दूत मुँह से समसेर ने जब सुनी खबर।
युबराज संगे युद्ध लोइया लस्कर।।	युवराज साथ युद्ध करे लेकर लस्कर।।
रिहांगपाड़ाते युद्ध तखन कोरिलो।	रिहांगपाडा में युद्ध हुआ उनके साथ।
कृष्णमणि युबराज गेलो पूर्बकुल।।	गए पूर्बकुल कृष्णमणि युवराज।।
गाजी चाहे त्रिपुरा दिया खेदा जे कोरिते।	गाजी की चाह, त्रिपुरिओं को करने को खेदा।
राजा बिने त्रिपुरादि ना मिले ताहाते।।	बिन राजा के सबने कर दिया अनदेखा।।
त्रिपुरा मिलान हेतु करये संगति।	त्रिपुरिओं को मिलाने हेतु किया विचार।
धर्ममाणिक्येर पौत्र करिते नृपति।।	नृप रखा, धर्ममाणिक्य के पौत्र को, इस बार।।

(1) त्रिपुर सुन्दरी – त्रिपुरा की अधिष्ठात्री पीठ देवी।
(2) समसेर गाजी का संक्षिप्त विवरण आने वाले मध्यमणि में दिया जायेगा।

चल–45

बनमाली ठाकुर से उदयपुरे छिलो।	बनमाली ठाकुर था उदयपुर।
राजा कोरिबारे गाजी ताहारे आनिलो।।	नृप करने गाजी उसे लाया बुलाकर।।
रिहांगपाड़ाते ताके बोसाइया आसने।	रिहांगपाड़ा उसे बैठाया आसन पर।
लक्षण माणिक्य नाम कोरे सेई क्षणे।।	लक्षण माणिक्य नाम रखा उस अवसर।।
राजाख्याति कोरि ताके लोकेते जानाये।	राजा की ख्याति देकर प्रजा को दिया बताय।
तथापिह ना मिले त्रिपुर समुदाये।।	फिर भी न मिला कोई त्रिपुर समुदाय।।
ना आसिलो त्रिपुर लोक तखने जानिया।	न आया कोई त्रिपुर यह जानकर।
खेदा कोरे समसर बांगाल लोक दिया।।	खेदा करें समसेर बंगालियों को लेकर।।
हस्ती धरिया से जे हूजुरे पाठाये।	हस्ती पकड़ वे भेजते हुजुर के बहाँ।
गाजी पोइक्ष होइया हाजी होसेने बुझाय।।	गाजी पक्ष के है, हाजी हुसैन समझाये वहाँ।।
हाजीहने गाजी राज्य कोरिलो ताहुत।	हाजी को गाजी राज्य ने किया है ताहुत।
कर देहे(1) हुजुरेर जे मत ताहुत।।	कर(1) देगें हुजूर को, जैसा है ताहुत।।
कृष्णमणि युवराज पूर्बकुल शुने।	कृष्णमणि युवराज ने पूर्वकुल में सुना।
समसर राजा कोरे रिहांगे तखने।।	समसेर ने रिहांग में है राजा चुना।।
गोबर्द्धन बनमाली प्रधान जतो इति।	गोवर्द्धन बनमाली प्रधान थे जितने वहाँ।
युबराज पत्र लिखे ताहार जे प्रति।।	युवराज ने पत्र लिखा उन सभी के यहाँ।।
रिहांगपाड़ाते गाजीर जतो सैन्य गण।	रिहांगपाड़ा गाजी की थी जितनी सेना।
युद्ध कोरि निकालिया(2) दिबे तत्क्षण।।	युद्ध कर उन्हे तक्षण है निकाल देना(2)।।
सेई पत्र पाइया त्रिपुराबर्ग जतो।	पत्र पाकर वहाँ त्रिपुरावर्ग थे जितने।
युद्ध कोरिबारे तारा होइलो प्रवर्त्त।।	युद्ध करने के लिए स्वीकृति दी सबने।।
समसर संगे युद्ध होइलो विहित।	समसेर के साथ युद्ध हुआ यथावत।
युद्धे पराभब सैन्य चलिलो त्वरित।।	युद्ध पराभूत सेना चली त्वरित।।
रिहांग हने लक्ष्मण माणिक्य राजन।	रिहांग में थे लक्ष्मण माणिक्य राजन।
स्वर्णग्रामे कोतो दिन आछिलो तखन(3)।।	स्वर्णग्राम में जाकर रहे वे कुछ दिन।।(3)
ए मत प्रकारे राज्य साधये तस्कर।	इसी तरह राज्य शासन करते थे तस्कर।
राज्येते प्रजार थाका होइलो दुष्कर।।	राज्य में प्रजा का रहना हो गया दुष्कर।।

(1) देहे – देता है।

(2) निकालिया – निकाल देना।

(3) लक्ष्मण माणिक्य सुवर्णग्राम में जाकर जहाँ रहते थे, उसे अब भी राजबाड़ी अर्थात राज महल के नाम से सम्बोधन किया जाता है।

ताहुत – बन्दोबस्त के अनुसार निर्धारित राजस्व।

चल–46

विजयमाणिक्य ढाका काल प्राप्ति होइलो।
राजपुत्र रामचन्द्रे श्राद्धादि कोरिलो।।
तान परिजन सब ढाकाए रहिलो।
राजधानी राजअंशी केहो नाहि छिलो।।
एई मते बारह बत्सर राज्य शासिलो।
मामुदजंग समसरेर दुष्टता शुनिलो।।
बिधिर निर्बिन्ध कार्य ना खण्डे कोन मते।
गाजी के धोरियानिल मुर्शुदाबादेते।।
नवाब साक्षाते निया दिलो जेई क्षण।
कारागारे बन्दी राखे निगड़ बन्धन।।
दुष्टता जानिया ताके साबधाने राखे।
तोपेते उडाये गाजी सर्बलोके देखे।।
विजय, लक्ष्मण माणिक्य एई दुई राजन।
समसरेर प्रसंग होइलो समाधान।।
यदबधि हाजी राज्य कोरिलो दखल।
हस्ती–कर उठि गेले टाका–कर होइलो।।
राजधानी राजा नाहि आछिलो तखने।
जयदेव उजीर कहे नृप विद्‌यमाने।।

इति राज खण्ड तत्वे
बिजय, लक्ष्मण माणिक्य कथनम्
समाप्तम्।

———

कृष्णमाणिक्य खण्ड

उजीर बोले बिजयमाणिक्य अभ्यंतरे।
कृष्णमाणिक्य महाराजा होइले तार पोरे।।
तान कीर्ति, राजधर माणिक्य आदेशे।
जयंत चन्ताई पूर्बे बोलिछे विशेषे।।
कृष्णमाला नाम पुस्तक बिस्तार काहिनी।
रामगंगा विशारद रचिलो तखनि।।(1)

विजयमाणिक्य ढाका में गये स्वर्गसिधार।
राजपुत्र रामचन्द्र श्राद्धादि दिये नियमानुसार।।
ढाका में रह गये सभी परिजन।
राजधानी में राजअंश न था कोई उस क्षण।।
इसी तरह राज्य शासन किया बारह साल।
महमूदजंग ने समसेर की दुष्टता सुनी उस काल।।
विधि का निर्बन्ध कर्मगति का नहीं हो खण्डन।
गाजी को लाया पकड़ कर मुर्शिदाबाद उस क्षण।।
नवाब के यहाँ जब गये उसे लेकर।
बन्दी बना रखा उसे कारागार के अन्दर।।
दुष्ट जान उसे सावधानी से रखा।
तोप से उडाया गाजी को सभी ने देखा।।
विजय, लक्ष्मण माणिक्य ये थे दोनों राजन।
समसेर प्रसंग का हुआ समाधान।।
जब से हाजी ने राज्य दखल किया।
उठ गया हस्ती–कर, रूपया–कर हुआ।।
राजधानी में राजा नहीं था कोई उस क्षण।
जयदेव वजीर ने कहा, नृप के सामने।।

इति राज खण्ड तत्व में
विजय, लक्ष्मण माणिक्य कथन
समाप्त।

———

कृष्णमाणिक्य खण्ड

कहा वजीर ने विजयमाणिक्य के पश्चात।
कृष्णमाणिक्य हुए उसके बाद महाराजा।।
उनकी कीर्ति, राजधर माणिक्य के आदेश पर।
जयंत चंताई ने पहले कहा है सविस्तार।।
कृष्णमाला ग्रंथ में उनकी कहानी का विस्तार।
रामगंगा विशारद ने रचना की है उसकी।।(1)

---

(1) "कृष्णमाला" एक विशाल ग्रंथ है। जिसमें महाराज कृष्णमाणिक्य का विस्तृत विवरण लिखा गया है। हम कृष्णमाणिक्य प्रसंग में इस ग्रंथ की सहायता लेगें।

चल–47

राजमाला मध्यावृत कृष्णमाला होये।	राजामाला का मध्यावृत्त है कृष्णमाला।
बिस्तार देखिया लोक शुनिते संशये।।	सुनने में संशय, देख ग्रंथ विशाला।।
अतःपर कृष्णमाला स्वतंत्र रहिलो।	इसके पश्चात कृष्णमाला रह गया स्वतंत्र।
कृष्णमाणिक्येर कीर्ति विस्तार कोहिलो।।	कृष्णमाणिक्य की कीर्ति का कहा पूरा वृतांत।।
पूर्ब राज श्रेणी कृष्ण माणिक्य कोहिबो।	पूर्व राजश्रेणी कृष्ण माणिक्य का है कहना।
संक्षेपे बोलिबो राज्य जे मते पाइबो।।	कहना है संक्षिप्त में राज्य किस तरह पाया।।
राज्य छाड़ा युबराज रहे पूर्बकुल।	राज्य छोड़ युवराज रहे पूर्वकुल।
सीता हारा रामचन्द्र बनेते ब्याकुल।।	जैसे सीता विहीन राम थे वन में व्याकुल।।
हेड़म्बेर राज्ये थाकि भाबे मने मन।	सोचते थे मन में हेडम्ब राज्य में।
पैतृक जे राज्य गेलो पाइबो केमन ।।	मिले किस तरह खोया पितृ राज्य मुझे।।
हेडम्बेर राजा छिलो रामचन्द्र नाम।	हेडम्ब के राजा थे रामचन्द्र नाम।
ताहा स्थाने भगिनी बिभा(1) विधि अनुपाम।।	उनके यहाँ भगिनी विवाह हुआ शुभ काम।।
हरिमणि ठाकुरेर पुत्र जे जन्मिलो।	हरिमणि ठाकुर के घर पुत्र का जन्म हुआ।
कंठमणि नाम पुत्र ताहार राखिलो।।	कंठमणि नाम तब उसका रखा गया

---

(1) इस बारे में कृष्ण माला ग्रंथ में लिखा गया है।–

"गौरी प्रसाद कबरार कन्या सुरधुनी।
संगमा नामेते युवराजेर भागिनी।।
कन्या रूप गुण सुनि हेडम्बेर नाथ।
कोरित विवाह यत्न कोरिलो तथात।।
बहु यत्ने युवराज दिलो अनुमति।
विया कोइलो कुमारी के हिडिम्बेरपति।।
कृष्णमाला।

अर्थात, "गौरी प्रसाद कबरा की सुरधुनी थी। संगमा नाम की युवराज की एक भागिनी थी। क्या रूप क्या गुण सब में श्रेष्ठ थी और उसकी प्रंशसा सुन हेडम्ब राज ने उसके साथ विवाह करने की इच्छा व्यक्त की। बहुत प्रयास के बाद युवराज ने विवाह की अनुमति और हेडम्ब के अधिपति ने उससे विवाह किया।"

श्रेणी माला ग्रंथ में भी इसका उल्लेख है।

संगमा नामेते कन्या अति सुचरिता।
गौरी प्रसाद कबरार होयेत दुहिता।।
कृष्णमाणिक्य नृपेर छिलेन भागिनी।
रामचन्द्र ध्वज राजार तिनि जे गृहणी।।
हेडम्ब राज्येर तिति छिलेन नृपति।
परिचय जन्में ताहा लिखिलाम ख्याति।। – श्रेणीमाला

अर्थात, " संगमा नाम की एक अति सुचरिता जो गौरी प्रसाद की कन्या थी और कृष्णमाणिक्य की भागिनी होती थी। रामचन्द्र ध्वज जो हेडम्ब के राजा थे, उनकी गृहणी थी। केवल परिचय प्रदान करने के लिए ही उनकी ख्याति की यह चर्चा की गई है।

चल–48

हेडम्बेर संगे बिबाद जन्मिलो तखन(1)।
समये बिरोध हेनो बुझिया राजन।।
हेडम्ब छाड़ि युबराज गेलो पुर्बकुल।
खुछंग कुकीर संगे युद्ध जे बहुल।।
विष तीराघाते तखन होइलो मूर्च्छामान।
पुण्यबले युबराजेर रहिलो जीबन।।
हालियाकान्दि ग्रामेते कोतो दिन छिलो।
ताहाते हेडम्ब संगे बिबाद जन्मिलो।।
चाथेंग नदीर पूर्बकुल आसिलो जखन।
हेडम्ब खुछंग युद्धे उद्योग कोरेन।।
खुछंग मारिते गेलो कबरा गोबर्द्धन।
खुछंग जिनिया जय पाइलो तखन।।
तथा होते चराईबाड़ी मनु नदी तटे।
युबराज भ्राता हरिमणिर सहिते।।
पूर्ब राजधर माणिक्य पाट सेई स्थान।
नदीर नाम राजधर(2) एईतो कारण।।
से पर्बतेर नाम राजधर मुड़ा बोले।
पर्बत नदीर नाम राजधर छिले।।
तोमा पिता सेई स्थाने जन्म ए कारण।
राजधर ठाकुर नाम राखिलो तखन।।(3)

हेडम्ब के साथ तब जन्मा विवाद।(1)।
राजा ने समझा, समय पर विरोध।
हेडम्ब छोड़ राजा गये पूर्वकुल।
खुछंग कुकी के साथ युद्ध हुआ बहुल।।
विष तीराघात से हो गये मूर्छित।
पुण्यबल से युवराज रह गये जीवित।।
रहे कुछ दिन हालियाकान्दि ग्राम।
इससे हेडम्ब साथ हुआ विवाद का जन्म।।
चाथेंग नदी के पूर्व किनारे आये जिस क्षण।
हेडम्ब खुछंग युद्ध का किया आयोजन।।
खुछंग को मारने गया कबरा गोबर्द्धन।
खुछंग विजयी हो गया उस क्षण।।
वहाँ से चराईबाड़ी मनु नदी के तट पर।
युवराज भ्राता हरिमणि को साथ लेकर।।
पूर्व राजधर माणिक्य का पाट था वह स्थान।
नदी का नाम राजधर(2) हुआ इस कारण।।
उस पर्वत को राजधर मुड़ा है कहते।
पर्वत नदी का नाम राजधर हुआ।।
तुम्हारे पिता का जन्म हुआ उस स्थान।
राजधर ठाकुर नाम रखा उस क्षण।।(3)

---

(1) इस विवाद का विवरण मध्यमणि में दिया जायेगा।

(2) राजधर छड़ा (बहता नाला या छोटी नदी) का नाम परिवर्तित होते होते राताछड़ा हो गया, यह पहले भी कहा जा चुका है। इसकी एक शाखा को अब भी राजधर छड़ा कहा जाता है। उसके नजदीक और एक सोते का नाम "माणिक्यधर छडा" है। यह नाम राजा के नामानुसार हुआ है। माणिक्य शब्द से ही अनुमान होता है, किन्तु त्रिपुरा के किसी राजा का नाम "माणिक्यधर" नहीं था। इस नाम की आलोचना करने पर लगता है "माणिक्य" उपाधि के साथ "राजधर" नाम के शेषांश के संयोग से इस सोते का नाम "माणिक्यधर" हुआ है।

(3) यह उक्ति भ्रमपूर्व है। यहाँ पर राजधर माणिक्य जन्म नहीं हुआ है। वे यहाँ पर राज्यभिषिक्त हुए थे – इसलिए इसे राजधर या वर्तमान में राताछड़ा कहा जाता है और पर्वत का नाम राजधर मुड़ा रखा है। (राजमाला के तृतीय लहर 49पृ और 194पृ में इसका उल्लेख है।) इसकी पहली पंक्तियों की आलोचना करने से भ्रम दूर जायेगा।

चल–49

तथा थाकि युबराज भाविया अंतर।
हेड़म्ब युद्धेते सैन्य पाठाये सत्वर।।
बलभद्र नारायण ठाकुर चलिलो।
युद्धे भंग हेड़म्ब नृप, राज्य छाड़ि गेलो।।
बलभद्र सैन्य समे लिखे असिवार।
राज्य लोभेते तारा ना आइसे पुनर्बार।।
विधि नियोजित कर्म राखन ना जाये।
कुमंत्रणाये हेडम्ब मारिले समुदाये।।
नबाब साक्षात भाग्यवंत हाड़िधन।
मुर्शुदाबादेत गेलो सनद कारण।।
तार पोरे आसिलेन बटतलि स्थाने।
उजीर नाजिर त्रिपुरा मिलिलो तखने।।
तथाये जे युबराज सुस्वप्न देखिलो।
मातृ रूपा होइया काली तखने बोलिलो।।
राज्येर उद्योग तुमि करह त्वरित।
युद्ध कोरि लव राज्य होइबो बिहित।।
सेई स्थान होते पोरे मनतला आसिलो।
राज्येर प्रधान प्रजा सकल मिलिलो।।
एगार श उनसत्तर सनेते त्रिपुर।
तखने आसिलो खिलात सनद हुजुर।।
उजीर बोले आमा कथा होइलो उपस्थित।
प्रसंगेते ना बोलिले ना होय बिहित।।
गोबर्द्धन कबरा अभिमुन्य नाजिर।
लुचिदर्प नारायण उत्तर सिंह उजीर।।
आछुमणि सूबा चूड़ामणि कारकोन।
भद्रमणि देवान और रण मर्दन।।
मणि चन्द्र नाजिर लाल ठाकुर खोसाल।
बनमाली कारकोन बिक्रमे विशाल।।
मायाराम छदियाल बिक्रमेते गेलो।
गोपाल सिंह हाजारी रणे चले भालो।।

वहाँ रहकर युवराज ने सोचा निज अंतर।
हेड़म्ब के युद्ध में सेना भेजा सत्वर।।
चले बलभद्र ठाकुर नारायण।
युद्ध भंग कर हेड़म्ब नृप ने किया पलायन।।
लिखा बलभद्र को सेना साथ लौटने।
राज्य लोभ वश न लौटना चाहा उन्होंने।।
विधि नियोजित कर्म न टाला न जाता कहीं।
कुमंत्रणा से हेडम्ब को मार डाला वहीं।।
नवाब के यहाँ गये भाग्यवंत हाड़िधन।
गये मुर्शिदाबाद सनद के कारण।।
उसके बाद आये बटतलि स्थान पर।
मिले तभी वजीर, नाजिर और त्रिपुर।।
वहाँ युवराज ने देखा सुस्वप्न।
मातृ रूपा काली ने कहा हो सुप्रसन्न।।
राज्य का उद्योग तुम करो त्वरित।
युद्ध कर लेना राज्य होगा विहित।।
वहाँ से होकर वे मनतला आये।
राज्य के प्रधान प्रजादि सबसे मिल पाये।।
ग्यारह सौ उन्हतर त्रिपुर सन् में।
तभी आई हुजुर की खिलात सनद सामने।।
वजीर ने कहा हमारी बात हो गई उपस्थित।
ससन्दर्भ न कहने से होता नहीं उचित।।
गोबर्द्धन कबरा अभिमन्यु नाजिर।
लुचिदर्प नारायण उत्तर सिंह वजीर।।
आछुमणि सूबेदार चूड़ामणि कारकोन।
भद्रमणि दीवान और रण मर्दन।।
मणि चन्द्र नाजिर ठाकुर खोसाल।
बनमाली कारकोन बिक्रमें विशाल।।
सविक्रम गये मायाराम छदियाल।
गोपाल सिंह हजारी रण में चले उत्ताल।।

चल–50

केशरी सिंह जमादार सिंहेर बिक्रम।
रण पाइले तारा सब करये आक्रम।।
हरनाथ हाजारी हाराधन लस्कर।
आमा सब पाठाइलो लोइते राज कर।।
आब्दुल रजक(1) नाम छिलो एक जन।
मेहार कुल राज्य जतो कोरये शासन।।
लुचिदर्प संगे युद्ध होइलो बिस्तर।
कुमिल्ला छाड़िया आब्दुल गेलो तत्पर।।
जमिदारी परगना आमल होइलो।
कसबाते युबराज तखने आसिलो।।
त्रिपुरा प्रधानमंत्री आछिलेक जतो।
परगनाते एकजना शासन कोरितो।।
एई प्रकरणे राज्य शासित जखन।
कसबाते युबराज बोइसे सिंहासन।।
आश्विन मासे दुर्गोत्सव दशमीर दिने।
त्रिपुरा एगारशत सत्तैरेर सने।।
कृष्णमाणिक्य राजख्याति होइलो तखन।
कृष्ण नामे उपासना छिलेक राजन।।
कृष्णमाणिक्य राजा जान्हबा छिलो रानी।
राजा रानी नामे सिक्का प्रचार तखनि।।
हरिमणि ठाकुर अनुज राजार।
युबराज कोरिलेन राज्ये आपनार।।
गदाधर बडठाकुर तान दुई पुत्र।
बनमाली बीरमणि अति सुचरित्र।।
शिब भक्ति नारायण चंताई प्रधान।
देबार्चन बिधिमत छिलो ज्ञानबान।।
बीरमणि बड़ठाकुर कोरिलो राजन।
पात्र मंत्री नियोजिलो राज्येर शासन।।

केशरी सिंह जमादार का था सिंह विक्रम।
रण होते ही वे सभी करते आक्रमण।।
हरनाथ हाजारी हराधान लस्कर।
मुझे सभी भेजें राजकर।।
अब्दुल रजक(1) था एक नाम जन।
मेहेरकुल राज्यों पर करता था शासन।।
लुचिदर्प के साथ युद्ध हुआ भयंकर।
कुमिल्ला छोड़ अब्दुल गया तत्पर।।
जमीदारी परगना पर हुआ अमल।
कस्बा में युवराज आये उस काल।।
जितने प्रधानमंत्री थे त्रिपुरा के।
शासक था एक ही उस परगना के।।
इस प्रकरण राज्य शासित था जब।
कस्बा के सिंहासन बैठे युवराज तब।।
आश्विन महीना दुर्गोत्सव दशमी के दिन।
त्रिपुरा का ग्यारह सौ सत्तर था सन्।।
कृष्णमाणिक्य राज ख्याति हुई उस क्षण।
कृष्ण नाम से उपासना करते थे राजन।।
कृष्णमाणिक्य राजा जान्हबा थी रानी।
राजा रानी नाम से मुद्रा चली अपनी।।
हरिमणि ठाकुर अनुज राजा के।
युवराज किया राज्य में उन्हें लाकर।।
गदाधर बड़े ठाकुर के थे दो पुत्र।
वनमाली वीरमणि अति सुचरित्र।।
शिव भक्ति नारायण चंताई प्रधान।
देवार्चन में विधिवत थे ज्ञानवान।।
वीरमणि को बड़े ठाकुर किया राजन।
पात्र मंत्री नियुक्त किया राज्य के शासन।।

---

(1) आब्दुल रजक –ये समसेर गाजी के अनुचर और सम्पर्कसूत्र थे।

प्रल – 51

सैन्य समे मिर आजिज कुमिल्ला आसिलो।
आमा संगे सेई जन युद्ध आरंभिलो।।
बहु युद्ध होइया सैन्य पड़िलेक रण।
तार पुत्र मिर इछब होइलो निधन।।
रण भंग दिया से जे कोरिलो पयाण।
तार पोरे रामशंकर आसिलो देवान।।
चाटिग्राम होते बहु सैन्य जे लोइया।
नुरनगर आसिलेक युद्ध आकांक्षिया।।
तार संगे रणेते पराजय पाइलो।
कसबा होते महाराजा भादुघरे गेलो।।
कोतो दिन पोरे सैन्य फिरिया जे जाये।
महाराज कसबाते आसिलो त्वराये।।
मारिअट्(1) साहेब आसिलो एकजन।
तार संगे युबराज कुमिल्ला गमन।।
युबराज संगे रानी ना आइसे तखन।
मनु नदी होइते रानी आइसे शुभ क्षण।।
एगार श सत्तैर सन होयेत जखन।
आगरतला राजधानी कोरिलो राजन।।
परे इन्द्रमाणिक्य रानी होइछे मरण।
महाराजा तान श्राद्ध करये आपन।।
हारबिलिस(2) साहेब बहु सैन्य लोइया।
चाटिग्राम होते नुरनगर आसिया।।
काछाड़ादि राज्य होइया मणिपुर पथे।
ब्रह्मा राज्य मारिबार चलिलो त्वरिते।।
लुचिदर्प नारायण आमार सहिते।
हेडम्बेते आगु होइया गियाछि युद्धेते।।
काछाड़ होते सैन्य सब फिरिया आसिलो।
एंगराज(3) कुठि आदि बृंदाबन लुटिलो।।

सेना साथ मीर आजिज कुमिल्ला आया।
मेरे साथ उसने युद्ध शुरू किया।।
सेना पड़ी खेत हुआ तुमुल रण।
उसका पुत्र मीर इछव, हो गया निधन।।
रण भंग देकर उसने किया पलायन।
तत्पश्चात आये रामशंकर दीवान।।
चट्ट गाँव से आया वह भारी सेना लेकर।
युद्धाकांक्षा से प्ररित होकर आया नूरनगर।।
उसके साथ रण में हुआ पराजय।
कसबा से महाराज भादुघर पँहुचे आज।।
सेना गई लौट कुछ दिन पश्चात्।
कसबा में जल्द लौट आये महाराज।।
मारियट(1) नाम का आया एक साहब।
उसके साथ कुमिल्ला आये महाराज आप।।
युवराज के साथ रानी नहीं आई उस क्षण।
मनु नदी से आई रानी देख शुभ दिन।।
ग्यारह सौ सत्तर हुआ आया जब सन्।
आगरतला में राजधानी किया स्थापन।।
इन्द्रमाणिक्य की रानी गई परलोक।
राजा ने श्राद्ध किया मन में बड़ा शोक।।
हारबिलिस(2) आया फौज लेकर।
चट्ट गाँव से आ पँहुचा तुरन्त नूर नगर।।
काछाड़ आदि राज्य होकर मणिपुर के पथ पर।
ब्रह्मा राज्य जीतने चला तत्पर होकर।।
मेरे साथ चले लुचिदर्प नारायण।
हेडम्ब गये आगे बढकर करने रण।।
काछाड़ से सारी सेना आ गई लौट।
अंग्रेजो(3) की कोठिओं को लिया बृंदाबन ने लूट।।

---

(1) **Mr. Marriott**
(2) **Mr. Harry Varlest**
(3) एंगराज – अंग्रेज।

चल–52

नुरनगर होइया सैन्य नौका पथे गेलो।
ढाका होते बृंदाबन देवान खेदाइलो।।
कालिकागंजे दुई दीघि खनिलो राजन।
राजा रानी उत्सर्गिलो इष्टे समर्पण।।
एगार श पाँच सत्तैर सनेर जे माझे।
फाल्गुनेते प्रतिष्ठा करये महाराजे।।
ब्राह्मण पंडिते दान पाइलो बिहित।
दुःखित कांगाली धन पाये यथोचित।।
तार परे मराम्मत आली आर जन।
सहस्त्राबधि सैन्य संगे कोरिबारे रण।।
आमा संगे युद्धे सैन्य पराजय होइलो।
बीरमणि भद्रमणि हाड़िधन छिलो।।
तारा तिन जन बन्दी कोरिया जतन।
मुर्शुदाबादेते निलो तारा तिन जन।।
मयूर(1) नाम साहेब आसिलो राज्येते।
आछुमणि सुबा ढाका नियाछे पश्चाते।।
आमा संगे युद्ध छिलो बलराम राजार।
भंग दिया गेलो सैन्य रणेर माझार।।
तिन छड़ा पुष्प खिलात उजिरि आमाके।
बीरमणि नाइब उजीर कोरिलो ताहाके।।
चूड़ामणि सूत हीरामणि करोकन।
मक्षम लाल राम केशब नाइब दुजन।।
पद्मनाभ देवान जे आर पंचानन।
सूरमणि देवान जे निजेर तखन।।
नवाबेर आर सैन्य आइसे शुनिया।
महाराजा मुर्शुदाबाद गेलेन्त चलिया।।
एगार श छय सत्तैर सन पौष मास होय।
कलिकाता गेलो राजा मने वांछा जय।।

गई सेना नौका से नूरनगर होकर।
वृन्दावन दीवान ने खदेड़ा ढाका नगर से।।
कालियागंज में दो तालाब खनाया राजन।।
राजा रानी ने मिलकर किया ईष्ट समर्पण।।
ग्यारह सौ पचहत्तर सन् के माह बीच फागुन में।
प्रतिष्ठा की महाराजा ने ।।
ब्राह्मण पंडितो को दान मिला बहुत।
दुःखी कांगाली को भी धन मिला यथोचित।।
इसके बाद आए मराम्मत आली और कुछ जन।
हजारों सेना लेकर आये करने रण।।
पराजित हुआ मेरे साथ करके वह रण।
वीरमणि भद्रमणि और थे हाड़िधन।।
उन तीनों को बन्दी बनाया सयतन।
मुर्शिदाबाद ले गये तीनों को उस क्षण।।
मयूर(1) नाम एक साहब राज्य में आया।
आछुमणि सुबेदार को पश्चात ढाका ले गया।।
मेरे साथ युद्ध था बलराम राजा से।
बीच रण में भंग देकर सैन्य गई वहाँ से।।
तीन टोकरी फूल व पुरुस्कार वजीरी के नाते।
वीरमणि को नायबवजीर बनाया जाके।।
चूड़ामणि सुत हीरामणि कारकोन।
मक्षम लाल राम केशव नायब थे दो जन।।
पद्मनाभ दीवान हैं और पंचानन।
उस समय अपने ही थे सुरमणि दीवान।।
नवाब की और सेना आई है सुनकर।
महाराजा मुर्शिदाबाद पँहुचे जाकर।।
ग्यारह सौ छिहत्तर का था पौष माह।
कलकत्ता गये राजा मन में अभिलाषा जय।।

---

(1) **Mr. Mayer.**

चल–53

कलिकाता हाड़विलिस साहेब सहिते।	कोलकाता में हाड़विलिस साहब के साथ।
मुर्शुदाबादेत गेलो मन पुलकिते।।	गये मुर्शिदाबाद मन था अति पुलकित।।
नबाब साक्षाते नृप मिलिया तखन।	नवाब के साथ नृप मिले उस क्षण।
पुनः राजत्व सनद पाइलो राजन।।	पुनः राजत्व सनद पाये राजन।।
बीरमणि भागिना लस्कर हाड़िधन।	वीरमणि भानजा लस्कर हाड़िधन।
बन्दिहने भद्रमणि आनिलो तखन।।	बन्दी करने भद्रमणि को आये उस क्षण।।
आछुमणि सूबाके जे राखिछे ढाकाते।	आछुमणि सूबेदार जो रखा है ढाका में।
ढाकाते आसिया राजा छोड़ाये ताहाते।।	ढाका मे आकर उसे छुडाया राजा ने।।
ढाका हने लक्ष्मीपुरा होइया चटिगाँयें।	ढाका से लक्ष्मीपुरा होकर चट्टगाँव में।
चाण्डिल साहेब(1) संगे राजा मिलिलो तथाये।।	सेंडेल साहब से राजा मिले उस गाँव में।।
एगार श सात सत्तैर सन जे कार्तिके।	ग्यारह सौ सतत्तर सन्, कार्तिक महीना जब।
राज्येते आसिल नृप बिहित गतिके।।	राज्य में आये नृप विहित गति से तब।।
जगन्नाथ पुरेते राजा पुरी निर्माइया।	जगन्नाथ पुरी में राजा ने राजपुरी बनाया।
सेई स्थाने पुष्कर्णी एक खनन कोरिया।।	वहीं पर एक तालाब खनन कराया।।
पुरी मध्ये राजारानी बसति कोरये।	पुरी बीच राजा रानी रहने लगे।
चौद्दमादल महोत्सव तथाते जे होये।	चौदहमादल महोत्सव वहाँ होने लगे।
गोसाई महंत जतो बहु दलादल।।	गोसांई महंत आदि जितने वहाँ दल।।
दिबा निशि महोत्सव चौद्दादि मादल।।	दिवारात महोत्सव चौद्दहमादल।।
गणगति भट्टाचार्य आर धर्म रत्तन।	गणगति भट्टाचार्य और धर्म रतन।
कालाचाँद विप्र धरणीधर पंचानन।।	कालाचाँद विप्र धरणीधर पंचानन।।
एई सब विप्रगण राज सभासद।	यही सभी विप्रगण थे राज सभासद।
धर्मशास्त्र आलापन करये प्रमोद।।	धर्मशास्त्र आलापन से करते प्रमोद।।
हरिमणि युबराज होइलो मरण।	हरिमणि युवराज का हुआ मरण।
रानी रत्नमाला देबी सहिते गमन।।	रानी रत्नमाला देवी ने किया सहगमन।।
भाग्यवती नाम रानी पूर्बे मृत्यु जानि।	भाग्यवती नाम रानी ने पहले ही मृत्यु जान जानी।
राजधर माणिक्येर छिलेक जननी।।	राजधर माणिक्य की थी वह जननी।।
कालिकागंजे दुई दीधि कोरिया खनन।	कालिका गंज में दो तालाबों का किया खनन।
पाड़ मध्ये निर्माइलो पंच जे रत्तन।।	तीर पर निर्माण किया पंचरत्न।।

---

(1) **Mr. Sandel.**

चल–54

एगार श आट सत्तैर सनेर समय।	ग्यारह सौ अठत्तर जब था समय।
महारानी जान्हुवाय प्रतिष्ठा करय।।	महारानी जान्हुवा ने प्रतिष्ठा कराया।।
राधामाधव दुई विग्रह कोरिलो यत्तन।	राधा माधव दो विग्रहों का करके जतन।
पंचरत्न निर्माइया कोरेन स्थापन।।	पंचरत्न का निर्माण कर दिया स्थापन।।
सत्ररत्न(1) निर्माइलो जगन्नाथपुरे।	सत्रह रत्न(1) निर्माण किया जगन्नाथपुर में।
जगन्नाथ महाप्रभु स्थापित ऊपरे।।	जगन्नाथ महाप्रभु हुआ स्थापित ऊपर में।।
तुलापुरूष पंचाग्नि(2) जे रजत षोड़श।	तुलापुरूष पंचाग्नि(2) जो रजत था षोड़श।
तुलाये वोइसे राजारानी धर्मेर पुरूष।।(3)	तराजू में बैठे राजारानी धर्म के पुरूष।।(3)
नवद्वीप द्विजगण निमंत्रण जतो।	नवद्वीप के निमंत्रित थे जितने भी द्विज।
रजत तैजष मुद्रा दिलो यथोचित।।	रजत तैजष मुद्रा दिया यथेचित।।
दिगरि(4) कांगाली जतो आसिलो तखन।	बिना निमंत्रित(4) कांगाली जितने आये उस क्षण।
धन पाइया तुष्ट होइया करिलो गमन।।	धन पाकर तुष्ट होकर किया गमन।।
एगार श आटाशि जे सनेर समये।	ग्यारह सौ अठ्ठासी सन के समय।
प्रतिष्ठा करये राजा धर्मेर तनये।।	प्रतिष्ठा किया राजा धर्म का तनय।।
गुरूप्रसाद महाप्रभु भब अवतार।	गुरूप्रसाद महाप्रभु भव अवतार।
ईष्टदेब होये कृष्णमाणिक्य राजार।।	ईष्टदेव हुए कृष्णमाणिक्य राजा के इस बार।।
आनन्दचन्द्र गोस्वामीर चरित्र बैष्णब।	आनन्दचन्द्र गोस्वामी का चरित्र था वैष्णव।
हरिमणि युवराजेर छिलो ईष्टदेब।।	हरिमणि युवराज के थे ईष्टदेव।।
मेहारकुल मिथिला पुरेर एक ग्राम।	मेहेरकुल, मिथिलापुर का एक ग्राम।
महाराजा ईष्ट प्रीते अर्पे सेई धाम।।	ईष्ट हेतु महाराजा ने अर्पण किया वह धाम।।
कालिकागंजेर राधामाधब सेबाते।	कालिकागंज के राधा माधव की सेवा में।
कोतो दूर भूमि दिछे पुष्कर्णी पाड़ेते।।	कुछ दूर की भूमि दी तालाब के किनारे में।।

---

(1) सत्ररत्न – सत्तरह या सप्तदश रत्न।

(2) पंचाग्नि – यह एक कठोर तपस्या है। शास्त्र में उल्लेख है –

"चर्या पंचातपाचिंता शांभवी शांभवो जपः।
यज्ञियैर्दारूभिः शुष्कैश्चतुर्दिक्षु चतुष्कृतम्।।
वन्हि संस्थापनं ग्रीष्मे तीव्रांशुस्तत्र पंचमः।
हस्तांतरे चतुर्ब्बन्हीन् कृत्वा वैश्वानरेष्टिना।।
तन्मध्यस्था सूर्यबिम्बं वीक्षन्ती बहुलांशुका।"

कालिका पुराण 42 अध्याय।

(3) पुरष या पुरस – अग्रे, सामने।

(4) दिगरी (बंगला में) –अनिमंत्रित, रवाहूत।

चल–55

जगन्नाथ महाप्रभु स्थापित जखन।	जगन्नाथ महाप्रभु जब किया स्थापन।
जगन्नाथपुरे भूमि दियाछे राजन।।	जगन्नाथपुर में भूमि दान कर दिये राजन।।
राज जमिदारी मध्ये सनद कोरिया।	राज जमीदारी के बीच में करके सनद।
देबे द्विजे आदि भुमि दिलेक जानिया।।	देव द्विज आदि को भूमिदान, सबको ज्ञात।।
किमिलि साहेब नाम(1) आसिलो एक जन।	केम्बेल(1) नाम के साहब आये एक जन।
व्यवस्था जे राजा संगे कोरे दुई जन।।	व्यवस्था करे राजा के साथ वहाँ दो जन।।
परे लिक(2) साहब आइसे ताहुत लोइया।	पश्चात् लिक(2) साहब आये राजस्व लेने।
राज्य होते कर साधे स्वतंत्र होइया।।	राज्य से कर माँगे स्वतन्त्र होकर देने।।
कोलिकाता बन्दोबस्त राज्येर कोरिते।	कोलकाता बन्दोबस्त राज्य का कराने।
रामकेशब पद्मनाभ आमला सहिते।।	रामकेशव पद्मनाभ अमलों के साथ।।
माणिक्यचन्द्र ठाकुर पाठाये तारपर।	माणिक्यचन्द्र ठाकुर को भेजा इसके बाद।
राजधर ठाकुर गेलो तार अभयन्तर।।	राजधर ठाकुर गये तत् पश्चात।।
लिक साहेब हुजूरेत कोरे कुमंत्रण।	लिक साहब ने हुजूर से किया कुमंत्रण।
हुजूरे राजार पक्षे नाहि कोन जन।।	हुजूर के राजा पक्ष का कोई नहीं है वहाँ।।
परे सुर(3) बड़ो साहेब ढाका आगमन।	पश्चात् जान सोर(3) साहब ढाका में आये।
राजधर ठाकुर संगे आसिलो तखन।।	राजधर ठाकुर उनके साथ वहाँ आ गये।।
सुर संगे देखा राजा ढाकाते कोरिलो।	सोर संग नृप ने मुलाकात ढाका में किया।
ताहुत कोरिते राज्येर ताते ना होइलो।।	राज्यकर का बन्दोबस्त वहाँ नहीं हुआ।।
लिक साहेब सुर संगे ढाकाऐ तखन।	लिक साहब और सोर ढाका गए तत्क्षण।
राज्ये बन्दोबस्त नहे एई से कारण।।	राज्य का बन्दोबस्त नहीं हो सका इस कारण।।
ढाका होते नरपति आइसे पुनर्बार।	ढाका से नृपति आये पुनः लौट।
सेई काले स्तब्धवायु(4) जन्मिलो राजार।।	उसी समय हुआ उन्हें प्रकोप व्याधि बात(4)।।
त्रिपदी छन्द	त्रिपदी छन्द
बृद्ध होइलो नरपति, रोगान्वित प्रतिनिति	वृद्ध हुए नृपति, प्रतिक्षण रोग व्याधि
कृष्णनाम कालेर क्षेपण।	कृष्ण नाम से होता काल क्षेपण।
भारत पुराण जतो, शुनि छिलो अविरत	भारत पुराण जितने, अविरत रहते थे सुनते
पाठक द्विज हरि नारायण।	पाठक थे द्विज हरि नारायण।

---

(1) **Cambel** ? इनका प्रकृत नाम या परिचय नहीं मिला। (यहाँ पर उन्हें किमिलि कहा गया है। पर अंग्रजी में केम्बेल **(Cambel)** नाम आया है। इसलिए हिन्दी में केम्बेल नाम दिया गया है।)

(2) **Mr. Rolph Leeke.**

(3) **Mr. John Shore** – बंगला में उन्हे सुर कहा है जो उनके नाम से मिलता नही। इसलिए हिन्दी में जान सोर लिखा गया है जो उनका सही नाम है।

(4) स्तब्ध वायु – बात व्याधि। (हमने बात रोग का ही उल्लेख किया है।)

चल–56

एई मत कोतो काल, काल गत आइसे काल	इस तरह कितने काल, कालगत पर आया काल
एगार श तिरानब्बे त्रिपुरा।	ग्यारह सौ तिरानब्बे त्रिपुरा।
कृष्णमाणिक्य नृपति, कृष्णेते कोरिया मति	कृष्णमाणिक्य नृपति, कृष्ण में रख मति
कृष्ण नामे शरीर तेजिलो।	शरीर त्यजा मुख कृष्ण शब्द।
तेजिया जे कलेबर, स्र्वगलोके नरेश्वर	त्याग दिया कलेवर, स्र्वग गये नरेश्वर
हरिर संकीर्तन सबे कोरे।	सभी कर रहे थे हरि संकीर्तन।
महारानी जान्हबा सती, पुण्य कोरे प्रतिनिति	महारानी जान्हबा सती, प्रतिदिन पूजा करती
क्रन्दन ये राजार विच्छेदे।	राजा विच्छेद पर करती क्रन्दन।
यथाविधि आयोजन, आनिलेक सेई क्षण	यथाविधि आयोजन, किया वहाँ उसी क्षण
श्राद्ध द्रव्य कोरिया रचन।	श्राद्ध हुआ करके आयोजन।
बृषोत्सर्ग दान जतो, नृप स्वर्गे यथोचित	बृषोत्सर्ग दान आदि, नृप थे स्वर्ग यथाविधि
दान कोरे विप्रेते अर्पण।	दान किया विप्रो को अर्पण।
द्विज दम्पति विधि, अश्व नौका जतो आदि	द्विज दम्पति विधि, जितने थे अश्व नौका आदि
दान दिले दानि द्विज तरे।	दान दिया दानी द्विजों के लिए।
जतो छिलो द्विजगण, दान पाइलो सेई क्षण	जितने थे द्विजगण, दान पाये उसी क्षण
दक्षिणा दिलो जार जेई मते।	यथा योग्य सभी को दक्षिणा दिये।
दुःखित कांगाली जतो, धन बितरण ततो	ये दुखी कांगाली जितना, दान किया उतना
राजा प्रीते कोरे बितरण।	राजा प्रीत्यर्थ करे वितरण।
पुण्यबंत राजा छिलो, कर्मेते प्रतिष्ठा होइलो	पुण्यवंत नृप थे, वे कर्म से प्रतिष्ठा होवे
जान्हबा रानीये श्राद्ध कोरे।	जान्हबा रानी करती श्राद्ध स्वयं।।
पदबन्द	पदबन्द
कृष्णमाणिक्येर मृत्यु आषाढ़ मासेते।	कृष्णमाणिक्य मृत्यु आषाढ़ के महीना।
तेइस बत्सर राजत्व कोरिलो विहिते।।	तेइस वर्ष राजत्व करे महामना।।
कृष्णमाणिक्य राजार राजत्व कथन।	कृष्णमाणिक्य राजा का राजत्व कथन।
संक्षेपे कोहिलो ताहा होइलो समापन।।	संक्षेप में कहा है मैने हुआ समापन।।
इति राज खण्ड तत्वे	इति राज खण्ड तत्वे
कृष्णमाणिक्य राजत्व कथनम्	कृष्णमाणिक्य राजत्व कथनम्
समाप्तम्।	समाप्तम्।
रामगंगा माणिक्य नृपति जिज्ञासायां	रामगंगा माणिक्य नृपति जिज्ञासायां
दुर्गामणि वजीर कथनम्	दुर्गामणि वजीर कथनम्
चतुर्थ–काण्ड समाप्तम्।	चतुर्थ–काण्ड समाप्तम्।

श्री राजमाला

चतुर्थ लहर
मध्यमणि

(टीका)

खाली
(Blank)

चल–59

श्री राजमाला
चतुर्थ लहर की मध्यमणि
(टीका)

वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा।
आदावन्ते च मध्ये च हरिः सर्वत्र गीयते।।

ग्रंथ भाग में उल्लिखित अनेक स्थूल कथाओं का विशद विवरण पाद टीका में प्रदान करना संभव नहीं हो सका। उन्हीं सभी विषयों की संक्षिप्त विवृति यहाँ प्रदान की जा रही है।

राजामाला चतुर्थ लहर और उसके रचियता

राजामाला प्रथम लहर धर्ममाणिक्य के आदेशानुसार पंडित प्रवर बाणेश्वर और शुक्रेश्वर द्वारा दुर्लभेन्द्र चंताई के वाक्य अवलम्बन कर रचित हुई है। द्वितीय लहर महाराज अमर माणिक्य की अनुज्ञा से सेनापति रणचतुर नारायण के कथित विवरणों को लेकर किसी राज पंडित के द्वारा और तृतीय लहर महाराज गोविन्द माणिक्य और महाराज राम देव माणिक्य के आदेशानुसार पंडित प्रवर स्वर्गीय गंगाधर सिद्धांतवागीश द्वारा रचित होने के प्रमाण मिले हैं।

इसके पश्चात् कुछ दिनों तक राजमाला का ग्रंथन कार्य स्थगित था। ई0 सन् अठारहवीं सदी के अन्त में त्रिपुराधीश्वर महाराज रामगंगा माणिक्य ने पुनः राजमाला के रचना कार्य में मनोनिवेश किया था। उन्होंने प्राचीन वजीर जयदेव ठाकुर के प्रति राजमाला की चतुर्थ लहर रचना के लिए आदेश दिया । ये महाराज कृष्ण माणिक्य के शासन काल में वजीर पद पर नियोजित थे। वजीर जयदेव प्राचीन, बहुदर्शी एवं ज्ञानवान व्यक्ति थे। इसी कारणवश उनके ऊपर राजमाला के संग्रह का भार अर्पित हुआ। इस राजाज्ञा को शिरोधार्य करके –

नृप सम्बोधिया उजीर कोहिलो आपन।	कहा वजीर ने नृप को कर सम्बोधन।
मुकुन्द माणिक्य छिलो नृपति जखन।।	मुकुन्द माणिक्य जब थे वहाँ राजन।।
सेई काले जन्मियाछि बोलि महाराज।	उन दिनों में जन्मा हूँ, कहता हूँ महाराज।
तार पूर्वे शुनियाछि बृद्धेर समाज।।	उसके पहले है सुनाया मुझे वृद्ध समाज।।
जाहा शुनियाछि, जाहा देखिलो आपन।	जो कुछ सुना है, मैंने जो देखा है स्वयम्।
सेई सब कोहि आमि शुनह राजन।।	वही सब कहता हूँ सुनों हे राजन।।
राजमाला चल प्रस्तावना 5पृ	राजमाला चल प्रस्तावना 5पृ

अर्थात, " नृप को सम्बोधन करके वजीर ने कहा कि मुकुन्द माणिक्य जब राजा थे उसी समय मेरा जन्म हुआ। हे महाराज आप सुनिये। इसके पहले का मैने वृद्धों के समाज से भी सुना है। मैने जो सुना है, जो अपनी आँखों से देखा है वही सब मैं कह रहा हूँ। हे महाराज आप सुनिए।"

चल–60

इस उक्ति द्वारा ज्ञात होता है कि योग्य व्यक्ति के हाथों में ही राजमाला संग्रह का भार अर्पित हुआ था। वजीर के अपने ही वाक्यों से यह जाना जाता है कि महाराज मुकुन्द माणिक्य के शासन काल में उन्होंने जन्म ग्रहण किया था। महाराज मुकुन्द 1654–1660 शक (1732–1738) ई0 सन् तक राजत्व किया था। महाराज रामगंगा माणिक्य अनेक तरह के उपद्रव भोगने के ऊपरांत 1821 ई0 में राज्यभिषिक्त हुए। अतएव उस समय वजीर की उम्र कम से कम 90 साल की रही होगी। वृद्ध एवं बहुदर्शी वजीर भी राजाज्ञा पालन के लिए यह दायित्व भार ग्रहण करने के लिए सम्मत हुए थे। उन्होंने राज दरबार में सारा विवरण विवृत किया था। किन्तु वार्धक्य वश स्वयं रचना कार्य सम्पादन में अक्षम होने की वजह से अपने सुयोग्य पुत्र दुर्गामणि वजीर से कहा –

गोविन्द माणिक्याबधि जतो राजागण।	गोविन्द माणिक्य अवधि में जितने राजागण।
कृष्ण माणिक्य महाराजा कोरि समापन।।	कृष्ण माणिक्य राजा करता है समापन।।
रामगंगा माणिक्य स्थाने बोलिछि पूर्बेते।	रामगंगा माणिक्य का स्थान कहा पहले।
राजमाला मध्यावृत लिखोह ताहाते।।	राजमाला मध्यावृत्त लिखा है वहाँ।।
राजमाला चल प्रस्तावना 4–5पृ	राजमाला चल प्रस्तावना 4–5पृ

अर्थात, ''गोविन्द माणिक्य तक जितने भी राजा हुए हैं, कृष्ण माणिक्य महाराजा तक मैने समापन किया है। राम गंगा माणिक्य के यहाँ मैने पहले ही कहा है। राजमाला का मध्यावृत उसमें लिखो।''

पिता के इस आदेश से अनुप्राणित होकर वजीर दुर्गामणि ठाकुर ने राजमाला की चतुर्थ लहर की रचना की है। इस लहर में महाराज गोविन्द माणिक्य से लेकर महाराज कृष्ण माणिक्य तक नौ राजाओं का विवरण दिया गया है। इसके अलावा थोड़े दिनों तक राजत्व किया है, ऐसे राजाओं का विवरण भी इसमे है।

पूर्वोक्त विवरण की आलोचना से जाना जाता है कि राजमाला चतुर्थ लहर के वक्ता जयदेव ठाकुर और रचियता दुर्गामणि ठाकुर हैं। दोनों व्यक्ति ही वजीर पद पर नियोजित थे। वजीर पदवी मुसलमान शासन के अनुसार गृहीत होने पर यह पदवी त्रिपुरा राज्य आधुनिक नहीं है। महाराज रत्नमाणिक्य के समय जिन तीन बंगालिओं को गौड़ देश से लाकर राज कार्य में नियोग किया था, उनमें किसी किसी व्यक्ति के उत्तर पुरूषों में भी इस पद के प्राप्त करने के प्रमाण मिलते हैं। गौड़ से लेकर समागत व्यक्तिगणों के बीच बडखण्डव के घोष के अधस्तन षष्ठ स्थानीय प्रजापति घोष ने प्रथम वजीर पद प्राप्त किया था।

वजीर पदवी विवरण

इनके उत्तर पुरूषों में कुछ व्यक्तियों को यह सम्मानित पद मिला है। महाराज छत्र माणिक्य के शासन काल में यह पद घोष वंश से सेन वंश के हाथों में चला गया। महाराज जय माणिक्य के समय पुनः घोष वंश के दौहित्र रामधनदत्त वजीर पद पर प्रतिष्ठित हुए थे। इसके बाद के कुछ वजीरों का परिचय संग्रह करना मुश्किल हो गया है। किसी किसी राजा के शासन काल में राजवंश से भी वजीर पद पर निर्वाचन के प्रमाण मिलते हैं। उदाहरण स्वरूप महाराज कल्याण माणिक्य के पौत्र (जगन्नाथ ठाकुर के पुत्र)

चल–61
सूर्य प्रताप नारायण का नामोल्लेख किया जा सकता है। ये महाराज द्वितीय रत्नमाणिक्य के वजीर थे।

महाराज कृष्ण माणिक्य ने जयदेव ठाकुर को वजीर पद पर नियुक्त किया था। उस समय से इनके वंशधरगणों के बीच में ही कुछ व्यक्तियों में उक्त पद लाभ किया था। यही जयदेव वजीर राजमाला चतुर्थ लहर के वक्ता एवं उनके पुत्र दुर्गामणि वजीर इस लहर के रचियता हैं।

सर्वोच्च राजकर्मचारी या प्रधानमंत्री को वजीर उपाधि थी। इस दायित्वपूर्ण पद पर विशेष योग्यता सम्पन्न व्यक्तिओं को नियुक्त किया जाता था। कृष्णमाला ग्रंथ में उल्लेख ह–

''बिमल कुलेते जन्म जे जनार होय।
देबेते द्विजेते भक्ति जाहार थाकय।।
शास्त्रेते पंडित होय, धर्मे होय मति।
प्रजार पालन जाने, जाने राजनीति।।
शिष्टेर रक्षण जाने दुष्टेर दमन।
इंगिते बुझिते पारे सुजन दुर्जन।।
सभा उपयुक्त कथा कोहिबारे जाने।
काव्येते रसिक होय पराक्रमी रणे।।
प्रिय वाणी कहे, होय प्रिय दरशन।
साधय प्रभुर कार्य कोरि प्राणपण।।
बिपदे चंचल नहै थाकये सुस्थिर।
हेनो जन होइबारे उचित उजीर।।''

अर्थात, ''जिनका जन्म किसी विमल कुल में हुआ हो, देव द्विज में जिनकी भक्ति रहती है। जो शास्त्रों के ज्ञाता पंडित हैं, धर्म में जिनकी मति होती है, जो प्रजा का पालन कर सकते हैं, जो राजनितिज्ञ हैं, शिष्ट का रक्षण और दुष्ट का दमन जो करना जानते हैं, जो इंगित मात्र से सुजन और दुर्जन पहचान लेते हैं, सभा के अनुसार जो समय उपयोगी बात करते हैं, काव्य में जो रसिक, रण में जो पराक्रमी हैं, जो प्रिय वाणी से सम्बोधन कर सकते हैं, जो प्रिय दर्शन हैं अर्थात जिनका दर्शन मात्र ही अच्छा लगता है, प्राणपण से जो अपने प्रभु के कार्य को निष्पन्न करने की क्षमता रखते हैं, जो विपत्ति आने पर चंचल नहीं होते और सुस्थिर रहते हैं ऐसे व्यक्ति ही वजीर होने के योग्य हैं।''

इस उक्ति से जाना जाता है कि त्रिपुर राज्य में किस तरह के उच्च श्रेणी के व्यक्तिओं को वजीर पद पर नियोग करने की व्यवस्था थी।

इस समय यह उपाधि वंशगत हो गई है। इस समय अब राज कार्य के साथ इस उपाधि का कोई सम्पर्क नहीं है। शेषोक्त वजीर परिवार की वंशावली की आलोचना से यह जाना जाता है कि महाराज कृष्ण माणिक्य शासन काल में जयदेव ठाकुर महाराज राजधर माणिक्य के शासन काल में राजमणि ठाकुर, महाराज रामगंगा माणिक्य के समय दुर्गामणि ठाकुर, महाराज कृष्णकिशोर माणिक्य के साथ रामजय और कृष्णजय ठाकुर, महाराज राधा किशोर माणिक्य के शासन काल में गोपीकृष्ण ठाकुर ने वजीर पद प्राप्त किये थे। महाराज वीरेन्द्र किशोर माणिक्य ने श्रीयुत ब्रजकृष्ण ठाकुर को वजीर पद प्रदान किया था। वर्तमान महाराज माणिक्य बहादुर के समय भी वही इस पद पर प्रतिष्ठित हैं। ये वजीर गोपीकृष्ण ठाकुर के ज्येष्ठ पुत्र हैं। इस परिवार की वंश तालिका दूसरे पृष्ठ में प्रदान की जा रही है।

चल–62
महाराज कल्याण माणिक्य के पौत्र
सूर्य प्रताप नारायण
↓
चण्डी चरण(दौहित्र)
↓
यादुमणि
↓
पीताम्बर ठाकुर नीलाम्बर ठाकुर शिवराम ठाकुर
↓
जयदेव वजीर
↓
राजमणि वजीर नीलमणि ठाकुर दुर्गामणि वजीर
↓
रामजय वजीर कृष्णशरण ठाकुर कृष्णजय वजीर
↓
शिवजय ठाकुर
↓
गोलोकचन्द्र ठाकुर, गोविन्दचन्द्र ठाकुर, गोपीकृष्ण वजीर, गोपीमोहन ठाकुर, प्यारीकृष्ण ठाकुर, किशोरीमोहन ठाकुर
↓
ब्रजकृष्ण वजीर राधाकृष्ण ठाकुर
↓
कमलकृष्ण धीरेन्द्रकृष्ण नवकृष्ण उपेन्द्रकृष्ण नरेशकृष्ण
↓
स्व विनयकृष्ण स्व ललितकृष्ण अनिलकृष्ण सुधीरकृष्ण सुरेशकृष्ण
↓
परेश कृष्ण

महाराज रामगंगा माणिक्य के आदेशानुसार वजीर दुर्गामणि द्वारा राजमाला के चतुर्थ लहर रचित होने की बात इसके पहले हम कह चुके हैं। इस लहर का प्राचीनत्व निर्णय करने के लिए महाराज रामगंगा माणिक्य का शासन काल निर्धारण करना आवश्यक है। इसके राजत्व काल 1728 शक (ई0 सन् 1806) में मुद्रित रौप्य मुद्रा मिली है। यह मुद्रा उनकी राज्य प्राप्ति के प्राकलग्न में मुद्रित हुई थी, इसके भी प्रमाण मिले है। किन्तु राज्य प्राप्ति के साथ साथ ही राजत्व लेकर कलह में फँसकर वे उद्विग्न हुए थे। तीन साल राज्य शासन करने के पश्चात, महाराज दुर्गा माणिक्य के द्वारा राज्यच्युत होकर चार सालों तक उन्होंने अत्यन्त यातना भोग की। दुर्गा माणिक्य के परलोक सिधारने के पश्चात् महाराज रामगंगा ने 1813 ई0 में पुनः राज्य प्राप्त किया था।

चल 63

इस बार भी जब कुछ व्यक्तियों द्वारा राज्य और जमींदारी के ऊपर दावा करने के लिए जब प्रयास होने लगे तो महाराज को पहले की तरह अशांति और उपद्रवों का सामना करना पड़ा था। सारे विवादों की मीमांसा के पश्चात, 1821 ई0 में राज्यभिषिक्त हुए। इस समय से 1826 ई0 के चतुर्थ पाद पर्यन्त निर्विवाद राजत्व करके उसी सन के 14 नवम्बर रामगंगा ने अपनी लोक लीला समाप्त की।

ऊपर लिखी अवस्थाओं की आलोचना से यह ज्ञात होता है कि 1806 ई0 से महाराज रामगंगा माणिक्य के राजत्व का सूत्रपात होने पर भी 1821 ई0 सन् के पहले वे सिंहासन पर सुप्रतिष्ठित नहीं हो सके। अतएव उन दिनों की अशांति और उद्वेग लेकर राजमाला के संकलन कार्य में मनोनिवेश करने का सुयोग हुआ था, ऐसा नहीं लगता है। उनके राजत्व के शेष भाग (1821–1826 ई0) शांतिपूर्ण था। सम्यक आलोचना से ऐसा प्रतीत होता है कि इस अवधि के भीतर ही राजमाला की चतुर्थ लहर की रचना हुई है। अतएव यह अंश ई0 उन्नीसवीं सदी के प्रारंभ काल में ही रचित हुआ है एवं इसकी प्राचीनता कमोवेश एक सदी निर्णित हुई है।

राजमाला रचनापक्ष में अनुकूल समय

इस समय त्रिपुरा में ई0 अठारह सदी में बंग भाषा का प्रभाव पूर्ण मात्रा में प्रतिफलित हुआ था। बंग भाषा के इतिहास की आलोचना से यह जाना जायेगा कि इस सदी के साहित्य क्षेत्र में जो उन्नति की धारा प्रवाहित हुई थी, उसके द्वारा बंग भाषा का विशेष उत्कर्ष साधित हुआ है। इस समय बहुत से कृति व्यक्तियों ने बंग भारती की सेवा में आत्म नियोग किया था और उन लोगों ने साहित्य भण्डार में उनके मूल्यवान रत्नों को सँजोया है। उनमें प्रेमदास की ''चैतन्य चन्द्रोदय कौमुदी'', द्विज भावानन्द का ''हरिवंश'', जीवन मैत्र का ''उषा हरण'', जय नारायण सेन की ''हरि लीला'', चैतन्य दास की ''रस भक्ति चन्द्रिका'', युगल किशोर दास का ''प्रेम बिलास'' आदि वैष्णव ग्रन्थ हैं। कृष्ण दास का नारद पुराण, गोविन्ददास का गरुढ़पुराण, गंगाराम का महाराष्ट्र पुराण, अद्भुत आचार्य, द्विज लक्ष्मण, द्विज भवानी, जगद्राम राय, राम मोहन बन्दोपाध्याय आदि कवियों के द्वारा रचित रामायण, रघुनन्दन गोस्वामी का राम रसायण, रामेश्वर नन्दी और लक्ष्मण बन्दोपाध्याय का महाभारत, रामेश्वर भट्टाचार्य का शिबायन, द्विज कालिदास का कालिका मंगल, द्विज रसिक का मनसा मंगल, घनराम चक्रवर्ती का श्रीधर्म मंगल, नर सिंह बसु और सहदेब चक्रवर्ती का धर्म मंगल आदि का नाम यहाँ उल्लेख योग्य है। संगीत चर्चा में भी इस युग का साहित्य विपुल सम्पद से भरा है। इस राम प्रसाद सेन और दीवान राम दुलाल नन्दी का श्यामासंगीत, रामनिधि गुप्त का (निधू बाबू) टप्पा, हरू ठाकुर और राम बसु आदि के कबिगान, गोविन्द अधिकारी यात्रा पाला (खुले मंच पर नाटक आदि) की बातें उल्लेख

चल 64

की जा सकती है। शेख मनोहर का गाजीनामा, देबाइ पंडित का बृहन्नारदीय पुराण आदि ग्रंथ त्रिपुरा के इस युग की स्वोपार्जित सम्पदा है। इस तरह के अनेक कवि एवं ग्रंथो का नामोल्लेख किया जा सकता है। बंग भाषा में इस तरह की चर्चा राजमाला चतुर्थ लहर के लिए विशेष अनुकूल हुई थी, यह कहना निष्प्रयोजन है।

राजमाला संशोधन

राजमाला चतुर्थ लहर के रचियता वजीर दुर्गामणि ठाकुर ने प्राचीन राजमाला के समग्र भागों का संशोधन किया था। उस लहर के प्रारंभ में ही लिखा गया है –

पुरातन राजमाला आछिलो रचित।	पुरातन राजमाला पहले थी रचित।
प्रसंगेते अलग्निक भाषा ये कुत्सित।।	प्रसंग में अलग्निक भाषा थी जो कुत्सित।।
पूर्व प्रसंग परे पर पूर्वे कोतो।	पूर्व प्रसंगक पूर्व पर पहले था कितना।
सेइतो कारणे लोके नाहि बुझे यतो।।	कारण यही था कि लोग समझे नहीं उतना।।
त्रिपुरा राज्येर नाम त्रिपुर ये मते।	त्रिपुर जिस तरह त्रिपुर राज्य का नाम।
त्रिपुर राजार प्रमाण न लिखिछे ताते।।	लिखा नहीं उसमें राजा का प्रमाण।।
बारहसौ आटत्रिश सन त्रिपुरा जखनि।	बारह सौ अड़तीस सन् जब था त्रिपुरा।
ताहाके सुधिलो पुनि उजीर दुर्गामणि।।	पुनः उसे वजीर दुर्गामणि ने सुधारा।।
राजमाला चल 3पृ	राजमाला चल 3पृ

अर्थात, "पुरातन राजमाला लिखी हुई थी। प्रसंगों में आलग्निक बातें थी और भाषा भी कुत्सित थी। पूर्व प्रसंग के पश्चात और इसके पहले भी बहुत सी बातें थी, जिसे लोग समझ नहीं पाते थे। जिस मतानुसार त्रिपुरा राज्य का नाम त्रिपुर था, त्रिपुरा के राजाओं के प्रामाणिक तथ्यों को उसमे नहीं लिखा गया था। बारह सौ अड़तीस त्रिपुराब्द जब हुआ तब वजीर दुर्गामणि ने उनमें संशोधन किया।"

उद्धृत वाक्यों से हमें ज्ञात होता है कि 1238 त्रिपुराब्द में यह संशोधन कार्य समाप्त हुआ था। अतएव राजमाला चतुर्थ लहर रचना के समकालीन समय में ही यह कार्य सम्पादित हुआ था। वजीर महोदय का यह संशोधन कार्य सबके लिए रूचि सम्मत होगा या नही, इस विषयों में संदेह व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा है –

एहाते द्विरूक्ति यदि काहार जन्मय।	यदि इससे द्विरूक्ति जन्मे किसी मन में।
पुराणादि दर्शिले जे घुचिले संशय।।	पुराणादि देख मिटे संशय क्षण में।
पुरातन राजमाला आछये विदित।	पुरातन राजमाला है सर्व विदित।
इहा संगे मिलाइले बुझिबे निश्चित।।	इससे मिलाकर समझोगे निश्चित।।
राजमाला चल 3–4पृ	राजमाला चल 3–4पृ

अर्थात, इसमे अगर किसी को संदेह उपस्थित हो तो पुराणों को देखने पर यह संशय दूर हो जायेगें। पुरातन राजमाला तो है ही, इसके साथ मिलाकर देखने पर निश्चित रूप से सारी बातें स्पष्ट हो जायेंगी।"

हमने पुरानी राजमाला से संशोधित अंशों को मिलाकर देखा है, वजीर महोदय के संशोधन से राजमाला के मूल रूप से किसी तरह की हानि या परिवर्तन नहीं हुआ है। किसी किसी जगह उन्होंने भाषा को प्राजंल करने का और कुछ उत्कर्ष साधन चेष्टा मात्र किया है। किन्तु इस कार्य के द्वारा प्राचीन ग्रंथ की मौलिकता नष्ट हुई है, वजीर महोदय ने संभवतः इसे सोचा भी नहीं है। उनके कार्यों के द्वारा भाषा का उत्कर्ष हुआ है या नहीं, यह निर्णय करना दुःसाध्य है। प्राचीन भाषा के साथ आधुनिक भाषा का सम्मिश्रण अनेक स्थलों पर ठीक नहीं बैठता है और वह बेमिसाल सा लगता हो गया है।

राजमाला में व्यवहार में लाये गये भाषा का विचार पहले किया नहीं गया – अब भी नहीं करूँगा। इन विषयों की आलोचना में लिप्त होना एक कठिन विषय है। विशेषतः वजीर

चल 65
महोदय के द्वारा संशोधित होने की वजह से इस ग्रंथ के प्रथम तीन लहर की मूल भाषा का अनेकांश ही रूपांतरित हो गया है। प्राचीन राजमाला की आलोचना करने से रचियताओं के भाषा का स्वरूप निर्णय किया जा सकता है, किन्तु संशोधित ग्रंथ की आलोचना के बारे में, प्राचीन ग्रंथ की भाषा लेकर छानबीन करने पर सामंजस्य की रक्षा करना असंभव सा है। इन्ही सभी कारणों से प्रथम तीन लहरों की भाषा तत्व की आलोचना से विरत रहना पड़ा है। चतुर्थ लहर वजीर महोदय की स्वरचित है। इस अंश की भाषा के ऊपर अन्य किसी का हस्तक्षेप नहीं हुआ –रचियता की भाषा अक्षुण्ण रह गई है। पहले की तीन लहरों की भाषा के बारे में जब कुछ कहने का उपाय नहीं है, तो इस लहर की भाषा को लेकर किसी तरह की टीका टिप्पणी नितान्त ही अशोभनीय मानी जायेगी। अतएव इस लहर की भाषा विषयक सूक्ष्म आलोचना में प्रवृत्त न होकर प्राचीन भाषा के बारे में दो एक बातें मात्र कही जायेंगी।

प्राचीन बंग साहित्य में शब्द प्रयोग की एक प्रथा पहले से ही चली आ रही थी। बोलेन्त/ बोलिलेन्त, करोन्ती, पिबन्ती, यान्ति आदि प्राकृत शब्दों के प्रयोग बहुत से बंगला साहित्य में पाये जाते हैं। राजमाला चतुर्थ लहर में इस तरह के शब्दों के प्रयोगों का आभाष मिल रहा है। दो एक दृष्टांत यहाँ प्रदान किये जा रहे हैं –

जगन्नाथ ठाकुर जामाता सम्बोधिया।	किया जामाता से सम्बोधन जगन्नाथ ठाकुर।
बोलिलेंत आमा पुत्र आनो फिराइया।।	मेरे पुत्र को ले आओ अभी लौटाकर।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 8पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 8पृ

अर्थात, ''जगन्नाथ ठाकुर ने अपने जामाता को सम्बोधन करके कहा कि मेरे पुत्र को लौटाकर ले आओ। यहाँ पर बोलिलेन्त – प्राकृत भाषा का प्रयोग है। बोलिलेन्त का अर्थ हुआ ''कहा''।

छत्र माणिक्येर पुत्र उच्छवराय नाम।	छत्र माणिक्य के पुत्र, उच्छवराय नाम।
बोलिलेन्त एई राज्ये काटा मारा काम।।	कहा इस राज्य में है मारना काटना काम।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 11पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 11पृ

अर्थात, ''छत्र माणिक्य के पुत्र का नाम उत्सव राय था। उन्होंने कहा (बोलिलेन्त) इस राज्य में मारना काटना ही काम है।

नवाबेर आर सैन्य आइसे शुनिया।	नवाब की और सेना आई है सुनकर।
महाराजा मुर्शुदाबाद गेलेन्त चलिया।।	महाराजा मुर्शिदाबाद पँहुचे जाकर।।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 52पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 52पृ

अर्थात, ''नवाब की और भी सेनाएँ आई और महाराज मुर्शिदाबाद चले गए (गेलेन्त) यहाँ पर भी ''गेलेन्त'' शब्द प्राकृत है।

प्राकृत भाषा में बहुत जगहों में प्रथमा के एक वचन में ''ए'' वर्ण का प्रयोग मिला है। कर्तृ वाचक तृतीया विभक्ति में भी उस तरह ''ए'' का प्रयोग होता था। प्राकृत से बंगला भाषा में भी यह व्यवहार गृहीत होने का निदर्शन बहुत से प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। राजमाला के चतुर्थ लहर में इस स्थल पर ''ए'' प्रयोग के बहुत से उदाहरण मिलते हैं –

मोताइते राजधानी कोरिलो राजन।	मताई में राजधानी की किया स्थापना।
त्रिपुरा पाहाड़ दक्षिण करये शासन।।	त्रिपुर का दक्षिण पहाड़ करने लगे शासन।।
राजमाला चल जय माणिक्य खण्ड 38पृ	राजमाला चल जय माणिक्य खण्ड 38पृ

(हमने हिन्दी में ''करये'' लिखा है लेकिन बंगला में ''करए'' लिखा गया है।) (– अनुवादक)()
अर्थात, ''मताई में राजधानी स्थापना राजा ने की। त्रिपुरा के दक्षिण पहाड़ी इलाका में वे शासन करने लगे।''

चल 66

उदय माणिक्य यदि होयेत नृपति।	उदय माणिक्य यदि होता है नृपति।
ताहुतेर बाकी कर परिबेक हाती।।	ताहुत का बाकी कर दे सकेगा हस्ती।।
राजमाला चल जय माणिक्य खण्ड 39पृ	राजमाला चल जय माणिक्य खण्ड 39पृ

(हमने हिन्दी में उच्चरण को ठीक रखने के लिए ''होयेत'' लिखा है। इस सम्बन्ध में बंगला में होएत नहीं लिखा जाता। ''ए'' की मात्रा य पर देकर ''ये'' किया जाता है – अनुवादक)

अर्थात, ''उदयमाणिक्य यदि राजा हो जायें तो निर्धारित किया हस्ती कर देना बाकी रह जायेगा।''

इन्द्रमाणिक्य राजार काल प्राप्ति होये।	इन्द्रमाणिक्य राजा का जब अंतकाल हुआ।
पुनरपि जय माणिक्य दरखास्त करये।।	पुनः जय माणिक्य ने दरखास्त तब दिया।।
राजमाला चल जय माणिक्य खण्ड 42पृ	राजमाला चल जय माणिक्य खण्ड 42पृ

(यहाँ पर ''ए'' की मात्रा नहीं देकर ''ए'' बैठा दिया गया है। हिन्दी में हमने ''य'' में ''ए'' की मात्रा देकर दोनों जगहों पर ये किया है। हिन्दी में इस तरह के प्रयोग होते ही हैं – जैसे चाहिए, कीजिए आदि। पर बंगला में इस तरह के प्रयोग इस समय नहीं किये जाते।)

भाषा के बारे में और भी बहुत सी बातें कहने की हैं। किन्तु इस विषय को लेकर बात आगे नहीं बढाउँगा। मुसलमानों के प्रभाव के समय से बंग साहित्य में उर्दु और पारसी भाषा के बहुत से शब्दों ने अपना स्थान बना लिया है। राजमाला चतुर्थ लहर के राजनीतिक आलोचना में मुसलमानी भाषा का प्रयोग अनिवार्य हो उठा था। नजराना, मासरा (मसवारा), जायगीर, उजीर(वजीर) नाजिर, सूबा, सूबेदार, फौज, फौजदार, खिलात(उपहार), गमि (उत्सव), ताहूत (बन्दोबस्त के हिसाब से प्रदेश राजस्व), वादा, किस्तीबन्दी, फरमान, परवाना, हुजूर, कारसाजी, दरखास्त आदि बहुत से उर्दु और पारसी भाषा के शब्द इस लहर में पाये जाते हैं। इसके बाद ईस्ट इंडिया कम्पनी के प्रभाव से अंग्रेजी शब्दों द्वारा भी इसके कलेवर की वृद्धि हुई है। इन्हीं सभी कारणों से राजमाला चतुर्थ लहर में संस्कृत, प्राकृत, बंगला, उर्दु, पारसी और अंग्रेजी भाषा का समावेश हुआ है। उस समय बंग साहित्य की अवस्था सर्वत्र ही इस तरह समृद्ध हुई थी।

इस समय भी साहित्य में प्रादेशिक भाषा का प्रभाव भी कुछ देखने को मिलते हैं। राजमाला के चतुर्थ लहर में इस विषय के बहुत से निदर्शन मिलते हैं। इनमें किसी किसी स्थल पर त्रिपुरा के प्रचलित भाषा का भी प्रभाव पड़ा है। इस बारे में दो एक दृष्टांत नीचे दिये जा रहे हैं :–

1.

शयने स्वपने देखे यदि निद्रा होये।	शयन स्वप्न में देखते सदा नींद आने पर।
गलाचापि धरे ताके प्राण काँपे भये।।	गला दबाए उनका, प्राण काँपे भय से।।
राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 25पृ	राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 25पृ

यह भाषा स्थानीय है।

2.

आछुमणि सूबाके जे राखिछे ढाकाते।	आछुमणि सूबेदार जो रखा है ढाका में।
ढाकाते आसिया राजा छोड़ाये ताहाते।।	ढाका मे आकर उसे छुडाया राजा ने।।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 53पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 53पृ
3. सत्र रत्न निर्माइलो जगन्नाथ पुरे।	सत्रह रत्न निर्माण किया जगन्नाथ पुर में।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 54पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 54पृ

गला चापि – गला दबाना, छोड़ाय – छुड़ाना, सत्ररत्न – सत्रह रत्न, ये सारे शब्द त्रिपुरा के कथित भाषा में व्यवहार किये जाते है। इस तरह के और भी बहुत से उदाहरण दिये जा सकते हैं । लेकिन पहले की लहरों के अलावा इस लहर में प्रादेशिक भाषा प्रयोग तुलनात्मक रूप से कम है।

चल–67

राजमाला चतुर्थ लहर का ऐतिहासिक मूल्य

राजमाला चतुर्थ लहर में जो ऐतिहासिक विवरण प्राप्त होते हैं, उन्हें यथावत रूप से संग्रह करने के लिए रचियता की सतर्कता के प्रयासों के प्रमाण बहुत सी जगहों पर मिलते हैं। फिर भी दीर्घ दिनों तक पहले के विवरणों को संग्रह करने में सामान्य भ्रम प्रमाद हो जाना स्वाभाविक है, यहाँ पर भी सामान्य सा भ्रम प्रमाद जो नहीं हुआ है ऐसी बात नहीं है। किसी किसी राजा काल निर्णय करने में सामान्य तारतम्य हुआ है एवं मुसलमान और अंग्रेज शासकों में कुछ लोगों के नाम कुछ हद तक विकृत हुए हैं। किन्तु इस सामान्य त्रुटियों से राजमाला के ऐतिहासिक मूल्य का कुछ लाघव नहीं हुआ।

नवाब दरबार में प्रतिभू रक्षा के नियम

महाराज कल्याण माणिक्य के मानव लीला संवरण के पश्चात, उनके ज्येष्ठ पुत्र गोविन्द देव ''गोविन्द माणिक्य'' नाम ग्रहण कर सिंहासनरूढ़ हुए। वे कुछ दिन हद तक मुसलमानों के अनुगत्य स्वीकार करने पर मजबूर हुए थे। उनके शासनकाल में, मुर्शिदाबाद के नवाब दरबार में त्रिपुरा की ओर से किसी जनैक प्रतिभू (Hostage) रखने की व्यवस्था हुई थी। प्रतिनिधि की मध्यस्थता में नवाब दरबार में त्रिपुरा राज्य घटित सारे कार्य परिचालित होते थे। इन सभी प्रतिनिधियों का दायित्व और गुरूत्व बहुत बड़ा था। इसके कार्य पद्धति पर ही राज्य की भलाई और बुराई निर्भर करती थी।

महाराजा गोविन्द ने अपने सौतेले भाई नक्षत्र ठाकुर को प्रतिनिधि के रूप में मुर्शिदाबाद के दरबार में प्रेरण किया था। इस बारे में राजमाला में लिखा है –

राजार बैमात्र भ्राता नक्षत्र ठाकुर।	राजा के वैमात्र भाई थे नक्षत्र ठाकुर।
मुर्शदाबादेते तुले(1) नबाब हूजुर।।	मुर्शिदाबाद थे जहाँ नवाब हूजुर।।(1)
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 6पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 6प

अर्थात, ''राजा के सौतेले भाई जिनका नाम नक्षत्र ठाकुर था मुर्शिदाबाद में प्रतिनिधि के रूप में थे। प्रतिनिधि को ''तुल'' कहा जाता था।''

नवाब के दरबार में भेजे गये प्रतिनिधियों को ''तुल'' कहा जाता था। यह तुल प्रथा बहुत दिनों तक चली थी एवं यह प्रथा अंत में राज्य के लिए एक भयंकर अनिष्ट हो उठी थी। ''तुल'' प्रथा प्रर्वतन के प्रारंभ में ही, प्रथम प्रतिनिधि नक्षत्र ठाकुर, कुछ दिनों तक नवाब दरबार में रहकर अपनी प्रभाव प्रतिपत्ति प्रतिष्ठा लाभ किया था। और इस सुयोग के मद्दे नजर उनके हृदय में राज्य प्राप्ति की आकांक्षा जागृत हो उठी। उन्होंने नाना कौशल पूर्वक नवाब को वशीभूत करके उनकी दी हुई सेनाओं की सहायता से त्रिपुरा के विरूद्ध युद्ध यात्रा की। महाराज गोविन्द माणिक्य को हटाकर सिंहासन अधिकार कर लिया। इस समय त्रिपुरा के अतिविप्लव की सहायता से

---

(1) ''तुल'' शब्द द्वारा अपने तुल्य व्यक्ति(प्रतिनिधि) को समझाया गया है।

चल–68
नक्षत्र राय ने आनुकूल्य परिस्थिति प्राप्त की थी। इस बारे में विशद् विवरण इसके बाद दिया जायेगा।

परिवर्ती राजन्य वर्ग द्वारा ''तुल'' प्रथा से नियोजित व्यक्तियों में बहुत से लोगों ने नक्षत्र ठाकुर का अनुसरण करते हुए उन्ही के प्रदर्शित पथ पर चलकर राज्य में नाना तरह की अशांति और उपद्रव फैलाया था। इनके आचरणों द्वारा राज्य श्री उत्तरोत्तर म्लान हो रही थी।

महाराज गोविन्द माणिक्य से लेकर जय माणिक्य तक सभी नृपति वृन्दों के शासन काल में प्रतिभू–नियोग की प्रथा को स्थायी रखने के प्रमाण मिलते हैं। इसके बाद नाना रूप उच्छृखंलता के द्वारा राज्य की जो अवस्था हुई थी, उसे यथा स्थान विवृत किया जायेगा। इस विश्रृंखला के फलस्वरूप प्रतिभू–नियोग की प्रथा बन्द हो गई।

पारिवारिक कथा

राजमाला के चतुर्थ लहर में त्रिपुर राजवंश का पारिवारिक विवरण बहुत कम या सामान्य ही मिलता है। जो सामान्य विवरण मिला है, उसका स्थूल मर्म हम नीचे दे रहे हैं।

वैवाहिक विवरण

राजमाला की चतुर्थ लहर, महाराज गोविन्द माणिक्य के विवरण को लेकर शुरू हुई है। इन्ही महिषी का नाम महारानी महागुणवती देवी था। इस महारानी के नाम के अलावा और कोई परिचय नहीं मिलता है। राजमाला में लिखा गया है –

गोविन्द माणिक्य राजा होइलो राजन।	नृप हुए गोविन्द माणिक्य, हे राजन।
गुणवती महारानी विख्यात भुवन।।	महारानी गुणवती थी विख्यात भुवन।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 6पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 6पृ

अर्थात, '' गोविन्द माणिक्य राजा हुए और उनकी महिषी का नाम गुणवती महादेवी था जो दुनिया में विख्यात हुई।।''

श्रेणीमाला ग्रंथ में भी महारानी का नामोल्लेख मात्र है। परिचय सूचक कोई बात नहीं है।

कल्याणेर तनय गोविन्द युवराज।
गोविन्द माणिक्य नामें होइलो महाराज।।
गुणवती नामे होइलो ताहान जे रानी।
ताहार संतान दुई राम दुर्गा सुनि।।
श्रेणीमाला।

अर्थात, ''महाराज कल्याण माणिक्य के तनय गोविन्द युवराज थे और गोविन्द माणिक्य के नाम से वे सिंहासन पर बैठे। उनकी महारानी का नाम गुणवती था। उनकी दो संताने थी राम और दुर्गा नाम की, ऐसा सुनने में आया है।

गोविन्द माणिक्य के सौतेले भाई महाराज छत्र माणिक्य (नक्षत्र ठाकुर) ने कहाँ विवाह किया एवं महारानी का क्या नाम था, इसके कोई विवरण संग्रह करने का कोई उपाय नहीं है। अतएव इस विषय में किसी तरह की चर्चा करना असंभव सा है।

चल–69

श्रेणीमाला ग्रंथ की आलोचना से यह जाना जाता है, महाराज गोविन्द माणिक्य के पुत्र रामदेव माणिक्य की (राम माणिक्य) प्रधाना महिषि का नाम था सत्यावती। राजमाला में उनकी बहुत सी महिषिओं के उल्लेख मिलते हैं –

बहुजन छिलो रानी परम सुन्दरी।	रानिया अनेक थी परमा सुन्दरी।
राजमाला चल राम माणिक्य खण्ड 16पृ	राजमाला चल राम माणिक्य खण्ड 16पृ

राजमाला में किसी भी महिषि का नामोल्लेख नहीं किया गया है और न उनके परिचय सूचक कोई बात ही है। राम माणिक्य के पुत्र महाराज रत्नमाणिक्य की प्रधान महिषि का नाम था रत्नावती। इस राजा ने भी बहु संख्यक महिषि बनाया था। राजमाला में लिखा है

रत्नमाणिक्य राजा युवक होइलो।	रत्नमाणिक्य राजा हो गया जवान।
छय कुडि जन कन्या बिबाह कोरिलो।।	एक सौ बीस कन्याओं का किया पाणिग्रहण।।
मुख्य रानी रत्नाबती बोसिलो विदित।	मुख्य रानी रत्नावती हुई जगत विदित।
आर रानी चतुर्भिते होइयाछे शोभित।।	और रानियाँ चारों ओर हुई सुशोभित।।
राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 20पृ	राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 20पृ

अर्थात, रत्नमाणिक्य राजा युवक हुआ। उसने एक सौ बीस कन्याओं से विवाह किया। मुख्य रानी रत्नावती के चारों ओर रानियाँ सुशोभित थी।

(यहाँ पर बंगला में बीस को कुड़ि कहते हैं। छः कुड़ि अर्थात एक सौ बीस रानियां अनुवादक।)

प्रधान महिषि के अलावा अन्य महिषियों के नाम और परिचय ज्ञापक कोई विवरण नहीं मिल सका। महाराज द्वितीय धर्म माणिक्य की महिषि का नाम राजमाला में धर्मशीला लिखा गया है–

धर्ममाणिक्य महाराजा धर्मशीला रानी।	धर्ममाणिक्य महाराजा और धर्मशीला रानी।
एईमतो गज सिक्का(1) होये राजधानी।।	इसी तरह गज सिक्का(1) बनता था राजधानी।।
राजमाला चल धर्म माणिक्य खण्ड 26पृ	राजमाला चल धर्म माणिक्य खण्ड 26पृ

श्रेणीमाला ग्रंथ की आलोचना से ज्ञात होता है कि ''धर्मशाला'' आख्या धर्म माणिक्य के राज्य प्राप्ति के पश्चात प्रदान किया गया है। इस राजमहिषि का पूर्व नाम था सुमुद्रा। इनके पितृ कुल का परिचय नहीं मिलता है। श्रेणी माला में लिखा है –

धर्म माणिक्य श्रेणी कोरिबो आख्यान।
सुमुद्रा नामे रानी धर्मशीला आख्यान।।
– श्रेणीमाला।

अर्थात, ''धर्म माणिक्य के मैं श्रेणी का आख्यान कहूँगा। सुमुद्रा नाम की उनकी एक रानी थी जिनका नाम बाद में धर्मशीला के नाम से विख्यात हुआ''।

लक्ष्मण माणिक्य (लवंग या बनमाली ठाकुर) का नाम राजमाला में नहीं लिखा गया। इस तरह करने का कारण बाद में बताया जायेगा। इस महिषि का नाम था मोहदा देवी। ''मोहदा'' शब्द ''महोदया'' शब्द का अपभ्रंश सा लगता है। इन्होंने नूरनगर परगने में एक विशाल तालाब खनवाया था और वहाँ पर एक बाजार की भी स्थापना की थी।

---

(1) गजसिक्का – मुद्रा।

चल–70

वह कीर्ति आज भी विद्‌यमान है एवं उस जगह का नाम मोहदा गंज है। ये बेचुराम कबरा की कन्या थी। बस यही इनके बारे में जाना जाता है।

लक्ष्मण माणिक्य पत्नी मोहदा नामेते।
बेचुराम कबरा कन्या जानिबा ताहाते।।
मोहदा गंजेते दिघि कोरिया खनन।
आपन नामेते मोहदा गंज कोरे निरूपण।। – श्रेणीमाला।

अर्थात, लक्ष्मण माणिक्य की पत्नी का नाम मोहदा था। बेचुराम कबरा की वह कन्या थी। मोहदा गंज में उन्होंने तालाब खनन कराया था। अतः अपने नामानुसार मोहदा गंज रखा।

रामादेव माणिक्य के पुत्र महाराज मुकुन्द माणिक्य की प्रधान महिषि का नाम मात्र राजमाला में आता है – परिचय सूचक कोई बात नहीं मिलती। उनकी रूक्मिणि नामक और एक महिषि का नामोल्लेख है –

मुकुन्द माणिक्य नाम गजसिक्का होइलो।	मुकुन्द माणिक्य नाम हुआ गजसिक्का।
प्रभावती महारानी मोहरे लिखिलो।।	प्रभावती महारानी का नाम मोहर में लिखा।।
तान छिलो दुई रानी श्रेष्ठा प्रभावती।	थी उनकी दो रानी श्रेष्ठा प्रभावती।
जैन्ता राजा ज्ञाति सूता धर्मे छिलो मति।।	जयंतिया राज जाति सूता धर्म में थी मति।।
ज्येष्ठ पुत्र पाँचकड़ि मुर्शुदाबाद तुले।	ज्येष्ठ पुत्र पाँचकड़ि मुर्शिदाबाद में थे तुल।
कृष्णमणि जयमणि तीन भाई छिले।।	कृष्णमणि, जयमणि सब तीन भाई थे मिल।।
रूक्षमिणि रानीते जन्मे हरि जयमणि।	रूक्षमिणि से पैदा हरि जयमणि।
दुई पक्षे पंच पुत्र छिलो नृपमणि।।	दोनों पक्षों से पाँच पुत्रों के पिता थे राजन।।
राजमाला चल मुकुन्द माणिक्य खण्ड 32पृ	राजमाला चल मुकुन्द माणिक्य खण्ड 32पृ

अर्थात, ''मुकुन्द माणिक्य के नाम का गज सिक्का हुआ। मुहर में महारानी प्रभावती महारानी लिखा गया। उनकी दो रानियाँ थी उनमें श्रेष्ठ थी प्रभावती। जयंतिया राजा के एक ज्ञाति की लड़की थी उनकी धर्म में रूचि थी। ज्येष्ठ पुत्र पांचकड़ि मुर्शिदाबाद में ''तुल'' पद पर थे। कृष्णमणि और जयमणि आदि तीन भाई थे। रूकमणि रानी से हरि भद्रमणि का जन्म हुआ। दोनों पक्षों को मिलाकर राजा के कुल पाँच पुत्र थे''।

इस बारे में श्रेणी माला ग्रंथ में पाया जाता है –

''मुकुन्द माणिक्य नृपेर रानी प्रभावती।
बड़ुया राजार(1) ज्ञातिर होयेत संतति।।

अर्थात, ''मुकुन्द माणिक्य राजा की रानी प्रभावती थी जो बड़ुया राजा के ज्ञाति की लड़की थी।

0 0 0 0 0
0 0 0 0 0

मुकुन्द माणिक्य पत्नी और रूकमणी।
हरिमणि जयमणिर होयेत जननी।। – श्रेणीमाला।

अर्थात ''मुकुन्द माणिक्य की और एक पत्नी रूक्मणी थी। हरिमणि और जयमणि की जननी थी''।

राजमाला की उक्ति से जाना जाता है, महाराज जय माणिक्य की महिषि का नाम यशोदा महादेवी था। इसके अतिरिक्त उनके परिचय के बारे में और कुछ जाना नहीं जाता। उक्त ग्रंथ में लिखा है–

जयमाणिक्य राजा यशोदा नाम रानी।	जयमाणिक्य राजा रानी नाम था यशोदा।
एई नामे गजसिक्का कोरिलो आपनि।।	इस नाम से चलाया राजा ने गजसिक्का।।
राजमाला चल जय माणिक्य खण्ड 37पृ	राजमाला चल जय माणिक्य खण्ड 37पृ

अर्थात''जय माणिक्य राजा की यशोदा नाम की रानी थी, इसी नाम से उन्होंने राज सिक्का चलाया''।

---

(1) जंयतिया के राजा को बड़ुया राजा कहा जाता था।

चल–71

श्रेणीमाला ग्रंथ में लिखा गया है –

''पूर्बे रूद्रमणि सूबा नामेजे आछिलो।
जय माणिक्य नामे पोरे नृप होइलो।।
तान महारानी यशोदा नामेते।
जय मंगल ठाकुर जन्मिलेक ताते।।
श्रेणीमाला।

अर्थात, ''पहले रूद्रमणि नाम के एक सुबेदार थे। जय माणिक्य नाम से बाद में सिंहासन पर बैठे। यशोदा नाम की उनकी महारानी थी। जय मंगल ठाकुर उनके घर जन्में।

द्वितीय विजय माणिक्य की महिषि का परिचय ज्ञापक कोई बात राजमाला में नहीं है, केवल नामोल्लेख मात्र किया गया है।

बिजयमाणिक्य नामे बोसे सिंहासन।	विजयमाणिक्य नाम से बैठे वे सिंहासन।
सुनन्दा नामेते रानी ख्याति सेई क्षण।।	सुनन्दा नाम की रानी उनकी थी उस क्षण।।
राजमाला चल विजय माणिक्य खण्ड 44पृ	राजमाला चल विजय माणिक्य खण्ड 44पृ

अर्थात, ''विजय माणिक्य नाम से वे सिंहासन पर बैठे। सुनन्दा नाम रानी उस समय बहुत विख्यात थी''।

श्रेणीमाला ग्रंथ में महाराज विजय की सुनन्दा और शारदा नाम की दो महिषियों के नाम मिलते हैं। इस ग्रंथ में भी उनके परिचय प्रदान नहीं किये गये।

महाराज इन्द्र माणिक्य के महारानी का नाम दुर्गा महादेवी था। राजमाला में लिखा है

इन्द्रमाणिक्य राजा दुर्गा महरानी।	इन्द्रमाणिक्य राजा दुर्गा महारानी।
राजा रानी नामे गजसिक्का राजधानी।।	राजा रानी नाम से गजसिक्का राजधानी।।
राजमाला चल जय माणिक्य खण्ड 37पृ	राजमाला चल जय माणिक्य खण्ड 37पृ

राजमाला या श्रेणीमाला ग्रंथ में राज महिषि का परिचय नहीं है। कृष्णमाला ग्रंथ में, इन्द्र माणिक्य के लोकांतर के विवरण वर्णनोपलक्ष में प्रसंगवश कहा गया है –

युबराज मुख देखि, रानी बोले एकि एकि।
संगेते लोइया सखि गण।
युबराज बोले बाणी, बोलिते ना सरे पुनि।
नरपति त्यजिछे जीवन।
सुनि चन्द्र भीम सुता, होते अघातिया माथा
मही तले गड़े आधो मुखे।
कृष्णमाला।

अर्थात, ''युवराज के मुख की ओर देखकर रानी ने कहा यह क्या हुआ, यह क्या हुआ अपने साथ सखियों को लेकर। युवराज ने कहा, नरपति ने जीवन त्याग दिया, लेकिन वह वहीं खड़ी रही। चन्द्रमा की कन्या ने यह सुनकर सिर में काराघात किया अधेमुख होकर वहीं जमीन में गिर गई''।

इस वाक्य से हमें यह तो पता चला कि महारानी दुर्गा, चन्द्र भीम की कन्या थी। चन्द्र भीम कौन थे इसका विवरण या परिचय प्राप्त करने का कोई सुविधा नहीं है।

महाराज कृष्ण माणिक्य की महिषि का नाम जान्हवी महादेवी था। राजमाला या श्रेणीमाला ग्रंथ में केवल यही परिचय मिलता है –

कृष्णमाणिक्य राजा जान्हबा छिलो रानी।	कृष्णमाणिक्य राजा जान्हबा थी रानी।
राजा रानी नामे सिक्का प्रचार तखनि।।	राजा रानी नाम से मुद्रा चली अपनी।।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 50पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 50पृ

चल–72
कृष्ण माणिक्य रानी जान्हवा नामेते।
पुत्र कन्या ना होइलो ताहान गर्भेते।।
श्रेणीमाला।

महाराज कृष्ण माणिक्य ही आलोच्य चतुर्थ लहर के शेष राजा हैं। इस लहर के अन्तर्गत राजाओं में से किसने कहाँ विवाह किया था, यह संग्रह करना इस समय असंभव सा है। जो कुछ सामान्य विवरण संग्रह किया है, उसकी आलोचना से यह स्पष्ट हो उठता है कि राजस्थ लोक समाज के भीतर ही राज परिवार का यौन संबंध सीमित था। जंयतिया के राज परिवार के साथ इसी समय से मात्र आदान प्रदान का सूत्रपात हुआ था। उन दिनों त्रिपुर राज्य नितान्त दुर्गम और अरण्य संकुल था। दूर दराज के स्थानों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध जोड़ने में यही प्रधान बाधा थी। राज्य पश्चिम दिशा में सुविशाल लौहित्य सागर रहने की वजह से बंग देश के साथ राज्य का सम्बन्ध एक तरह से विच्छिन्न हो चुका था।

बहु विवाह की प्रथा राज परिवार में बहु विवाह की प्रथा आदि काल से ही चली आ रही है। राजमाला चतुर्थ लहर की घटनाओं के समय भी यह प्रथा पूर्ण रूपेण चल रही थी। इस लहर की आलोचना से यह स्पष्ट होता है कि महाराज गोविन्द माणिक्य के पुत्र राम माणिक्य ने बहु महिषी ग्रहण की थी। महाराज राम माणिक्य के पुत्र रत्नमाणिक्य की एक सौ बीस महिषियों के रहने के प्रमाण मिलते हैं। महाराज रत्नमाणिक्य की दो महिषि थी। महाराज विजय माणिक्य की दो महिषि का नाम पाया जाता है। दूसरे राजाओं के एकाधिक महिषि का नामोल्लेख न रहने पर भी इस प्रथा से उन्हें मुक्ति मिली थी, ऐसी बात नहीं है। श्रेणीमाला की आलोचना से यह जाना जाता है कि राज परिवार एवं इस परिवार से सम्पर्कित दूसरे व्यक्तियों में एकाधिक विवाह करने की होड़ लगी रहती थी। उन दिनों बहु विवाह जैसे एक अवश्य कर्तव्य के रूप में समाज में गृहीत हो चुका था। त्रिपुरा के बाहर भी दूसरे राज्यों में इस तरह के उदाहरण कम नहीं हैं। एक कन्यादान के साथ दहेज के रूप में और कई कन्याओं को पत्नी के रूप में दूल्हे को देने की प्रथा भी एक समय समाज में प्रचलित थी।

सहमरण कथा राजमाला चतुर्थ लहर के समकालीन सामाजिक अवस्था की आलोचना से यह तथ्य उभरकर सामने आता है कि उन दिनों बहु विवाह के आड़ में पुरूषों में स्वेच्छाचारिता आने पर भी महिलायें सतीधर्म के साथ विशेष यत्नवती होती थी। राज परिवार के प्रति नजर देने पर देखा जाता है कि महाराज रत्नमाणिक्य महिषि महारानी रत्नावती एवं महाराज मुकुन्द माणिक्य की महिषी प्रभावती महादेवी पति की चिता में आरोहण कर सतीधर्म की रक्षा की थी। राज परिवार की दूसरी महिलायें भी इस पथ के अवलम्बन विमुख

चल–73
नहीं थी। हरिमणि ठाकुर की पत्नी रत्नमाला ने पति के साथ सहमरण को वरण किया था। इस विषय में राजमाला का कहना है –

हरिमणि युबराज होइलो मरण।	हरिमणि युवराज का हुआ मरण।
रानी रत्नमाला देबी सहिते गमन।।	रानी रत्नमाला देवी ने किया सहगमन।।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 53पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 53पृ

श्रेणीमाला में भी इसका उल्लेख मिलता है। राजमाला में मात्र एक रानी के सहमरण की बात लिखी गई है। श्रेणीमाला में तीनों रानीओं का उल्लेख मिलता है –

हरिमणि युबराज स्वर्गगामी होइलो।
तान संगे तीन रानी सहगामी गेलो।

श्रेणीमाला

राजपरिवार के अलावा अन्यान्य परिवार के विषय की आलोचना करने से महिलागणों की पति की चिता में आत्मविसर्जन करने के बहुत से प्रमाण मिलेगें। उनके कुछ निदर्शन का उल्लेख किया जा सकता है।

''आछुमणि सूबार जे होइलो मरण।
तान तीन पत्नी सहमृता जे तखन।।''

''दुःखमणि ठाकुर गेलो स्वर्गपुरी।
सहगामी होइलेक बेचुरि कुमारी।।''

''रबिलोचन कबरा पत्नी पद्मलोचन सूता।
पति संगे कुमिल्लाते गेलो सहमृता।।''

''भद्रमणि देवयानेर काल प्राप्त होइलो।
तान पत्नी नव दुर्गा सहगामी गेलो।''

श्रेणीमाला।

अर्थात, ''आधुमणि सूबेदार की जब मृत्यु हुई और उनकी तीनों पत्नियों ने पति के साथ सहमरण को वरण किया।''

''दुर्गामणि ठाकुर के परलोक सिधारने के पश्चात उनकी पत्नी बेचुरी कुमारी पति के साथ सती हो गई।''

''रबिलोचन कबरा की पत्नी पद्मलोचन की कन्या कुमिल्ला में पति के साथ सहगामी हुई।''

''भद्रमणि दीवान के मरने के पश्चात् उनकी पत्नी नव दुर्गा पति के साथ सहमृता हुई।''

इस तरह के दृष्टांत और भी बहुत से हैं। इन सभी विषयों की आलोचना करने पर यह स्पष्ट ही प्रतीयमान होता है कि उन दिनों त्रिपुरा के खासतौर से बंग देश की रमणी समाज में स्वामी के साथ सहगामिनी होने की इच्छा विशेष प्रबल हो उठी थी। घर घर में सदा यह व्रत अनुष्ठित होता था। एक पति के साथ एकाधिक पत्नियों के सहमरण के दृष्टांत भी मिलते हैं जो ऊपर हमने दिये हैं।

राजा व रानी के एक नाम रखने की प्रथा राजा के नाम के साथ रानियों के नाम के सादृश्य करने का हर संभव प्रयास किया जाता था। स्मरणातीत काल के राजा आचोंग फा के समय यह प्रथा प्रवर्तित हुई थी(1)। राजमाला के पूर्व पूर्व अंशो की आलोचना से यह जाना जाता है कि यह प्रथा उत्तरोत्तर शिथिल होने पर भी

---

(1) आचोंग राजार नाम आचोंग मा रानी।	आचोंग राजा का नाम, आचोंग मा रानी।
तदवधि राजा रानी एक नाम जानी।।	तब से एक नाम है राजा रानी।।
राजमाला प्रल छेंथुम फा खण्ड 59पृ	राजमाला प्रल छेंथुम फा खण्ड 59पृ

अर्थात, ''आचोंग फा राजा का नाम था और और आचोंग माँ महारानी का नाम हुआ। तब से राजा रानी का एक नाम रखना शुरू हुआ।

चल–74
किसी किसी राजा ने इस पुरानी प्रथा को पुनः चालू करने की कोशिशें की थी। राजमाला चतुर्थ लहर में इसके बहुत से दृष्टांत मिलेगे। महाराज रत्नमाणिक्य की प्रधान महिषी का नाम था रत्नावती। महाराज धर्म माणिक्य के महिषी का नाम था सुभद्रा। उनके युवराज प्राप्ति के समय से ही उस नाम को बदलकर ''धर्मशीला'' रखा गया। इस बारे में राजमाला में लिखा गया है –

रत्नमाणिक्य राजा युवक होइलो।	रत्नमाणिक्य राजा हो गया जवान।
छय कुडि जन कन्या बिबाह कोरिलो।।	एक सौ बीस कन्याओं का किया पाणिग्रहण।।
मुख्य रानी रत्नाबती बोसिलो विदित।	मुख्य रानी रत्नावती हुई जगत विदित।
राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 20पृ	राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 20प

''धर्म माणिक्य श्रेणी कोरिबो व्याख्यान।
सुभद्रा नामेत रानी धर्मशीला ख्यान।।'' श्रेणीमाला

इनका भावार्थ पहले दिया जा चुका है – अनुवादक।

यह प्राचीन पद्धति की रक्षा की प्रचेष्टा के अलावा और क्या हो सकती है? केवल इसी विषय को लेकर ही बात सीमित नहीं है – सभी विषयों की पद्धतिओ की रक्षा के लिए निमित त्रिपुर भूपतिओं की प्रबल आकांक्षा परिलक्षित होती है। यह त्रिपुर राजवंश की एक उल्लेख योग्य सद्गुण है।

मृत राजा की अन्त्येष्टि क्रिया संपादन पद्धति

इस वंश की और एक विशेष प्रथा यह है कि किसी राजा के परलोक गमन के पश्चात उनके उत्तराधिकारी राजत्व का भार लेकर परलोकगत राजा की अन्त्येष्टि क्रिया के सम्पादन के लिए आदेश प्रदान करने पर उनका यह देह दाह संस्कार आदि किये जाते थे। राजमाला चतुर्थ लहर की घटनाओं के समय भी यह नियम पूर्ण मात्रा में प्रतिपालित हुई है। महाराज मुकुन्द माणिक्य देह रक्षा के समय, महारानी प्रभावती वागशीमुल गाँव में, एवं एक राजपुत्र पांचकड़ि ठाकुर प्रतिभूति स्वरूप मुर्शिदाबाद में थे। महाराज की मृत देह सात दिनों तक तैल पात्र में रक्षित की गई थी। इसके बाद महारानी के लौटने के बाद, राजा की अन्त्येष्टि क्रिया की व्यवस्था की गई। वे पति के साथ सहगमन के लिए चिता पर चढ़ने के लिए तैयार हुई। इस समय गोविन्द माणिक्य के भ्राता जगन्नाथ ठाकुर के प्रपौत्र रूद्रमणि ठाकुर सुबेदार के पद पर प्रतिष्ठित थे।। वे प्रधान सेनापति फौज विचार नारायण के साथ षड़यंत्र करके, सिंहासन प्राप्ति के लिए प्रयासी हुए। सेनापति ने राजा की देह को चिता पर चढ़ाने से रोक रखा और महारानी से कहा, राज्य को अराजक कर राजा के साथ महाप्रस्थान करना आपके लिए संगत नहीं होगा। उन्होंने कौलिक प्रथा का स्मरण दिलाया और कहा –

नव्य राजा सिंहासने वसिया आसन।	नये राजा बैठे जब सिंहासन।
मृत राजा दहिबारे आदेश कोरेन।।	आदेश करेगें वहीं मृत राजा के दहन।।
राजमाला चल मुकुन्द माणिक्य खण्ड 35पृ	राजमाला चल मुकुन्द माणिक्य खण्ड 35पृ

अर्थात, ''नए राजा सिंहासन पर बैठकर मृत राजा के दाह संस्कार के लिए आदेश प्रदान करते हैं।''

नवीन भूपति सिंहासन पर बैठकर जब तक आदेश नहीं देगें तब तक राजा की अन्त्येष्टि क्रिया नहीं हो सकती और इसी कारण को दर्शा कर रूद्रमणि को राजा करने के लिए

चल–75

महारानी की सम्मति माँगी। महारानी ने कहा, ''मैं महाप्रस्थान कर रही हूँ, इस समय मुझे बाधा प्रदान करना या मेरी मतामत नितांत ही अकर्तव्य है। राजा का पुत्र रहते हुए दूसरे को राज गद्दी सौंपने के लिए मैं सम्मति प्रदान नहीं कर सकती। मुझे तुम्हारे हाथों से मुक्ति दो। मेरे देह त्याग के पश्चात् तुम्हारे धर्मानुगत भाव में जो भी इच्छा हो, वही करना।'' इसके बाद सेनापति फौजविचार नारायण ने राजा की मृत देह को छोड़ जन साधारण को लक्ष्य कर कहा, ''रूद्रमणि सुबेदार को राजा बनाने के लिए महारानी ने आदेश दे दिया है। इस अमुलक वाक्य के ऊपर निर्भर कर सूबा रूद्रमणि ने सिंहासन अधिकार कर लिया और राजा के मृत देह की अन्त्येष्टि क्रिया का आदेश दिया।

इस पारिवारिक प्रथा के, राजमाला चतुर्थ लहर संसृष्ट के बाद भी, बहुत दिनों तक चलती रही इसके निदर्शन मिलते हैं। नाना तरह के छल प्रतारणा के युग में भी प्राचीन पद्धति के प्रति इस तरह के श्रद्धा – प्रदर्शन कम गौरव की बात नहीं है।

शिक्षा और साहित्य चर्चा

राजपरिवार शिक्षा विषयक आलोचना राजमाला चतुर्थ लहर के अंतर्भूक्त राजाओं में कौन किस तरह के विद्वान और शिक्षित थे, इसका कोई विवरण लिखा नहीं गया। किसी किसी राजा के शिक्षा के बारे में सामान्य इंगित मात्र है। महाराज धर्म माणिक्य(द्वितीय) के बारे में मिलता है।

धर्ममाणिक्य राजा छिलो ज्ञानबान।	धर्ममाणिक्य राजा थे बडे ज्ञानवान।
राजमाला चल धर्ममाणिक्य खण्ड 29पृ	राजमाला चल धर्ममाणिक्य खण्ड 29पृ

अर्थात, ''धर्म माणिक्य राजा ज्ञानवान था।''

इसके द्वारा राजा की शिक्षा और ज्ञान के बारे में एक आभाष मिलता है। इस समय मुसलमानों के साथ घनिष्टता प्रारंभ होने पर राज परिवार में बंगला और संस्कृत के साथ पारसी भाषा की चर्चा भी चल रही थी। महाराज मुकुन्द माणिक्य के पुत्र भद्रमणि की शिक्षा के बारे में राजमाला में लिखा है –

जयमणिर मृत्यु होइलो अति शिशुकाल।	जयमणि की मृत्यु हुई अति शिशु काल।
भद्रमणि काल प्राप्त तार पोरे होइलो।।	उसके पश्चात भद्रमणि हुए प्राप्त काल।।
पार्शि शास्त्रेते भालो विद्या छिलो ज्ञान।	पारसी शास्त्रों में अच्छी विद्या और था ज्ञान।
जेमत राजार पुत्र तेमत विद्वान।।	जैसे राजा के पुत्र थे वैसे थे विद्वान।।
राजमाला चल मुकुन्द माणिक्य खण्ड 32पृ	राजमाला चल मुकुन्द माणिक्य खण्ड 32पृ

अर्थात, ''जयमणि की मृत्यु शिशु काल में ही हो गई। उसके बाद भद्रमणि भी काल ग्रस्त हो गया। उसे पारसी शास्त्र में अच्छा ज्ञान था। जैसे योग्य राजा पुत्र भी वैंसा ही होगा।''

महाराज इन्द्रमाणिक्य भी पारसी भाषा में विशेष ज्ञान प्राप्त किये थे। इसका प्रमाण मिलता है। वे मुर्शिदाबाद नवाब के दरबार में अपनी विद्या के बल पर असाधरण प्रतिपत्ति प्राप्त किये थे। यहाँ तक कि नवाब के भाषा में भी गलतियाँ पकड़ कर उन्हें लज्जित करने में भी नहीं छोड़े एवं पारसी भाषा के धर्म गीत गाकर बहुत समय उन्होंने नवाब को भी विमोहित कर दिया था। इस बारे में राजमाला में है –

इन्द्रमाणिक्य राजा छिलो जिद्धबंत।	इन्द्रमाणिक्य राजा था बडा जिद्दीवंत।
जेई सेई कर्मेते जे असह्य अत्यन्त।।	जैसे तैसे कर्म को सह न सकता अत्यंत।।

चल–76

पारसि शास्त्रेते विद्या आछिलो बहुल।	पारसी शास्त्र की विद्या थी विशाल।
तान भाषा शुन्या मगल होइलो व्याकुल।।	उसकी भाषा सुनकर मुगल होते थे व्याकुल।।
कि बोलिते किबा आइसे पारसि भाषाये।	क्या कहते क्या आती पारसी भाषा।
अशुद्ध होइले ताके दोषये राजाए।।	अशुद्ध होने पर टोकते रहते सुधारने में।।
मुरछिदिया गीत राजा सुस्वरे बोलितो।	मुरछिदिया गीत राजा सुस्वर से कहते।
भाबेत आवेश मंगल रोदन कोरितो।।	भावावेश में मुगल तब रोने लगते।।
राजमाला चल जयमाणिक्य खण्ड 41–42पृ	राजमाला चल जयमाणिक्य खण्ड 41–42पृ

अर्थात, ''इन्द्र माणिक्य राजा बड़े जिद्दी थे। जैसे तैसे कर्मो को करना उनके लिए असहनीय था। पारसी शास्त्र में उन्हें बड़ी विद्वता थी और ज्ञान था। उनकी भाषा सुनकर मुगल बडे व्याकुल हो जाते थे। पारसी भाषा में क्या कहने जाकर क्या शब्द आ जाता था नवाब को। अशुद्ध होने पर राजा नवाब को टोकते थे और सुधारते थे। पारसी भाषा की धर्म गीत जिसे मुरसेदिया कहते हैं, उसे वे सुस्वर से गाते थे। भावावेश में मंगल(मुगल) रोने लगते थे।''

इन सभी उक्तिओं से जाना जाता है कि उस समय राज परिवार में शिक्षानुराग की वृद्धि हुई थी। पहले राजमाला में जिन सभी वाक्यों को उद्धृत किया है इसके द्वारा पारसी भाषा चर्चा का प्रमाण मिलेगा। बंग भाषा त्रिपुरा की राजभाषा है। अतएव उसे आवश्यक रूप से सीखना पड़ता था। इसके अलावा शास्त्र आलोचना के लिए उन दिनों संस्कृत भाषा सीखने की आवश्यकता पड़ती थी। अतएव राज परिवार में बंग भाषा सीखने का रिवाज था, यह आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है। यह परिवार चिर दिन ही धर्म प्रवण था। शास्त्र चर्चा के उद्देश्य से सभी अल्पाधिक परिमाण में संस्कृत भाषा की आलोचना करते थे। इस तरह का अनुमान लगाना असंगत नहीं होगा।

साहित्य सेवा

बंग भाषा व बंग साहित्य का पुष्टि विधान

त्रिपुरेश्वर गण तथाकथित त्रिपुर राज्य चिर काल से ही बंग भाषा का पक्षपाती है एवं पृष्ठ पोषक रहे हैं। उन दिनों के दीन क्षीण बंग भाषा को राजभाषा का आसन प्रदान कर ये चिर काल ही गौरव अनुभव करते आये हैं। इस भाषा की श्री वृद्धि के लिए भी त्रिपुरेश्वरों ने बहुत कुछ किया है।

राजमाला चतुर्थ लहर के अन्तर्भुक्त राजन्य वर्गो में भी साहित्य सेवा का व्रत विशेष रूप से परिलक्षित होता है। महाराज गोविन्द माणिक्य और महाराज रामदेव माणिक्य के आदेशानुसार राजमाला की तृतीय लहर रचित हुई है। यह ग्रंथ कितना मूल्यवान है, इसे सभी जानते हैं। गोविन्द माणिक्य की अनुज्ञा से बंगला भाषा में अनुदित बृहन्नारदीय पुराण का नाम यहाँ पर विशेष उल्लेख योग्य है। उस ग्रंथ का स्थूल विवरण यहाँ पर दिया जा रहा है।

महाराज गोविन्द माणिक्य की अनुज्ञा से वह ग्रंथ रचित हुआ था। ग्रंथ के प्रारंभ में उसका परिचय मिलता है। उस विशाल विवरण का कुछ अंश यहाँ उद्धृत किया जा रहा है –

चन्द्रवंश अबतंश त्रिपुर भूपति।
बिष्णुपरायण धर्मशील साधुमति।।

चल–77

गोविन्द माणिक्य देव धर्म अबतार।
धर्मेते पालिला राज्य बिदित संसार।।
0 0 0
0 0 0
कोहिलेन महाराज सुनो विप्रगण।
अकाले मरये प्रजा पापेर कारण।।
ना कोरे विष्णुर पूजा तुलसी पूजन।
ना कोरे अतिथि सेवा ब्राह्मण भोजन।।
ना कोरे गुरूर पूजा साधु समागम।
तीर्थ सेवा नाहि कोरे धर्मे वासे श्रम।।
पुराणेर अर्थ गुरू बुझिते संशय।
एहाते उपाय एक मोर मने लोय।।
बृहन्नारदीय नाम पुराण विशेष।
एहाते ए सब कथा कोहिछे विशेष।।
सुनो सब बिप्रगण श्लोक अनुसारे।
भाषा पदवन्द कोरो लोक बुझिबारे।।
0 0 0 0
अकाले बुद्धि मेधाहीन प्रजा पापचारी।
अकाले मरये सब धर्म परिहरि।।
सुनिया पुराण कथा होइबो साधु अति।
लोक उपकार हेतू कोरिजे प्रणति।।
एमत आदेश यदि कोरिलो नृपति।
साधुबादे बिप्र सबे दिला अनुमति।।
सुषम बिषम जतो पुराणेर सार।
आरंभिला भाषा रूपे कोरिते प्रचार।।

अर्थात, "चन्द्र वंश में जन्म लेने वाले त्रिपुरा के भूपति विष्णु भक्ति परायण, धर्मशील और साधु मानसिकता वाले हैं। गोविन्द माणिक्य देव धर्म के अवतार हैं। धर्म से ही उन्होंने प्रजा का पालन किया है। महाराज ने कहा, हे विप्रगण आप सुनिए। प्रजा अकाल में मृत्यु को प्राप्त होती है पाप के कारण। वह न विष्णु की पूजा करती है, न साधु समागम का समादर करती है और न तीर्थ सेवन करती है। धर्म को श्रम मानती है। पुराणों के गूढ अर्थ समझने में सशंय करती है। मेरे मन में एक विचार आया है। बृहन्नारदीय एक विशेष पुराण है। इसमें ये सारी बातें लिखी गई हैं। सुनिये विप्रगण, इन श्लोकों को भाषा में पदबन्द कीजिये जिसे सभी लोग समझ सकें।

प्रजा पापाचारी होने से अकाल में बुद्धि मेधाहीन हो जाती है। धर्म का त्याग करने से ही अकाल में ही मृत्यु होती है। पुराणों की बातों को सुनकर साधु भाव आयेगा। मैं लोक हित के लिए सबको प्रणाम करता हूँ। राजा की बातों को सुनकर सभी विप्रों ने उन्हें साधुवाद दिया और अनुमति प्रदान की। सुषम विषम विषय जितने भी पुराण तत्व हैं भाषा रूप में उन्हें प्रचार के लिए पदबन्द करना अहम कर दिया जाने लगा।"

उद्धृत उक्तियों के अंश को पाठ करने पर ज्ञात होता है कि प्रजाओं की हित कामना ही महाराज को इस कार्य के लिए उद्धृत किया था। केवल ग्रंथ रचना करके ही वे चुप नहीं बैठे, उसे साधारण जनता में प्रचार के लिए यत्नवान थे। उन दिनों मुद्रा यंत्रों का प्रचलन नहीं था। अतएव हस्तलिखित पुस्तक आदरणीय थी। इसलिए –

पांचाली प्रबन्ध कोरि पुस्तक रचिलो।
सर्ब लोके लेखाइते ताके आज्ञा दिलो।।
एई पाँचाली पूँथि पड़े जेई जन।
पुराणेर फल से जे पाय ततो क्षण।।
ऐतेक जानिया प्रजा प्रधान प्रधान।
जने जने लेखाइलो पूँथि एकखान।।

अर्थात चालीसा की तरह एक पुस्तक रची गई। इस पुस्तक को जो पढेगा उसके मन में पुराण का फल उसे मिलेगा। प्रधान प्रधान प्रजाओं को देकर एक एक पुस्तक लिखी गई।

राजा के इस तरह के प्रयत्न से बहुत लोगों घर में इसकी एक प्रतिलिपि रखी गई थी, सन्देह नही है। लेकिन दुःख के साथ कहना पड़ता है कि एक मात्र वजीर के घर में

को छोड किसी के घर यह ग्रंथ उपलब्ध नहीं है। विधि बिडम्बना से यह ग्रंथ भी गृह दाह के फलस्वरूप विनष्ट हो चुका है। साहित्यानुरागी स्वर्गीय महाराज राधा किशोर माणिक्य बहादुर की अनुज्ञा से पूज्यपाद पण्डित श्रीयुत चन्द्रोदय विद्याविनोद महाशय के तत्वाधान में वजीर के घर में सुरक्षित पाण्डु लिपि मुद्रित हुई थी। इसे अतिभाग्य का विषय ही कहना चाहिए। अगर ऐसा नहीं होता पुस्तक के विनाश के साथ इस ग्रंथ का अस्तित्व भी विलुप्त हो जाता।

इस ग्रंथ के रचियता कौन हैं, यह निर्णय करना असंभव है। ग्रंथ के अन्त में एक जगह लिखा हुआ है ''देवाई पण्डित कहे''।

इस उक्ति पर निर्भर करके किसी किसी का कहना है, यह देवाई पण्डित द्वारा रचित है। प्राचीन काल में अनेक लेखक बंगला में छोटी 'इ' (के) की मात्रा को ई लिखाते थे। इसलिए ऐसा भ्रम हो गया है। इससे पहले हम भी इसे देवाई पण्डित का बृहन्नारदीय पुराण नाम से ही अभिहित किये थे। किन्तु ग्रंथ की भनिता की आलोचना से यह अनुमान विशुद्ध नहीं लगता। भनिता में लिखा है –

''श्रीश्रीयुत गोविन्द माणिक्य नरेश्वरे।
नारदीय अर्थ सब लोके बुझिबारे।।
पांचाली कराइलो राजा अनुमति दिया।
पण्डित सकले कोइलो पुराण देखिया।।''

अर्थात, श्री श्रीयुत गोविन्द माणिक्य नरेश्वर ने नारदीय पुराण का अर्थ जैसे सभी लोग समझ सकें पांचाली (चालीसा की तरह) लिखाया है अपनी अनुमति देकर पण्डितों ने पुराण को देखकर इसका प्रणमन किया।''

ऊपर ऊपर बंगला में ''पण्डित सकले कोइलो'' (अर्थात सभी पण्डितों किया) से समझा जाता है कि यह ग्रंथ एकाधिक पण्डितों की समवेत चेष्टा से रचित हुआ है। ग्रंथ में दिये गये 'पाइमू, होइया, कोरिमू, होइमू, अपाय' आदि शब्दों की आलोचना से यह स्पष्ट होता है कि ये रचियता पूर्व बंगीय थे। गहराई से आलोचना करने पर आह्मि, कोन्ह, शुतिया' आदि शब्द दिखाई देते हैं। नोयाखाली, चट्ट गाँव और त्रिपुरा के प्राचीन कवियों में अपनी कविताओं में तुमि (तुम) के स्थल पर तुह्मि, आमि के स्थल पर आह्मि, कोन (कौन) के स्थल पर कोन्ह शुइया (सोकर) के स्थल पर शुतिया या 'हुतिया' इत्यादि शब्दों के प्रयोग मिलते हैं। चट्ट गाँव और नोयाखाली जिला के सर्वत्र एवं दक्षिण त्रिपुरा के कथित भाषा में इस तरह के अनेक शब्द व्यवहृत होते हैं''। अतएव इस ग्रंथ के सभी कवि इन जिलाओं के ही किसी जिला के रहने वाले थे, यह अनुमान शायद असंगत नहीं होगा। उन दिनों राज दरबार में त्रिपुरा में रहने वाले पण्डितों का ही अधिक आदर था। अतएव इनका त्रिपुर वासी होना कोई असंभव सी बात नहीं है। इन पण्डितो को नाम और परिचय संग्रह करना इस समय दुःसाध्य है।

चल–79

इस ग्रंथ की रचना का समय निर्णायक वाक्य ग्रंथ में दिये जाने के कारण इसकी प्राचीनता के निर्णय में सुविधा हुई है। ग्रंथ के प्रथम भाग में ही लिखा है।

"एक नब वाण चन्द्र शाक परिमाने।
कार्तिक मासेर पंच दिन अवसाने।।
सेई दिन सभा मध्ये बोसे महाराजे।
कोरिला धर्मेर चिंता धर्मेर समाजे।।"

ऊपर दी हुई श्लोक कविता में देखिये – एक नव वाण चन्द्र पहले आया है। एक–(1), नव–(9), वाण–(5), चन्द्र–(1)। अंको की उल्टी गिनती के नियम से यह देखा जाता है अब इसका अर्थ हुआ 1591 शक के कार्तिक महीने की 5 तारीख दिवासवसान के पश्चात अर्थात रात को राज दरबार में ग्रंथ रचना का आदेश हुआ था। अतएव एक अढ़ाई सौ साल पहले का प्राचीन ग्रंथ के रूप में निर्णीत हुआ है। यह महाराज गोविन्द माणिक्य के दूसरी दफे राजत्व काल का ग्रंथ है। इस समय धर्म ग्रंथों के धर्म अनुवाद रचना के प्रबल स्रोत में समग्र बंग देश प्लवित हो रहा था।

यह अनुवाद अतिसुश्रृखंल भाव से दक्षता के साथ सम्पादित हुआ है एवं इसके सारे खण्डों की भाषा जितनी प्रांजल है उतनी सरस भी है। जगह जगह पर अनुवादक की भाषा पर मुग्ध होना पड़ता है। अनेक बातें मतों के रूप में व्यवहार करने योग्य हैं। दो एक पद यहाँ दिये जा रहे हैं।

(1) कर्म फल दाता एई भारत भुवन।
ताते थाकि पाप कोरे अति मुर्ख जन।।
कामधेनु छाड़ि से जे मुर्ख दूराचार।
अर्कक्षीर चेष्टा कोरे ना जानिया सार।।

(2) प्रतिदिन धर्म न कोरोये जे नर।
व्यर्थ, दिन जाय ना पूजये गदाधर।।
शासये जे जीबहीन, कामारेर भाति।
तेमेन जीवने जिये सेई मूढ़मति।।

(3) सूर्यरश्मि दिने कोरे अधंकार नाश।
गुढ़ अंधकार नारे कोरिते प्रकाश।।
साधु जन शुद्ध वाक्ये रश्मि परकाशे।
अंतरेर अंधकार सकल बिनाशे।।

अर्थात, यह भारत भुवन कर्म फल का दाता है। इस देश में रहकर जो पाप करता है वह मूर्ख है। कामधेनू के दूध को छोड़कर जो अर्कक्षीर अर्थात अकवन के दूध को श्रेष्ठ समझता है, वह मूर्ख और दुराचारी है।
जो नर प्रतिदिन धर्माचरण नहीं करता, न भगवान की पूजा करता है, उसका दिन व्यर्थ जाता है। वह उसी तरह है जिस तरह लोहार की भट्टी साँस लेती है पर प्राणहीन है। वह मूढ़मति भी उसी तरह जीवन धारण करता है।
सूर्य की किरणें अंधकार को नाश करती हैं। अंधकार प्रकाश नहीं दे सकता। साधुओं के शुद्ध वचन से प्रकाश किरणें फूट निकलती हैं और हृदय के अज्ञानता रूपी अंधकार को विनाश करती हैं।"

समग्र ग्रंथ इस तरह के मूल्यवान वाक्यों से परिपूर्ण है। थोड़े शब्दों से ग्रंथ का परिचय प्रदान की चेष्टा एक नितान्त व्यर्थ प्रयास लगता है। यहाँ इसके अतिरिक्त आलोचना करना नितान्त असंभव है। इस ग्रंथ के द्वारा महाराज गोविन्द माणिक्य का यश और उनकी कीर्ति सुरक्षित हुई है।

महाराज धर्म माणिक्य (द्वितीय) ने बंगला भाषा में महाभारत का पद्यानुवाद कराया था। दुख की बात है इस समय यह ग्रंथ विलुप्त हो गया है। उन दिनों

चल–80
मुद्रण यंत्र का प्रचलन न होने की वजह से अनेक मूल्यवान ग्रंथ उस महाभारत की अवस्था को प्राप्त हो चुके हैं। इसी कारणवश भविष्य काल की जो अपार क्षति हुई है। इसका आँकडा निर्णय करना असाध्य है।

महाराज छत्र माणिक्य के प्रपौत्र जगत माणिक्य ने पद्म पुराण के अन्तर्गत "क्रिया योग सार" के अंश का पद्यानुवाद कराया था। इसमें सृष्टि प्रकरण, वैष्णव महात्मय, गंगा महात्मय, प्रयाग महात्मय, सागर संगम महात्मय, विष्णु पूजा महात्मय, हरि पूजा विधि, विष्णु महात्मय, पुरूषोत्तम क्षेत्र महात्मय, दान महात्मय, ब्राह्मण महात्मय, एकादशी महात्मय, तुलसी महात्मय, अतिथि पूजा का फल आदि अनेक मूल्यवान धर्मोपदेश हैं। अन्त में युगलक्षण वर्णन द्वारा ग्रंथ की परिसमाप्ति हुई है। यह ग्रंथ पच्चीस अध्यायों में विभक्त है। ग्रंथ की सूचना में देव देविओं की वन्दना के पश्चात लिखा है –

चन्द्र वंश अवतंश त्रिपुर नृपति। छत्र माणिक्य देव संसारेते ख्याति।।
ताहान तनय होइलो महाभाग्यबंत। श्री युत उत्सवराय राजा मतिमंत।।
\+ + + + + + + +
ताहान तनय होइलो हरि परायण। श्रीलश्रीयुत राजा जय नारायण।।
\+ + + + + + + +
ताहान तनय होइलो हरि परायण। श्रीश्रीयुत जगत माणिक्य पुण्यबान।।
\+ + + + + + + +
बोलिलेन महाराज सुनो विप्रगण। अल्प काले प्रजा मरे पापेर कारण।।
ना कोरे विष्णुर पूजा ना सेबे तुलसी। ना पूजे अतिथि विप्र वैष्णव सन्यासी।। आदि।
\+ + + + + + + +
ना बूझे पुराण अर्थ गीता भागवत। जतेक सकल श्लोक पाप उपगत।
पुराणेर अर्थ कूट बूझिते संशय। इहाओ कारण एक मोर मने लोय।।
क्रिया योगसार नाम उत्तम पुराणे। नाना इतिहास आछे धर्म अनुष्ठाने।।
सेइ पुराणेर श्लोक अर्थ अनुसारे। पदबन्द कोरि देहो, लोके बुझिबारे।।
\+ + + + + + + +
हस्त जोड़ कोरि बोले ब्राह्मण मुकुन्द। आज्ञा पाइले आमि एथा कोरि पदबन्द।।

भावार्थ, " चन्द्र वंश में जन्में राजा छत्र माणिक्य देव हैं जिनकी ख्याति चारों ओर फैली थी। जिनके लड़के श्रीयुत उत्सव राय सुन्दर मानसिकता है।

उनके लड़के हुए हरि भक्ति परायण जिन्हें राजा जय नारायण के रूप में जाना जाता है

उनके पुत्र भी हरि भक्ति परायण हैं जिन्हें पुण्यात्मा जगत माणिक्य कहा जाता है।

महाराज ने कहा, सुनो विप्र गण, पाप के कारण हर कम उम्र में प्रजा की मृत्यु होती है। वे न भगवान की पूजा करते है न तुलसी की सेवा करते हैं। यहाँ तक कि अतिथि, विप्र, वैष्णव और सन्यासियों की पूजा नहीं करते।

वे न गीता, न पुराण, न भागवत का अर्थ समझते हैं। जिनके सारे श्लाको से पाप नष्ट होती है। शायद पुराणों का गूढ़ मर्म वे नहीं समझ पाते। मेरे मन में एक विचार आया है कि "क्रिया योग सार" नाम का एक उत्तम पुराण है। धर्मानुष्ठान के इसमें बहुत से विधान हैं। उस पुराण को पदबन्द करके साधारण लोग जैसे समझ सकें प्रचार किजिये। मुकुन्द नाम के एक ब्राह्मण ने कहा कि आज्ञा मिलने पर मैं ही उनका पदबन्द कर दूँगा।

चल–81

तुष्ट होइया दिलो राजा सपुष्य चन्दन। वस्त्र आभरणे विप्रे कोरिलो अर्चन।।
नृपति आदेश जे आरोपिया माथे। आरभिंल पदबन्ध नृपति साक्षाते।।
विषम सुषम जतो क्रिया योगसार। श्री विष्णु बन्दिया रचे उत्तम पयार।।''

भावार्थ, ''राजा ने तुष्ट होकर सुपुण्य चन्दन, वस्त्र और आभरणों से विप्र देवता का अर्चन किया। नृपति के आदेश को अपने माथे पर आरोप कर राजा के सामने उन्होंने पदबन्ध करना शुरू किया। विषम, सुषम क्रिया योग सागर का भगवान विष्णु की वन्दना कर उन्होंने उत्तम छन्द की रचना आरंभ की।''

ग्रंथ रचियता का नाम मुकुन्द था, केवल यही पता चलता है। इसके अतिरिक्त ग्रंथ रचियता का पूर्ण नाम या परिचय ज्ञापक कोई विवरण ग्रंथ में नहीं मिल सका। इस समय अनुसंधान के द्वारा भी कोई सूत्र मिलना असंभव हो गया है। इसलिये हम बहुत ही दुखी हैं। महाराज जगत माणिक्य के पितामह उत्सव राय के समय से ही वे सभी ढाका में उपनिवेश की स्थापना कर रहे थे एवं वहाँ के पंडित मण्डली के साथ इस प्रकार घनिष्टता हो गई थी। शायद इसी वजह से यह अनुमान लगाया जाता है कि रचयिता ढाका के रहने वाले थे। त्रिपुरा राज्य में विरचित दूसरे गंथों के तरह इस ग्रंथ की भाषा में त्रिपुरा अंचल के प्रचलित किसी शब्द का व्यवहार नहीं मिलता।

इस ग्रंथ के रचना निर्णायक समय का विवरण ग्रंथ में ही मिला है। ग्रंथ की सूचना में लिखा है –

''बसुवेद रस अर्क शक परिमाण।
बैशाख मासेर दस दिन अबसान।।
सोमबारे अमावस्या पुण्य तिथि जानि।
कोरिलो धर्मेर चिंता विप्रगणे आनि।।''

बसु –8, बेद–4, रस–6, अर्क–1, अंक की बामागति के हिसाब से इस ग्रंथ के रचित होने का काल 1648 शक होता है। कमोवेश दो सदी का प्राचीन ग्रंथ है यह।

पद्म पुराण की तरह मूल्यवान और सुविख्यात ग्रंथ का परिचय प्रदान करना अनावश्यक है। उसके अन्तर्गत क्रिया योग सार कितना सार गर्भ है, आलोच्य ग्रंथ को मात्र एक बार पाठ करने पर आसानी से समझा जा सकता है। यहाँ पर हम उस विषय का आभाष मात्र दे रहे हैं –

(1) क्षत्रिय वीर सुबाहु की पत्नी चन्द्र कला के प्रति, तालध्वज पुरी के राज पुत्र माधव ने जब बल प्रयोग करना चाहा तो चन्द्र कला ने कहा, –

परस्त्री हरिते चाव मने नहि भय।
हरिले नरक भोग जानिबे निश्चय।।

अर्थात, ''पर स्त्री हरण करना चाहते हो। मन में भय नहीं है क्या? यह निश्चय जान रखो हरण करने पर घोर नरक भोग करना होगा।

चल–82

लोभ होते काम जन्में काम होते पाप। पाप होते मृत्यु होय आर जे संताप।।
\+ + + + + + + +
भुंजये विवेकी जने परम सम्पद। अविवेकी होइले भुंजे परम आपद।।
आपनि नृपति देखी नाहि पाप भय। मस्तक ऊपरे गर्जे शमन दुर्जय।।
ताहारे ना देखो तुमि ए दुई नयने। परलोके भय तब ना होइलो मने।। आदि।

अर्थात, ''लोभ से काम और काम से पाप, पाप से मृत्यु और संताप होता है।

विवेकी परम सम्पद पाते हैं और अविवेकी होने पर परम आपदा पाते हैं। स्वयं राजा होकर क्या मन में क्या पाप भय नहीं है। सिर पर दुर्जय काल गरज रहा है। उन्हें तुम इन दोनों आँखों से नहीं देख पा रहे हो। परलोक का डर क्या तुम्हें नहीं है।

(2) चन्द्र वंशीय मनोभद्र राजा ने अपने वृद्धावस्था में अपने मंत्रियों को सम्बोधन करके कहा –

''पालिनु सकल पृथिवी सप्तदीप समें। संहारिनु बैरी पक्ष आपन बिक्रमें।।
आपनार गोत्र जतो कोरिनु पालन। बहुदान कोरि तुष्ट कोरिनु ब्राह्मण।।
तुषिलाम सर्ब देव कोरि यज्ञ दान। सब लोक तुष्ट होइया कोरिलो बाखान।।
एखने आमाते होइले जरा परबेश। ना होइ राज्ये योग्य दुर्बल विशेष।।
\+ + + + + + + +
कृपण दुर्बल होइले शत्रु परकाश। मूर्ख मंत्री परामर्शे नृपति बिनाश।।
बृद्धकाल होइलो आर राज्ये कोन कार्य। दुई पुत्र राजा कोरि दिब सर्ब राज्य।।''

अर्थात, ''मैने सप्तद्वीप के साथ सारी पृथ्वी का पालन किया है। अपने विक्रम से मैने बैरियों का संहार किया है। अपने गौत्रीय लोगों का पालन किया है। बहुत से दान करके मैने ब्राह्मणों को तुष्ट किया है। यज्ञ और दानादि से मैने देव देवियों को तुष्ट किया है। सभी लोग तुष्ट होकर हमारी प्रशंशा करते हैं। अब मेरी देह में जरा (वार्धक्य) ने प्रवेश किया है। मैं राज्य संचालन योग्य नहीं रहा – शरीर विशेष दुर्बल हो गया है।''

''शरीर दुर्बल होने पर शत्रु आत्म प्रकाश कर सकते हैं। मूर्ख मंत्री के परामर्श से राजा का विनाश होता है। बृद्ध हो गया, अब राज्य में मेरा क्या कार्य रह गया है। दोनों पुत्रों को सारा राज्य में सौंप दूँगा।''

इस प्रकार उसमें अनेक भाव हैं। काशी रामदास के महाभारत और कृत्तिवासी रामायण की भाषा की तरह, इस ग्रंथ की भाषा सरल और सरस है। अधिक आदर्श प्रदान की सुविधा नहीं हुई। ग्रंथ के प्रथमांश में, महाराज गोविन्द माणिक्य के समय रचित बृहन्नारदीय पुराण का बहुलांश में अनुकरण किया गया है।

ग्रंथ में दिये गये वाक्यों की आलोचना से यह जाना जाता है कि राजाज्ञानुसार इस ग्रंथ की नकल हर घर में रखी हुई थी। दुख का विषय है इस समय त्रिपुरा राज्य में यह ग्रंथ मिलना तो दूर रहे, इसका नाम तक कोई नहीं जानता। त्रिपुरा के अन्तर्गत जाजिसार निवासी माननीय श्रीयुत अनाथबन्धु चक्रवर्ती बी. ए. महाशय ने इसकी एक प्राचीन पाण्डु लिपि प्राप्त की थी और स्वतः ही प्रवृत्त होकर हम लोगों को प्रदान किया है। उनकी यह सह्रदयता देख हम मुग्ध हो गये। और कितने प्राचीन ग्रंथ इस तरह विलुप्त हो गये वह भगवान ही जानते हैं।

चल–83

धर्म मत और धर्म कार्यानुष्ठान

धर्म विषयक उदार मत राजमाला की प्रथम तीन लहर की आलोचना से यह ज्ञात होगा कि त्रिपुरेश्वर गण पूर्व में शैव और शाक्त थे। क्रमशः मत परिवर्तन होने पर अंत में वैष्णव धर्म अवलम्बन किये थे। यह परिवार किस समय से विष्णु मंत्र में दीक्षित हुए थे उसकी बाद में इसकी चर्चा हम करेगे। विष्णु मंत्र में दीक्षित होने के पश्चात भी इनमें अपने अपने विश्वास और प्रवृत्ति के अनुवर्ती होकर कोई राजा शैव और कोई शाक्त एवं वैष्णव मतावलम्बी होने के प्रमाण मिलते हैं। राजाओं में जिन राजाओं ने किसी धर्म को ग्रहण किया था, उन्होने स्वयं को उसी में अपने को सीमित नही रखा था। धर्म मत के बारे में वे सदा उदार मानसिकता के थे। वैष्णव मत के पक्षपाती राजन्य वर्ग भी चिर दिन ही शिव और शक्ति आदि सभी देवताओं के प्रति श्रृद्धाशील थे। इस उदारता के उदाहरण स्वरूप प्रथम लहर में राज परिवार के कुल देवता, चतुर्दश देवता का नामोल्लेख किया गया था। यहाँ पर भी हम उसका पुनरूल्लेख कर सकते हैं। शिव, दुर्गा, हरि, लक्ष्मी, वाग् देवी, कार्तिकेय, गणपति, ब्रह्मा, पृथ्वी, समुद्र, गंगा, अग्नि, प्रद्युन्न और हिमाद्रि, यही हैं चतुर्दश देवता(1)। इनमें शैव, शाक्त, वैष्णव, और सौर व गणपत्य आदि सभी सम्प्रदायों के उपास्य देवता हैं। जिस वंश में कुल देवता इस तरह के हैं, उस वंश के लोग धर्म मत के बारे में कितने उदार हैं, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। कैलाशहर में अवस्थित उनकोटि तीर्थ के भ्रमणकारी ने इस विषय के प्रकृष्ट दृष्टांत को प्रत्यक्ष किया है। इस तीर्थ में हिन्दु धर्मावलम्बी सभी सम्प्रदाय के उपास्य देवी देवताओं के मूर्तियों का समावेश देखने को मिलता है। त्रिपुरेश्वर गण ही इसके अधिकांश विग्रहों के स्थापयिता हैं। उदयपुर और अमरपुर के बीच गोमती नदी के किनारे देवतामुडा पर्वत के पत्थरों पर उत्कीर्ण देव देविओं की मूर्तियां अति प्राचीन हैं। यहाँ पर शैव, शाक्त एवं वैष्णव आदि सभी सम्प्रदाय के उपास्य देव देवियों की मूर्तियां हैं। यह भी त्रिपुरेश्वरों की ही कीर्तियां हैं। इन सभी विषयों की आलोचना से यह ज्ञात होता है कि उनका धर्ममत कितना उदार था। इसका एक प्रकृष्ठ परिचय मिलेगा।

राजमाला की चतुर्थ लहर के आलोचना से पहले ही अवस्था दिखाई देगी। इस लहर में आये राजन्य वर्ग में कोई कोई वैष्णव मतावलम्बी थे। किन्तु किसी किसी जगह पर इसके विपरीत होने के प्रमाण भी मिलते हैं। महाराज गोविन्द माणिक्य ने किस मत को ग्रहण किया था, यह सुस्पष्ट रूप से निर्धारण करने की कोई सुविधा नहीं है। उनके शासन काल में प्रचारित मुद्रा में शिवलिंग

---

(1) ''हरोमाँ हरि माँ वाणी कुमारो गणपा विधिः।
क्ष्नाब्धिर्गंगा शिखी कामो हिमाद्रिश्च चतुर्दश।।''
''राजमालिका''(राजमाला प्रल के 131पृ पर देखे)

चल–84

उत्कीर्ण होने के प्रमाण मिलते हैं। राजमाला के गोविन्द माणिक्य खण्ड में लिखा है।

राजार महर शिब लिंग संस्थान।	राजा की मुहर पर शिव लिंग का संस्थान।
अन्य पृष्ठे राजा रानी नामेर व्याख्यान।।	दूसरी पीठ पर राजा रानी नाम का बखान।।
राजमाला चल गोवन्द माणिक्य खण्ड 6पृ	राजमाला चल गोवन्द माणिक्य खण्ड 6पृ

इस वाक्य से लगता है, महाराज गोविन्द शैव मतावलम्बी थे। दूसरे मत में उन्होंने देवता के सामने नर बलि और पशु बलि प्रथा को बन्द करके प्रजाओं के अप्रिय हुए थे। यह एक प्रसिद्ध प्रवाद है। इस कार्य के द्वारा जो घोर वैष्णव है, मत का ही प्रकाश झलकता है। इसका उल्लेख करने की कोई जरूरत नही। यह बात सहज अनुभव गम्य है। पुनः देवता प्रतिष्ठित के प्रति नजर देने पर देखा जाता है कि सीता कुण्ड तीर्थ में उन्होंने पर्वत के ऊपर एक मंदिर निर्माण कराकर सुप्रसिद्ध ''चन्द्रशेखर'' शिव लिंग की प्रतिष्ठा की थी। इसके बाद राजधानी उदयपुर में अपने अनुज जगन्नाथ ठाकुर के सहयोग से एक अपूर्व प्रस्तरमय मंदिर का निर्माण कराकर दारू ब्रह्म मूर्ति की प्रतिष्ठा की थी। इन कार्यों से उनके धर्म मत के बारे में निसंदिग्ध चित्त से किसी स्थिर मीमांसा में पँहुचना कठिन सा हो उठा है। महाराज की अनुज्ञा से रचित बृहन्नारदीय पुराण में उन्हें वैष्णव कहा गया है।

नित्यानन्द वंशीय गुरु निर्वाचन महाराज गोविन्द माणिक्य और उनके पहले के राजन्य वर्ग में धारावाहिक रूप से विष्णु मंत्र में दीक्षित होने का कोई प्रमाण नहीं है। राजाओं के विश्वास और प्रवृत्ति के अनुयायी कोई शैव, कोई शाक्त एवं कोई वैष्णव मतावलम्बी हुए हैं। गोविन्द माणिक्य के पुत्र महाराज रामदेव माणिक्य के शासन काल में प्रभु नित्यानन्द के अधस्तन पंचम पुरूष रसिकानन्द गोस्वामी सन्यासी वेश में तीर्थ पर्यटन के लिए निकले थे। वे अनिमा, लघिमादि एश्वर्य समन्वित सिद्ध पुरूष थे। प्रभु रसिकानन्द बहुत से तीर्थ पर्यटन के पश्चात पीठ देवी त्रिपुरा सुन्दरी के दर्शन के लिए उदयपुर आये थे। वहीं पर राज भवन के करीब ही एक पेड़ के नीचे उन्होंने अपना आसन लगाया था। इस अवस्था में कुछ दिन बीत जाने के बाद सन्यासी की अलौकिक विभूति के दर्शन कर महाराज रामदेव माणिक्य ने उनका शिष्यत्व ग्रहण किया था। यही त्रिपुरा राज परिवार नित्यानन्द वंशीय प्रथम गरू हैं। कुछ दिनों तक उदयपुर में रहने के पश्चात प्रभुपाद रसिकानन्द ने स्वदेश प्रस्थान किया।

इसके बाद रसिकानन्द के पुत्र प्रभु बृन्दावन चन्द्र गोस्वामी द्वारा, रामदेव माणिक्य के पुत्र महाराज मुकुन्द माणिक्य ने कृष्ण मंत्र में दीक्षा ली थी। महाराज मुकुन्द एकनिष्ठ गुरू भक्त थे। अष्ट धातु द्वारा युगल मूर्ति बनवाकर उस विग्रह को गुरू के नामानुसार ''बृन्दावन चन्द्र'' नाम देकर प्रतिष्ठित किया। वह विग्रह आज भी त्रिपुर राज परिवार में कुल देवता के रूप में पूजित हो रहे हैं।

चल–85

प्रभु बृन्दावन चन्द्र के प्रथम पुत्र गुरू प्रसाद गोस्वामी महाराज कृष्ण माणिक्य के गुरू थे। उनके द्वितीय पुत्र प्रभुपाद आनन्द चन्द्र गोस्वामी ने कृष्ण माणिक्य के कनिष्ठ भ्राता हरिमणि युवराज को दीक्षा प्रदान की थी।

यहाँ पर एक बात का उल्लेख करना आवश्यक है। नित्यानन्द–संतानगण त्रिपुरा में राज गुरू के आसन प्राप्ति के बाद त्रिपुरेश्वर ईशानचन्द्र माणिक्य के शासन काल के पहले तक के राजगुरू स्वदेश में बाँकुडा जिला के अन्तर्गत पुरुनिया गाँव में निवास करते थे। वे बीच बीच में त्रिपुरा में आकर राजा और राज परिवार के लोगों को दीक्षा दे जाते थे। उन दिनों नाव के रास्ते के अलावा गमनागमन का और कोई सुविधा उपलब्ध नहीं थी। अतएव आने में दीर्घ समय लगता था। खासकर जल दस्युओं के डर से कोई भी आसानी से दूर देशों में जाने के लिए इच्छुक नहीं होता था। इन्हीं सभी कारणों से गोस्वामी प्रभुओं के त्रिपुरा से चले जाने के बाद दीर्घ समय बीत जाने के पश्चात भी उनका पुनरागमन नहीं हो पाता था। इसके फलस्वरूप नित्यानन्द वंशज गुरू प्राप्ति के बाद भी त्रिपुरेश्वरों में कुछ लोगों ने वैष्णव मत त्याग कर अन्य मत ग्रहण करने के निदर्शन मिलते हैं। रामदेव माणिक्य के अन्यतम पुत्र (मुकुन्द माणिक्य के पहले के राजा) धर्म माणिक्य (द्वितीय) संभवतः कुलगुरू के अभाव में शक्ति मंत्र से दीक्षित हुये थे। उनके बारे में राजमाला में लिखा हे–

शक्तिमंत्र उपासना छिलो महाराज।	शक्तिमंत्र के उपासक थे महाराज।
शक्तिरूपे मुक्तिदाता सुता गिरिराज।।	शक्तिरूपा मुक्ति दातृ दुहिता गिरिराज।।
राजमाला चल धर्म माणिक्य खण्ड 26पृ	राजमाला चल धर्म माणिक्य खण्ड 26पृ

अर्थात, ''महाराज की उपासना शक्ति मंत्र में थी। गिरि राज दुहिता पार्वती शक्ति रूप में उनकी मुक्ति प्रदायिनी थी।।''

अन्यत्र है –

कालवश होइया राजा कंठे दुर्गा वाणी।	कालवश हुए राजा कंठ में दुर्गा नाम।
प्राणत्याग कोरि गेलो स्वर्गेते तखनि।।	प्राण त्याग किया राजा गये स्वर्ग धाम।।
राजमाला चल धर्म माणिक्य खण्ड 30पृ	राजमाला चल धर्म माणिक्य खण्ड 30पृ

अर्थात, ''राजा जब कालवश हुए तो कंठ में दुर्गा का नाम था। राजा ने प्राण त्याग कर स्वर्ग में गमन किया।''

इसके बाद मिलता है –

धर्ममाणिक्य नृपति, धर्मेते पालिया क्षिति	धर्ममाणिक्य नृपति, धर्म पाला क्षिति
राजा गेलो विश्वेश्वरेर स्थान।	राजा गये विश्वेश्वर के स्थान।
शक्तिमंत्रे उपासना, राजा कोरे प्रार्थना	शक्तिमंत्र से उपासना, करे राजा प्रार्थना
शक्ति देवी मुक्तिर कारण।	शक्ति देवी मुक्ति का कारण।
राजमाला चल धर्म माणिक्य खण्ड 31पृ	राजमाला चल धर्म माणिक्य खण्ड 31पृ

अर्थात, ''राजा धर्म माणिक्य ने धर्म से पृथिवी का पालन किया। राजा विश्वेश्वर के धाम में चले गये। शक्ति मंत्र में उपासना और प्रार्थना किया, क्योकि शक्ति देवी ही मुक्ति की कारण है।''

इन सभी उक्तिओं के द्वारा महाराज धर्म माणिक्य के शाक्त मत अवलम्बन के प्रमाण मिलते हैं।

महाराज धर्म माणिक्य के कनिष्ठ भ्राता और उनके तुरन्त परिवर्ती राजा मुकुन्द माणिक्य के नित्यानन्द संतान के शिष्यत्व की बात पहले ही कही जा चुकी है।

महाराज कृष्ण माणिक्य का विवरण भी पहले दिया गया है। यही राजमाला चतुर्थ लहर के शेष राजा हैं। अन्याय राजाओं के धर्ममत विषयक विवरण परिवर्ती

चल–86

लहरों में क्रमशः मिलेगा। त्रिपुरा के राजगुरू–वंश की एक संक्षिप्त तालिका यहां संयोजित की गई है।

राज परिवार के धर्म मत के बारे में इसके अतिरिक्त कुछ कहने की सुविधा नहीं है। स्व0 कैलाशचन्द्र सिंह महोदय ने कहा है –''राजधर माणिक्य के समय नित्यानन्द वंशज गोस्वामियों ने राज परिवार में कृष्ण मंत्र का बीज रोपा है।'' यह उक्ति जो भ्रमात्मक है, पहले लिखे विवरणों की आलोचना से यह बात सहज ही हृदयंगम होती है।

त्रिपुरेश्वर गणों ने धर्म प्रणोदित होकर जितने जन हित कार्यों का सम्पादन किया है और धर्म के पुष्टि विधान के लिए जितने देवायतनों का गठन एवं देवताओं की प्रतिष्ठा की है। उनके स्थूल विवरण की आलोचनाओं की चेष्टा की जायेगी।

देवालय गठन और देवता प्रतिष्ठा

चन्द्रशेखर शिव मंन्दिर महाराज गोविन्द माणिक्य ने चन्द्रशेखर पर्वत के (चन्द्रनाथ तीर्थ) ऊपर मठ का एक निर्माण कराकर शिवलिंग स्थापन किया था(1) यह विग्रह ''चन्द्र नाथ शिव'' के नाम से प्रसिद्ध हुआ है। महाराज गोविन्द माणिक्य द्वारा निर्मित शिव मंदिर प्रचण्ड भूकम्प से विनष्ट होने के कारण वर्तमान मंदिर का निर्माण हुआ है। इस मंदिर में गोविन्द माणिक्य के प्रतिष्ठित लिंग विग्रह अब तक विद्यमान हैं। कोई कोई कहते है कि भूकम्प में विध्वस्त मंदिर के

....

(1) इस बारे में राजमाला के गोविन्द माणिक्य खण्ड के बारे में लिखा है –

चट्टेलेत चन्द्रशेखर मठ निर्मिया।	चट्ट में चन्द्रशेखर ने किया मठ निर्माण।
देवार्थेते महाराजा जलाशय दिया।।	देवार्थ में महाराजा किया जलाशय खनन।।
राजमाला चल गोवन्द माणिक्य खण्ड 12पृ	राजमाला चल गोवन्द माणिक्य खण्ड 12पृ

अर्थात, चट्ट गाँव में चन्द्रशेखर नाम के मठ का निर्माण कर देवार्थ महाराजा एक जलाशय भी दिया।''

श्रेणीमाला ग्रंथ में गोविन्द माणिक्य के प्रसंग मे लिखा गया है –

''चट्टेलेते चन्द्रशेखर पर्वत ऊपरे।
मठ निर्माईया शिव स्थापे तदुपोरे।।''

अर्थात, ''चट्ट गाँव में चन्द्रशेखर पर्वत के ऊपर एक मठ का निर्माण कर उसमें शिव की स्थापना की।''

राजा बाबू के घर में प्राप्त राजमाला की उक्ति खूब ही प्रांजल है –इस ग्रंथ में गोविन्द माणिक्य के प्रसंग में लिखा है

पात्र मित्र पुरोहित सभाते बोसिया।
पुराण श्रवण कोरे संतोषित होइया।।
तीन युगे महादेव काशीते आछिलो।
कलियुगे चन्द्रशेखरेते स्थान कोइलो।।
तीर्थराज बाडब धर्मेर नाही सीमा।
जल मध्ये हुतासन अतुल महिमा।।
पण्डित सकले यदि ए रूप कोहिलो।
बाडब तीर्थेते राजा ससैन्ये चलिलो।।
चन्द्रशेखरे मठ कोरिलो रचना।
तार मध्ये महादेव कोरिलो स्थापना।।
पूण्याह तिथिते मठ प्रतिष्ठा कोरिलो।
ब्राह्मणेर तुष्ट कोरि दक्षिणा ये दिलो।।

भावार्थ, ''परम संतुष्ट चित्त से अपने मंत्री, पुरोहित आदि के साथ बैठकर महाराज पुराण आदि श्रवण कर रहे थे। तीनों युगों तक महादेव जी काशी में थे। अब उन्होंने इस कलियुग में चन्द्रशेखर पर्वत पर अपना स्थान बना लिया है। तीर्थराज बाडब धर्म की महिमा की कोई सीमा नहीं है। पानी में भगवान हुतासन की अतुल महिमा फैली है। महाराज सेनाओं के साथ यहाँ तीर्थराज बाडब पँहुचे। चन्द्रशेखर मठ की स्थापना कर महादेव जी की प्रतिष्ठा की है। पुण्य तिथि में मठ की प्रतिष्ठा की और ब्राह्मणों को दान से तुष्ट किया।

चल–87

के साथ महाराज गोविन्द माणिक्य के स्थापित शिवलिंग भी विनष्ट हो गया था। वर्तमान विग्रह बाद में प्रतिष्ठा की गई थी। वर्तमान लिंग विग्रह का अग्र भाग कुछ टूटा हुआ है। कहा जाता है कि कोई सन्यासी नारियल के पानी से विग्रह को स्नान कराने के लिए एक नारियल साथ में ले आये थे। नारियल फोडने के लिए कोई उपयोगी वस्तु सामने न पाकर शिव के मस्तक पर आघात कर उसे फोड़ डाला। भक्त के इस विकट भक्ति के फलस्वरूप भगवान शंकर का भी मस्तक अछूता नहीं रह गया और सिर से एक टुकडा टूटकर गिर पड़ा। फिर कुछ लोगों का कहना है कि भीड की वजह से करीब जाना संभव नहीं हुआ तो किसी भक्त ने दूर से फेंककर नारियल चढ़ाया और इसी नारियल के आघात से शिव लिंग का एक हिस्सा टुट गया। इसमें कौन सत्य है? यह मैं नहीं जानता। जिस कारण से भी हो, बहुत पहले ही उस शिव लिंग का एक हिस्सा टूटा हुआ है। शिव लिंग अब भी है। यह वृहदाकार काले पत्थर द्वारा बनाया गया, सुगठित लिंग विग्रह है।

जगन्नाथ देव मन्दिर   महाराज गोविन्द माणिक्य की दूसरी समुज्वल कीर्ति है –उदयपुर स्थित जगन्नाथ देव का प्रस्तर मन्दिर। इस तरह के सुबृहत एवं सुगठित ठोस प्रस्तरमय मंदिर बंग भूमि में दूसरा नहीं है। महाराज गोविन्द द्वारा अनुज जगन्नाथ ठाकुर के सहयोग से इस मन्दिर का निर्माण हुआ था। यह मन्दिर साधारणतः ''जगन्नाथेर दोल'' अर्थात जगन्नाथ का दोल नाम से प्रसिद्ध है। यह मन्दिर जगन्नाथ दिघि (तालाब) या पुरातन दिघि (पुराना तालाब) नामक विशाल सरोवर के पश्चिम–दक्षिण किनारे पर अवस्थित है।

मन्दिर के दीवारों पर एक बृहत शिला लेख संयोजित था, उनमें इस मंदिर का मामूली तौर पर इतिहास का पता चलता है। वह शिलाखण्ड मंदिर के दीवार से अलग होकर जंगलों के भीतर पड़ा था। स्व0 महाराज वीरचन्द्र माणिक्य के शासन काल में, उनके प्रधान स्व0 दीन बन्धु नाजिर महोदय उसे अगरतल्ला ले आये। तब से वह शिलाखण्ड राज प्रसाद में सुरक्षित है(1)। शिला लेख के प्रथम दो पंक्तियों के अक्षर नष्ट हो गये हैं। उनके उद्धार का कोई उपाय अब नहीं है। अवशिष्टांश अविकल रह गया है। महाराज वीरचन्द्र माणिक्य के समय पंडित मण्डलियों की समवेत प्रचेष्टा से इसके पाठोद्धार हुआ था। स्व0 महाराज राधा किशोर माणिक्य के शासन काल में श्रद्धेय पण्डित श्रीयुत चन्द्रोदय विद्‌याविनोद महाशय ने पुनः इसका पाठोद्धार करके ''शिला लिपि संग्रह'' पुस्तिका में इसे जोड़ दिया है। शिला लेख पाठ अगले पन्ने में प्रदान किया जा रहा है।

---

(1) यह प्रस्तर फलक लम्बाई में 3फुट – डेढ़ इंच चौड़ा प्रस्थ में 2फुटलम्बा और डेढ़ इन्च चौड़ा और बेड में 7 इंच है। इस शिला खण्ड में सौलह पंक्तिओं में सम्पूर्ण लेख उत्कीर्ण किया गया है। प्रस्तर पर दो पंक्तियाँ उत्कीर्ण होने से प्रत्येक पंक्ति में श्लोक का भग्नांश पड़ा है।

प्रल – **88**

वाणी गायति + + + +
रबो + + + + +
सोत्कमनसः सेन्त्रादि बृन्दारकाः।।1।।
श्रीश्रीकल्याण माणिक्य देवस्याद्भुत कर्मणः।
आसीत् श्रीसहरवती महिषीन्दुमती परा।।2।।
सा पुत्रौ सुषुवे तस्मादतितेजोधरावुभौ।
श्रीगोविन्दजगन्नाथसंज्ञकाबमरप्रभौ।।3।।
जयन्तमिव पौलोमी पुरूहूतादनुत्तमात्।
दिलीपादिव राजेन्द्रात् रघुराजं सुदक्षिणा।।4।।
तयोर्ज्यायान् समभवत् चन्द्रवंशावतंशकः।
श्रीश्रीगोविन्दमाणिक्यदेवोराजातिसत्तमः।।5।।
ततः कनीयान् साधीयान् श्रीजगन्नाथबीरराट्।
भ्रातर्यनुमताकारी युधिष्ठिर इवार्ज्जुनः।।6।।
अथ व्यतीतसमये कियति स्वेन कर्मणा।
प्राप्तकाला च महिषी पूण्येभ्यः सा दिवं ययौ।।7।।
श्रीविष्णवेऽनन्तधाम्ने प्रादात् प्रासादमुत्तमं।
ततः कल्याणमाणिक्यपितुराज्ञानुसारतः।।8।।
राज्ञाः सहरवत्यास्तु मातुः स्वर्गचयाय हि।
श्रीश्रीगोविन्दमाणिक्यदेवोऽनुजवरेण च।।9।।
श्रीजगन्नाथबीरेन भूरिमन्त्रमहौजसा।
प्रादात् प्रासादमतुलं विष्णोरपि मनोहरं।।10।।
शाकेह नलाष्टवाणेन्दौ प्रादात् प्रसादमच्युते।
श्रीश्रीगोविन्दमाणिक्योराकायां मासि बाहुले।।11।।
शाके 1583। त्रिरशीत्यधिक पंचदश शततम।
शकाब्दिय कार्तिक षड़विंशांशार्कबासरराकायां।।12।।

अनुवाद

वाणी गीत गा रही है + + + + रव + + +
इन्द्रादि देव गण उत्कंठित चित्त हैं। अलौकिक कार्य के अनुष्ठाता श्री श्री कल्याण माणिक्य देव की इन्दुमती तुल्या सहरवती नाम की महिषी थी। इन्द्रपत्नी शची ने जिस तरह जयंत को प्रसव किया था, राजेन्द्र दिलीप पत्नी सुदिक्षणा ने जिस तरह रघु को प्रसव किया था, उसी तरह कल्याण माणिक्य

चल–89
पत्नी ने गोविन्द और जगन्नाथ नाम के अति तेजस्वी देवतुल्य दो पुत्रों को प्रसव किया। उदय चन्द्रकुलभूषण, सज्जनाग्रगण्य महाराज गोविन्द माणिक्य देव ज्येष्ठ, और वीर श्रेष्ठ जगन्नाथ कनिष्ठ थे। जगन्नाथ युधिष्ठर आज्ञाकारी अर्जुन की तरह भ्राता की अनुमति पालन में निरत थे। इसके कुछ दिनों के पश्चात वही राज महिषी काल प्राप्त होकर अपने पुण्य प्रभाव में स्वर्ग में गमन की। पश्चात् अपने पिता कल्याण माणिक्य के आज्ञानुसार अनन्तधाम विष्णु के उद्देश्य से (यह) उत्तम प्रासाद दान किया। श्री श्री गोविन्दमाणिक्यदेव वीर, मंत्रणा निपुण और तेजस्वी अनुज जगन्नाथ देव के साथ माता सहरवती के स्वर्गार्थ, विष्णु को मनोहर (यह) अतुल प्रासाद दान किया। श्रीश्रीगोविन्द माणिक्य ने 1583 शक के कार्तिकी पूर्णिमा में विष्णु के उद्देश्य से प्रासाद को दान किया।'' –शिला लिपि संग्रह 31– 32 पृष्ठ

यहाँ पर एक प्रसंग का उल्लेख करना आवश्यक है। राजमाला के संग्राहक स्व0 कैलाश चन्द्र सिंह महाशय के मत से गोविन्द माणिक्य के वैमात्रेय भ्राता छत्र माणिक्य (नक्षत्र राय) ने 1070 त्रिपुराब्द में (1582 शक) सिंहासन पर अधिकार कर लिया था(1) एवं छत्र माणिक्य के मुद्रा का विवरण प्रदान करते समय उस मुद्रा को 1582 शक का मुद्रित बताया है(2) लेकिन महाराज छत्र माणिक्य की जो मुद्रा मिली है। उसका शकांक नितांत ही अस्पष्ट है। टेवार्नियार ने अपने भ्रमण वृतान्त में छत्र माणिक्य के मुद्रा का विवरण और प्रतिकृति को प्रदान किया है वे भी उस मुद्रा का शकांक उद्धार नहीं कर पाये(3)। पूर्वोक्त शिला लेख की आलोचना से यह जाना जाता है कि महाराज गोविन्द माणिक्य ने 1583 शक की कातिर्की पूर्णिमा तिथि में जगन्नाथ देव के मन्दिर की प्रतिष्ठा की थी। अतएव छत्र माणिक्य का 1582 शक में राज्य पर आविष्कार मुद्रा का प्रचारित होना संभव नहीं है। सारी परिस्थितियों की आलोचना से यह समझा जाता है कि महाराज गोविन्द माणिक्य 1583 शक में कुछ दिनों तक राजत्व करने के बाद उसी शक में छत्र माणिक्य ने सिंहासन पर कब्जा कर अपने नाम मुद्रा का प्रचार किया था। कैलाश बाबू इस मुद्रा के पाठोद्धार करने में शकांक 1583 की जगह 1582 लिपि की है।

पूर्वोक्त शिला मन्दिर इस समय जीर्ण देह लेकर भी विशेषज्ञों का चित्त आर्कषण कर रहा है। उदीयमान स्थापत्यविद् पण्डित श्रद्धाभाजन श्रीयुक्त श्रीशचन्द्र चट्टोपाध्याय स्थापत्य विशारद महाशय ने उस मंदिर के दर्शन कर विमुग्ध ह्रदय से हमें बहुत बातें बताई हैं। एवं ''भारतीय स्थापत्य और स्वाधीन त्रिपुरा'' शीर्षक निबन्ध में लिखा है –

''अभिनव धरण में उक्त जगन्नाथ देव का मन्दिर केवल स्थापत्य कला की हिसाब से अति मूल्यवान है, यही नही, उससे त्रिपुरा के धर्म युग और सभ्यता की एक विशिष्ट धारा का आविष्कार

....

(1) कैलाश बाबू की राजमाला दूसरा भाग सातवाँ अध्याय 85पृ
(2) कैलाश बाबू की राजमाला प्रथम भाग चतुर्थ अध्याय 69पृ
(3) **Taverniers Travels in India by J. Phillips -Book V, Part II, page 8**

चल–90
करना विशेष कष्ट साध्य नहीं होगा, ऐसा लेखक का विश्वास है। अविकल सारनाथ स्तूप की तरह उस मंदिर का गठन है। अधिकांश वह पाषाण निर्मित है। पहले वहाँ एक नाट मंदिर था। इस प्लान का मंदिर मैने और कहीं देखा है, ऐसा मुझे नहीं लगता है।

रवि, पंचम् वर्ष, द्वितीय संख्या

श्रीश बाबू के पहले 1922 ई0 में गवर्नमेंट के Archaeological Survey विभाग के सुपरिनटेनडेन्ट श्रीयुत के एन दीक्षित महोदय ने उदयपुर के प्राचीन कृति समूहों का परिदर्शन कर उस जगन्नाथ मंदिर के बारे में लिखा है।

"This temple is the most important of all the manuments at Udaypur, but has unfortunately fallen into such a state of neglect that a considerable outlay is necessary to preserve it in proper order. It is built in a style characteristic of the later Mohammadan period. It is square in plan with a passage on the east, facing the entrance, and recesses in the walls on the other three sides. The top is crowned by a dome with vaulted roof in pure Mohammaden fashion. The stone used in the building is a kind of ash coloured slate stone. Some rather big blocks of stone are used in construction of the temple. There has been no attempt at decoration. There are no images on the building, though a few niches are to be found on the exterior walls. The temple was built in 1661. A.D. in the reign of Govinda Manikya and was originally dedicated to Vishnu.

Conservation: - After clearing away the roots of trees and Jungle from the top and on all four sides up to a distance of 25 feet, a fence (Permanent wire fence or temporary bamboo fence) should be erected at a distance of 15 to 20 feet from the building. In places, roots have penetrated into the masonry separating the walls from the corner pilasters. They should be thoroughly extricated and the damage be made good by grouting liquid cement in the cracks and rebuilding displaced masonry with old stones in lime. The tree at the south west corner should be cut down and its roots removed. In the centre of the south wall there is a big crack which was most probably caused by an earthquake. The crack should be filled with cement grouting, the interior of the gap, if too wide, being first filled with clean stone concrete. On the north, except for the presence of small cracks and the cleavage of minarets from the main body, the wall is in fair preservation. The facing of the lower portion has in parts disintegrated through action of the weather. The worst damage, however, has occured in the south-west corner, but unfortunately thick jungle has grown just where there appear to be gaping hollows on the top of the wall masonry, rendering it difficult to see what repairs are needed. Existing gaping hollows should be thoroughly filled with cement concrete and facing stone work rebuilt in exactly the same type of masonry as the existing wall masonry. The roof of the dome is also thickly overgrown. The water proofing of the dome is a factor of such great importance for the stability of the building that it must be taken up as early as possible after preliminery jungle clearance. The whole roof should be terraced with 4 inch concrete and plastered with cement coloured with suitable ingredients, so has to match the colour of the stone used in the building. When the repairs as sketched above are completed the surrounding area should be properly sloped, so as to drain off rain-water."

चल –91
दीक्षित महाशय का यह मंतब्य है, यह मन्दिर मुस्लिम जमाने के शेष युग की स्थापत्य प्रणाली में निर्मित हुआ है एवं मंदिर की दुर्दशा को देख दुख व्यक्त किया है। वर्तमान अवस्था में किस तरह का मंदिर का उद्धार किया जा सकता है इसकी भी बात उन्होंने कही है। बहुत सी आवश्यक बातें हैं इसलिए उनके मन्तब्य की यहाँ उद्धृति हुई है।

इन सभी विशेषज्ञों के अभिमत की आलोचना से ही मन्दिर के गौरव का अनुभव किया जा सकता है। मंदिर के निर्माण में पाँच हाथ लम्बा और आधा हाथ से भी अधिक ठोस पत्थर के टुकडों का व्यवहार हुआ है। यह विशाल आँकडे का पत्थर कहाँ से लाया गया था एवं उस समय कैसे लाया गया था, यह निर्णय करना मुश्किल है। इतिहास, खासतौर से मन्दिर के दीवार के शिला लेख की आलोचना से यह जानने में आता है कि यह मन्दिर न्यून्याधिक तीन सौ साल की प्राचीन कीर्ति है। इसके ऊपर बडे बडे वृक्ष उग गये थे। अब वे सारे वृक्ष काट दिये गये हैं। किन्तु मंदिर की जो क्षति हुई है, उसके संशोधन की किसी तरह की चेष्टा नहीं की गई। इसी वजह से मंदिर के पिछवाडे यानी पश्चिम की ओर की दीवार और दूसरी ओर की भी दीवारों के कुछ अंश खिसकने लगे हैं।

मंदिर के चारों ओर पत्थर की बनी दीवारें थी। अब उसका केवल चिन्ह मात्र रह गया है। मंदिर पूर्वद्वारी है, इसके सामने नाट मंदिर एवं देव देविओं की प्रतिमूर्ति विशिष्ट हैं। कारुकार्य युक्त कला कृतियों की रेलिंग थी। उनके टुकडे बहुत से स्थानों में ले जाया गया है। इस रेलिंग का एक खण्ड अगरतल्ला के श्रद्धास्पद स्वर्गीय कर्नल महिम चन्द्र ठाकुर महाशय के घर में सुरक्षित है।

जगन्नाथ दिघि (तालाब) के उत्तर पूर्व कोने में एक नाटि अतिबृहत मंदिर है। वह कलाकृतियों से पूर्ण ईटों द्वारा अलंकृत है। श्री श्री जगन्नाथ देव के रथ यात्रा के समय यह मंदिर "गुंजिका मंदिर" के नाम से जाना जाता है। जनश्रुति यही कहती है। इस जनश्रुति के अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। इस मंदिर के नजदीक एक बृहत प्रस्तर खण्ड गिरा हुआ है। वह क्रमशः बढ रहा है। दिनोंदिन इसका आकार बढता जा रहा है। मातायें संतान की मंगल कामना इस पत्थर पर दूध चढ़ाती है।

महारानी गुणवती महादेवी का विष्णु मंदिर

उदयपुर के महादेव(भैरव के) के घर के कुछ दूरी पर पूरब की ओर एक प्रागंण में श्रेणीबद्ध रूप से तीन मंदिर हैं। पूरब के ओर के दोनों मंदिरों में शिला लिपि नहीं है। पश्चिम की ओर के मंदिर की पश्चिम दीवार के पर एक शिला खण्ड लगा हुआ है। उस पर उत्कीर्ण वाक्यों से जाना जाता है कि महाराज गोविन्द माणिक्य की महिषी गुणवती महादेवी ने इस मंदिर का निर्माण कराकर 1590 शक के बैशाख महीने के युगाद्या के दिन विष्णु के

चल–92
उद्देश्य से दान किया था। इसके संलग्न दोनों मंदिर भी इसकी महारानी के द्वारा निर्मित हुए थे। ऐसा विश्वास जन साधारण का है।

मंदिर की दीवार पर लगे शिलालेख की पहली चार पंक्तियां अस्पष्ट हैं। मध्य भाग के अंश इस तरह से नष्ट हुए है कि उन्हें उद्धार करने का कोई उपाय नहीं है। अंत के कुछ पंक्तियों के पाठोद्धार, पूज्यपाद पंडित श्री युक्त चन्द्रोदय विद्याविनोद महाशय ने अथक श्रम से किया था। उसे यहाँ प्रदान किया जा रहा है।

– शौर्याया रघुनायकस्य महतो गांभीर्यमन्भो					
निधेस्त्याग + ल		मर्ह।		सौन्दर्यकुसुमायुधस्य	
परमं		श्रीगोविन्द म			
+	+	+	+	+	कृष्ण
+	+	+	+	+	+
+	+	+	+	+	+
			श्रीश्रीगोविन्ददेवस्त्रिपुरनरपति		
गण्यः। तत्पत्नी पूण्यशीला सुमती(1) गुणवती विष्णवे सा वरेण्या शाके					
खांकेषुचन्द्रे मठमतुलममुं माधवेऽदाद्षुगादौ।(2) शकाब्दः1590					

इस लिपि के जो अंश नष्ट नहीं हुए है, उनसे जिन वाक्यों को उद्धार किया गया है, उसकी आलोचना से ज्ञात होता है कि महाराज गोविन्द माणिक्य का शौर्य रघु की तरह, गांभीर्य समुद्र की तरह, सौन्दर्य कन्दर्प की तरह एवं दान में बलि की तरह थे – उसमें इन्हीं भावों की वर्णना है। अंत की चार पंक्तियों के मर्म हैं – ''त्रिपुर नरपति श्रीश्रीगोविन्द देव (ज्ञानियों के?) अग्र गण्य थे। 1590 शक में उनकी महिषी पुण्यशीला, सुमति एवं वरणीया गुणवती देवी ने बैशाख महीने के युगाद्या दिवस के अवसर पर यह अतुलनीय मठ विष्णु के उद्देश्य से दान किया।''

---

(1) ''पुण्यशीला'' और ''सुमति'' महारानी का विशेषणा है। उनका नाम गुणवती था।

(2) युगाद्या शब्द को युगादौ कहकर लिपि किया गया है। युगाद्या –युगान्त तिथि, पुराण के मतानुसार –

वैशाखे शुक्लपक्षे तु तृतीयायां कृतं युगम्।
कार्तिके शुक्लपक्षे तु त्रेताथ नवमेऽहनि।।
अथ भाद्र पदे कृष्ण त्रयोदश्यान्तु द्वापरम्।
माघे च पौर्णमास्यां वै घोरं कलियुगं स्मृतम्।।
ब्रह्म पुराण।

प्रधानतः चार युग के आरम्भ की तिथि को युगाद्या कहा जाता है। इसके अलावा किसी किसी तिथि को भी युगाद्या तिथि की तरह पुण्यप्रद कहा गया है।

चल–93

शिला लेख के वाक्यों द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि वह मन्दिर की विष्णु विग्रह प्रतिष्ठित थी, वह किस समय और कैसे विलुप्त हुआ, है इसका पता लगाना मुश्किल है। मघ या मुसलमानों के द्वारा इसके विनष्ट होने की संभावना ही अधिक है। यह मंदिर महाराज गोविन्द माणिक्य के दूसरी बार के राजत्व काल में निर्मित हुआ था।

महाराज राम माणिक्य द्वारा प्रतिष्ठित विष्णुमन्दिर समूह उदयपुर के शिव बाड़ी (शिव मंदिर) के दीवार के भीतर स्थित चतुर्दश देवता के मंदिर के पश्चिम की ओर जो मंदिर है, उसकी दीवार पर अब भी एक शिला लेख है। उसकी लिपि के अधिकांश ही विनष्ट हो चुके हैं। इस प्रस्तर फलक पर उत्कीर्ण असंपूर्ण विवरण से पता चलता है कि महाराज गोविन्द माणिक्य के पुत्र महाराज रामदेव माणिक्य ने 1595 शक में इस मंदिर का निर्माण कर विष्णु के उद्देश्य से दान किया था। शिला लिपि का वर्तमान रूप इस तरह है –

स्वर्लोक स्थित परिजात कुसुम क्षौणी
रूहारोपणं चक्रेश   रा द्वारा
बता द्वाबि य   पथि   परिगता
निःश्रांक   यनान   तनया
निज्जित्य भूमाण्डुजः ।1।   रविन्द
मधुपः कल्याणदेवो   ज्यम
शेष धर्मनिवहैः स्व   तत्पु
त्रोहति गुणाकरः प्रे   तृण
योऽर्च्चयि 2 श्रीगोविन्द ना   : पा
दाब्जको जीवतात् ।2। –   महे
कृतिनः पुत्रो महात्मा सता बाज्यानीय राज
मा कुशलः शान्तो विनीत सदा।   । रा
मः प   दा शोके
बाण नबेषु सोम विमिते ज्येष्ठे तिथौ।।

इस लेख द्वारा स्पष्ट अर्थ हृदयगंम नहीं हो सकता। इतना मात्र सूझ में आता है कि पारिजात हरण के विवरण को लेकर श्लोक की रचना की गई थी एवं विष्णु का गुण वर्णन करना ही इस श्लोक का उद्देश्य है। इस कारण से समझा जाता है कि मंदिर विष्णु के उद्देश्य से दान किया गया था। स्थानीय जन साधारण भी इसे विष्णु मंदिर ही कहते हैं।

शिला लेख में ''कल्याण देव'' ''गोविन्द'' एवं ''राम'' ये तीन ही नाम मिलते हैं। मंदिर 1595 शकाब्द में निर्मित हुआ था – यह भी मिल रहा है। इन समस्त विषयों की आलोचना से यही स्पष्ट होता है कि 1595 शकाब्द में महाराज रामदेव माणिक्य ने इस मंदिर का निर्माण कराया था। शिला लेख में उन्होंने अपने नाम के साथ

पिता गोविन्द माणिक्य और पितामह कल्याण माणिक्य नामोल्लेख किया है। त्रिपुरा के अनेक ताम्र शासन और शिल्प लेखों में इस पद्धति अवलम्बन करने के निदर्शन मिलते हैं। महाराज रामदेव माणिक्य ने 1595 शकाब्द में राज्य प्राप्त किया था, उसी शक में यह मन्दिर बनकर तैयार हो गया था। अतएव इसकी उम्र अढ़ाई सौ साल पुराना है। मन्दिर निर्मित होने के बाद कोई संकार हुआ है ऐसा कहीं से पता नहीं चलता है। सुदृढ़ बनावट की वजह से आज तक मन्दिर अक्षुण्ण अवस्था में है।

महाराज राम माणिक्य के द्वारा निर्मित एक विष्णु मंदिर गोमती नदी के उत्तरवर्ती राजबाड़ी (राजमहल) बाहर के प्रागंण में दक्षिण पश्चिम किनारे पर विराजमान है। यह मंदिर अब भी सुदृढ है। इसके पीछे की दीवार में बाहर भाग के शिला लेख में मंदिर का विवरण लिखा गया है। इस शिला पट्टी पर उत्कीर्ण अक्षर बहुत कम ही नष्ट हुए हैं। लुप्तांश को बन्धनी के भीतर संयोजन करके श्रीयुत पण्डित चन्द्रोदय विद्याविनोद महाशय ने जो पाठ उद्धार किया हे उसे यहाँ दिया जा रहा है :–

प्रोद्यद्दोर्दण्डघातैः कुवलयदशनोत्पाटनं यश्चकार,
चानूरं दैवतेजःपरिभवचतुरं वेश्म निन्ये यमश्य।
वाद्योघोर्द्वन्द्वभीतं प्रवलतरवलै स्त्रासिताशेषलोकं,
प्रस्फुर्ज्जद्बाहुदर्पादमरबलहृतं यश्च कंसं जधान।
(भूदेव) स्तस्य पादाम्बुजयुगलगलत् स्वादु माघवीक (धा) रा
लुब्धस्वान्तर्द्विरेफोनिजतनुजनिवत्पालिताशेषलोकः।
दृष्टानां चण्डदण्डं (विदधद) तितिमां नीतिविदैयकविद्वान्,
क्षापृष्ठोद्घृष्टमौलिक्षितिपतिनिवहैर्बन्दयमानांघ्रि युग्मः।
आसीत् गोविन्ददेवः क्षितिवलयपतिः सर्वधर्मैककर्मा,
मर्मौद्घाटि रिपुणां निशितशरशतै संगरे त्यक्तभंगः।
रत्न स्वर्णाणुराशि प्रचुरतर समुत्तुंग मातंग दाता,
सौन्दर्येश्वर्यवीर्य्यजितकुसुमधनुर्देवराजप्रभावः।
तन्माज्जातः समस्तक्षितिपतिविजयी शौर्यगांभीर्यसिन्धुः
श्रीश्रीरामः क्षितीन्द्रस्त्रीपुरकुलपतिस्तातभक्तः सुचेताः।
यत्कीर्तीनां प्रतानैर्विमलतरपटैः प्रावृते सर्वलोके,
नाग्नोऽप्याजन्म शंभुः पिहितवसनतां प्राप्तवान् दैवयोगात्।
श्रीमान् रत्नादिदानैः शमितबसुमतीदी (न) सन्दोहदैन्यः,
स्फुर्जत्कर्पूरपुरस्फुरदमरधुनीशुभ्रकीर्तिप्रताप (ः)।
तातस्वर्गाभिलाषी विमलतरमतिर्बिष्णवे स क्षितीन्द्रः,
प्रादात् प्रासादराजं शशधरकिरणं भक्तितोऽभ्रकषाग्रम्।।
ग्रहांकवाणशुभ्राशुंसम्मिते शकवत्सरे।
पौर्णमास्यामसौ दत्तोमकरस्थे दिवाकरे।।

चल–95

अनुवाद

जो प्रचण्ड बाहु दण्ड के आघात से कुबलय नामक हस्ती का दशन उखाड़ दिया था, चानुर नामक (कंस का अनुचर) देवताओं के तेज प्रभावकारी होने पर भी उसे वाद्य शब्द से ही भयातुर करके जिन्होंने यमालय भेजा था, जो अपने प्रबल पराक्रम द्वारा त्रिभुवन के त्रासजनक, प्रबल बाहुबल से देवताओं के पराभवकारी कंस का संहार किया था, उनके पादपद्म से क्षरित सुमधुर मकरन्द धारा से जिनका अन्तःकरणरूप भ्रमर विमुग्ध था, जिन्होंने अपत्य स्नेह से सभी प्रजा जनों का पालन किया था, जिन्होंने दुष्टों के प्रति गुरुतर दण्ड का विधान कर नीति शास्त्र में पारदर्शी के रूप में परिचित थे, जिनके पद युगल वन्दना के समय नृपति वृन्दों के मुकुट पृथिवी के पृष्ठ पर घर्षित होते थे, केवल धर्मकार्यानुष्ठान ही जिनका व्रत था, वही गोबिन्द देव(त्रिपुरा के) नृपति थे। वे सुतीक्ष्ण सायक द्वारा रिपु कुल का मर्म भेद करते थे। युद्ध स्थल में कदापि पलायन नहीं करते थे। जो अतुल परिमाण में स्वर्ण, रत्न एवं मातंग दान करते थे। सौन्दर्य सम्पदा में वे कन्दर्प को ही जीत गये थे और इन्द्र की तरह उनका प्रभाव था। त्रिपुर कुलपति पितृ भक्त, साधु हृदय, शौर्य गांभीर्य सिंधु की तरह, सभी नृपतियों के विजेता श्रीश्री रामदेव ने उनसे जन्म लिया था, उनके विस्तृत कीर्ति कलाप रूप शुभ्र वसन से त्रिभुवन आच्छादित है, महादेव आजन्म उलंग होने पर भी दैववशतः वसनधारी के रूप में दिखाई दिये थे। समृद्धशाली महाराज रामदेव, रत्नादि दान द्वारा पृथ्वी स्थित दरिद्रों के दारिद्य प्रशमित किया था। कपूरप्रवाह और उजज्वल सुरधूमी की तरह शुभ्र कीर्तिशाली प्रतापान्वित, निर्मल अन्तःकरण महाराज पिता के स्वर्गाभिलाष में यह उन्नत ''शशधर किरण'' प्रासाद 1599 शक में माघी पूर्णिमा के दिवस भक्ति पूर्वक विष्णु के उद्देश्य से दान किया।''

इस समय ताम्र शासन और शिलालिपि में आत्मश्लाघा प्रकाश करने का युग था। सारे बंग भूमि के राजन्य वर्ग ने ताम्र शासनों में आत्मगौरव सूचक जिन सारी बातों को उत्कीर्ण किया है, राजमाला द्वितीय लहर में भी उसके कुछ अंशों के प्रदर्शन की चेष्टा की गई है।(1) शिलालिपि में भी इस प्रथा का वर्जन नहीं हो सका। आलोच्य शिलालिपि में, महाराज गोविन्द माणिक्य के पदयुगल वन्दना के समय नृपतियों के राजमुकुट का पृथिवी का घर्षण प्राप्त होता था। क्या यह बात भी बड़बोला आत्मश्लाघा नहीं है। धर्म भाव से ओत प्रोत होकर देवायतन प्रतिष्ठा के समय भी इस तरह के पौरूष वाक्यों के संयोजन से धर्म भाव को कुछ अर्थ में म्लान कर दिया गया है। पर महाराज राम माणिक्य ने यहाँ पर आत्मगरिमा को प्रकाश न कर पितृ गरिमा की ही घोषणा की है। यहाँ पर उनके पितृभक्त विशेषण की सार्थकता ही प्रकाशित हुई है। ताम्र शासन या शिला लेख में इस तरह के आत्मश्लाघा युक्त वाक्यों के प्रयोग की ओर देखने से उन दिनों के राजाओं से अधिक उनके आश्रित पंडित मण्डली की रूचि की ओर ही नजर अधिक जाती है।

शिलालेख के शेषांश वाक्य की आलोचना से यह जाना जाता है कि 1599 शकाब्द के माघी पूर्णिमा यह मंदिर विष्णु के उद्देश्य से बनाया गया था। माघ महीने की पूर्णिमा तिथि में

....

(1) राजमाला द्वितीय लहर 185–194पृ देखे।

चल–96

कलियुग आरंभ हुआ है। अतएव यह युगाद्या तिथि भी, एक पुण्य कार्य सम्पादन के लिए विशेष प्रशस्त तिथि थी। मंदिर अढ़ाई सौ साल पुराना है और अब भी विशेष सुदृढ है। इसके शीर्ष स्थान पर जितने पेड़ उगे हैं, उन्हें निकालकर अगर मंदिर का संस्कार किया जाये तो यह मंदिर और भी कालों तक स्थायी रह सकता है।

महाराज राम देव माणिक्य द्वारा 1603 शक में उदयपुर सुन्दरी देवी के मंदिर का संस्कार किया गया था। इस संस्कार के निदर्शन स्वरूप मंदिर के दीवार पर (पूरब की ओर) जो शिला लिपि संयोजित हुई है, उस उत्कीर्ण श्लोक को यहाँ दिया जा रहा है –

तत्पुत्रो धर्मचेताः क्षितिपतितिलकः कान्तदान्तो बदान्यः
श्रीश्रीमान् सत्यवादी निखिलगुणयुतो राममाणिक्यदेवः।
चक्रे प्रासादराजं विटपिविदलितं वीरधीरो मनोज्ञं
पूर्बस्मादम्बिकायै विविधरूचिचयं धन्यमाणिक्य दत्तं।।
वीरश्रीयुतरामदेव नृपतिर्विप्राऽज्व भानुः कृतिः
कालीपादसरोजलुब्धमधुपः पृथिवीपतिनां बरः।
बातोद्धातविभिन्नदेवसदनं चक्रे मनोज्ञं वरं
शाके नेत्रवियद्रसेन्दुमिलिते पीठे भवान्याः पुनः।।
– शकाब्दा 1603

मर्म

"उनके (गोविन्द माणिक्य के) पुत्र महाराज रामदेव माणिक्य धार्मिक, सत्यवादी निखिल–गुण सम्पन्न, कमनीय मूर्ति, जितेन्द्रिय एवं बदान्य थे। महाराज धन्य माणिक्य के अम्बिका के उद्देश्य से जिस मंदिर को दान किया था उसके ऊपर वृक्षादि जमकर मंदिर फटने से वीरवर और धीर प्रकृति महाराज राम देव ने उस मंदिर को मनोज्ञ किया, द्विज पंकजसविता, कालीपादपद्मलुब्धमधुप भूपति श्रीयुत राम माणिक्य ने 1603 शक में वाताघात से टूटे देव मन्दिर का संकार कराया शकाब्द 1603"

इस समय राम माणिक्य के श्यालक(साला) बलि भीम नारायण विशेष प्रभावशाली थे। महाराज ने कौलिक प्रथा को अतिक्रम कर इन्हें युवराज की उपाधि प्रदान की थी। महाराज राम माणिक्य के शासन काल में इनके ही तत्वाधान में त्रिपुरा सुन्दरी मंदिर का संस्कार कार्य सम्पन्न हुआ था। मंदिर के उत्तर की ओर संयोजित शिलालिपि के पाठ करने से यह प्रतीयमान होता है। उस लिपि में उत्कीर्ण वाक्यों को दूसरे पृष्ठ में दिया जा रहा है।

चल–97

ए ए तु	माम
श्रीबलिभीम	ना
रायन	त्रिपुरा
श्रीहरिबल्लभ	ना
रायण	विश्वास
	शक 16 3

यह शिलालिपि 1603 शक की है। अतएव, महाराज रामदेव माणिक्य के शासनकाल की है। यह महाराज द्वारा मंदिर संस्कार कार्य में बलिभीम नारायण और हरिबल्लभ नारायण तत्वाधायक थे। इसके अतिरिक्त इनके नाम मंदिर में दीवार में संयोजित होने के अन्य कारण दिखाई नहीं देते।

उदयपुर में गोमती नदी के उत्तर तीर पर स्थित राजबाडी(राजमहल) के पश्चिम दिशा में एक मंदिर है। उसकी हालत अब भी इतनी बिगड़ी नहीं है। साधारण लोग इसे भुवनेश्वरी मंदिर कहते हैं। किन्तु यह वाक्य निर्भर योग्य नहीं है। त्रिपुरेश्वर युवराज महाराज धन्य माणिक्य ने एक मन स्वर्ण द्वारा भुवनेश्वरी विग्रह का निर्माण करवाया था(1)। इसके पहले या पश्चात् किसी राजा के भुवनेश्वरी विग्रह स्थापन करने का कोई प्रमाण नहीं है। मेरे सहकारी श्रीयुत महेन्द्रनाथ दास उदयपुर परिभ्रमण के अवसर पर उस मंदिर के दीवार से खिसक कर अलग हो जाने से एक शिला लिपि को संग्रह कर यहाँ ले आये। यह शिला पट्ट इस समय राजमाला कार्यालय में रखा गया है। उसके अधिकांश अक्षर ही नष्ट हो चुके हैं और इसकी सहायता से उस मंदिर के सम्यक विवरण के बारे में किसी तरह की जानकारी मिलने की कोई सुविधा नहीं है। यह मंदिर जो विष्णु के उद्देश्य से दान किया गया था, शिला लेख से यह तथ्य उद्धार किया जा सकता है। अतएव इसे भुवनेश्वरी मंदिर कहकर सोचना समीचीन नहीं होगा। उस शिलालिपि की वर्तमान अवस्था नीचे दी जा रही है –

बादिए ताश
तित युग्मं। वाणी पद्मास्य चन्द्र प्रचुरतर सुधा पा
सानन्द चित्तं योगि ध्यानादगम्यं जलदरूचि वपु नन्दसु
नतो ।। भूपाल महिषी धन्या सती रत्नावती बरा। तर्ध
निर्मितो रेजे प्रासादः प्रीतये हरेः।। आसी स्वर्ग
: सुविमल हृदयस्तेन धर्म चेता स्तत् पुत्रः पुण्य शी
जनमनाः सान्त संतोष दामः। तत् पत्नी श्री
मठ मिमं विष्णवे कुन्द शुभ्रं का
विशाके सुशीला श

(1) यह भुवनेश्वरी मूर्ति का विवरण राजमाला द्वितीय लहर के 94 पृष्ठ पर दिया गया है।

चल–98

इस लिपि का लुप्तांश उद्धार करना असंभव है। यहाँ उद्धृत असंपूर्ण वाक्य द्वारा प्रकृत रूप भाव ग्रहण करना भी दुसाध्य है। शिला खण्ड के तीसरी पंक्ति में ''जलदरूचिबपु नन्द सू (नं)'' चतुर्थ पंक्ति में ''भूपाल महिशी धन्या सती रत्नावती वरा'', पंचम पंक्ति में ''प्रीतये हरे'' ये सभी वाक्य मिलते हैं। इससे यही समझा जाता है कि राज महिषी रत्नावती महादेवी ने श्री हरि की प्रीति कामना से इस मंदिर को दान किया था। महारानी रत्नावती द्वितीय रत्नमाणिक्य की प्रधान महिषी थी। राजमाला रत्नमाणिक्य खण्ड में है –

मुख्य रानी रत्नाबती बोसिलो विदित।	मुख्य रानी रत्नावती हुई जगत विदित।
आर रानी चतुर्भिते होइयाछे शोभित।।(1)	और रानियाँ चारों ओर हुई सुशोभित।।(1)
राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 20पृ	राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 20पृ

अर्थात, ''मुख्य रानी रत्नावती बीच में बैठी और बाकी रानियाँ उसके चारों ओर शोभायमान थी।''

शिलालिपि के वाक्यों के साथ राजमाला के वाक्य को एक जगह जोड़ने से यह स्पष्ट होता है कि महाराज द्वितीय रत्नमाणिक्य की महिषी महारानी रत्नावती ने उस मंदिर का निर्माण कराकर विष्णु के उद्देश्य से दान किया था। रत्नमाणिक्य की महिषी के अलावा अन्य किसी राज महिषी का नाम रत्नावती था, ऐसा कोई भी निदर्शन नहीं मिलता। रत्नमाणिक्य ने दो बार राजत्व किया था। पहली बार 1604 शक में राज्य प्राप्त किया था और उसी शक में पुनः राज्यच्युत हुए थे। द्वितीय दफे 1607 शक से 1634 तक राज्य भोग किया था। इसी समय उस मंदिर का निर्माण होना संभव है। शिला लिपि का शेष अंश विलुप्त होने की वजह से विशुद्ध भाव से समय निर्धारण करने में अंतर आ जाता है। महाराज रत्नमाणिक्य के शासन को मद्दे नजर रखते हुए हिसाब करने पर इसका प्राचीनत्व कम से कम दो सदी तो होगा ही।

उस शिला लिपि के बारे में और कुछ बातें कहने की हैं। लिपि के छटवीं पक्ति के ''स्ततपुत्रः पुण्य शी'' की एवं सातवीं पंक्ति के ''तत् पत्नी श्री'' वाक्य मात्र को उद्धार किया जा सकता है। महारानी रत्नावती के नाम के बाद उन शब्दों के संयोजित होने से स्वतः ही मन में उदय होता है कि उस महारानी की पुत्रवधु का विवरण लिखा गया था। किन्तु महाराज रत्नमाणिक्य के कोई संतान नहीं थी। इस अवस्था में पूर्वोक्त शब्दों को किसी उद्देश्य से लिखा गया था, यह उद्धार करना असंभव है। ''तत् पुत्र पुण्यशी(ल)'' और ''तत्पत्नी श्री'' शब्द के साथ में ये सभी शब्द संसृष्ट व्यक्तिओं का नामोल्लेख था। यह बात समझ आती है। शिला लिपि उत्कीर्ण, इन सभी नामों के अंश विनष्ट होने से, यह एक जटिल पहेली बनी हुई है। इसके अतिरिक्त इस विषय में प्रकृत तथ्य उद्घाटन के योग्य कोई सूत्र मिलने की या पाने का कोई भी उपाय दिखाई नहीं देता।

---

(1) रत्नमाणिक्य राजा स्वर्गगामी होइलो।
तार रानी रत्नावती सहगामी गेलो।।

अर्थात, ''रत्नमाणिक्य राजा की मृत्यु होने पर उनकी रानी रत्नावती उनके साथ सहगामी हुई।''

(2) रत्न महेन्द्र दुयेर ना रहे संतति। श्रेणीमाला

अर्थात, ''रत्न और महेन्द्र किसी की कोई संतान नहीं थी।''

चल–99

कुमिल्ला का राजराजेश्वरी विग्रह महाराज द्वितीय रत्नमाणिक्य की एक प्रख्यात कीर्ति है। महाराज ने वाराणसी धाम से यह मूर्ति लाकर यहाँ स्थापित किया था। इस बारे में त्रिपुर वंशावली पुस्तिका में लिखा है –

महाराजा रत्नमाणिक्य बाहादुर।
काशीधाम होइते काली आनिलो सत्वर।।
सेई काली कुमिल्ला नगरे स्थापिलो।
राजराजेश्वरी बलि नामकरण दिलो।।

अर्थात, रत्नमाणिक्य काशी धाम से काली मूर्ति लाकर कुमिल्ला नगर में स्थापन किया और उसका नामकरण किया ''राज राजेश्वरी''।

जनश्रुति के अनुसार कोई सन्यासी देवी के प्रथम पूजक थे। यह जन श्रुति झूठ नहीं लगती। क्योंकि सुदीर्घ काल तक संसार त्यागी ''गिरि'' सम्प्रदाय के सन्यासी ही शिष्य परंपरा से इस देवालय के महंत के पद पर रहते आये हैं। ऐसा लगता है कि देवालय के प्रथम महंत के समय से ही क्रमशः यह नियम प्रचलित हो गया था। इस देवालय के शेष महंत रामचन्द्र गिरि दार परिग्रह कर गृही होने के पश्चात् ही, यह महंत का पद उठा दिया गया था।

इस विग्रह के महात्मय के बारे में बहुत सारी बातें प्रचलित हैं। कहा जाता है कि इस देवालय का स्थान पहले जंगलों से भरा था। एक दिन प्रदोष काल में कुमिल्ला तदानींतन जज और मजिस्ट्रेट इलियट साहब(1) घोड़े पर सवार होकर देवालय के नजदीक होकर जा रहे थे। उस समय देवालय के आरती के समय बाद्य यंत्रों की आवाज से उनका घोडा चंचल हो उठा। इससे साहब क्रोधित होकर आदेश दिया – देवी मूर्ति को अभी इस समय यहाँ से स्थानांतरित करना होगा। अन्त में पूजक सन्यासी के अनुनय विनय पर बाध्य होकर विग्रह को एक रात के लिए उसी जगह रखने के लिए सम्मति प्रदान की।

साहब उसी रात निंद्रावस्था में गों गों शब्द कर रहे थे। उनके इस शब्द से उनकी पत्नी की नींद सहसा खुल गई और देखा कि उनके पति के मुख से अविरत धारा से खून बह रहा है। पत्नी की सेवा से साहब की चेतना लौटी और कष्ट के साथ के साथ कहा, निंद्रावस्था में उन्होंने अनुभव कर रहे थे कि कोई व्यक्ति उन्हें बलपूर्वक दबाकर कह रहा है ''राजराजेश्वरी मूर्ति को स्थानांतरित करने से तुम्हारी मृत्यु अवश्य है।''

....

(1) ये बंग के भूतपूर्व छोटे लाट सर चार्ल्स इलियट साहब के पिता थे। कुमिल्ला से पश्चिम की ओर 21 मील की दूरी पर इलियट गंज बाजार इनकी प्रतिष्ठित है। साधारण लोगों के द्वारा इनका नाम विकृत करके आइलर साहब हुआ था। इसी वजह से लोग इलियट गंज को आइलर गंज कहते हैं।

चल–100

इस घटना के पश्चात साहब ने अपने खर्च से देवी के वर्तमान मंदिर का निर्माण कराया था। वे जितने दिन कुमिल्ला में थे, देवी की सेवा में खर्च के रूप में दैनिक एक रूपया देते थे।

और एक बात कुमिल्ला के प्राचीन सम्प्रदाय के लोगों में अब भी प्रचलित है, इसे सभी जानते हैं। उस देवालय के पूर्व की ओर एक ब्राह्मण का घर था। वे पेशे से मुक्तार थे। उनकी कम उम्र की दो लड़कियाँ थी और प्रतिदिन राज राजेश्वरी मंदिर में अर्चना के समय शंख घंटा की आवाज सुनते ही दोनों लड़किया देवालय में उपस्थित होती थी और पुजारी ब्राह्मण उन्हें प्रसाद देते थे।

एक दिन घटना क्रम से दोनों लड़किया समय पर वहाँ उपस्थित नहीं हो सकी। देर से आकर देख पुजारी और नौकर सभी देव मंदिर का दरवाजा बन्द कर उसमें ताला लगाकर कहीं चले गये हैं। जन प्राणी विहीन मन्दिर के सामने रुक कर बड़ी लड़की निराश होकर छोटी बहन से बोली, " यहो कोई नहीं है, मन्दिर का दरवाजा बन्द है। अतएव प्रसाद मिलने की कोई आशा नहीं है। चलो घर चले।" दीदी की बात सुनकर छोटी बहन प्रसाद के बिना खाली हाथों घर जाने के लिए तैयार नहीं हुई और वह प्रसाद के लिए रोने लगी। लड़की जब अधीर हो रही थी तब अकस्मात् मन्दिर का पट खुला और एक लड़की बाहर आई। उनके सामने प्रसाद की थाली रखकर मन्दिर में घुस गई और मन्दिर का दरवाजा पुनः बन्द कर दिया।

दोनों लड़कियां प्रसाद खाते खाते हँसी खुशी जब देवालय से बाहर जाने लगी तो उसी समय पुजारी ठाकुर आ गये। छोटी लड़की ने उन्हें देख अभिमानी स्वर में कहने लगी ठाकुर, तुम हमें प्रसाद न देकर कहाँ चले गये थे। तुम्हें बुलाते बुलाते कितनी रोई। ठाकुर ने कहा "तुम लोगों के लिए मैने प्रसाद रखा है। आओ, अभी दूँगा।" उनकी बात यह सुनकर दोनों लड़किया एक साथ कह उठी, "तुम्हारी लड़की ने दरवाजा खोलकर प्रसाद बाहर लाकर हमें दे दिया है। यह देखो प्रसाद हम ने पाया है। थाली को बरामदे में रखकर आई हूँ।

यह बात सुनकर और उनके हाथों में प्रसाद देखकर ब्राह्मण स्तंभित हो गये। वे जानते थे उस समय देवालय जन शून्य था। विशेषतः उनकी कोई लड़की देवालय में नहीं रहती। मन्दिर का द्वार तालारूद्ध था, ये लड़कियां यहाँ कैसे प्रसाद पाई ? ब्राह्मण की समझ में कुछ नहीं आया। वे दोनों लड़कियों को लेकर मन्दिर के बरामदे में गये। देखा दरवाजा पहले की तरह बन्द है। लड़कियों से पूछ ताछ करने से सारी बातों से अवगत हुए और उनकी समझ में आया कि यह सच है कि किसी लड़की ने दरवाजा खोलकर प्रसाद की थाली बाहर निकालकर इन्हें दिया है।

चल–101
थाली दोनों लड़कियों ने बरामदे के कोने रख दिया था और वह थाली वहीं पर पड़ी है। ब्राह्मण को यह विश्वास हो गया कि यह माँ का ही कार्य है। उन्होंने दरवाजा खोलकर देवी के पद प्रान्तों में लोट लोट कर व्याकुल हृदय से दर्शन के लिए बालक की तरह चिल्ला चिल्लाकर रोने लगे। दोनों लड़कियां ब्राह्मण की अवस्था देख कुछ भी समझ नहीं पाई। ये दोनों भय विह्वल चित्त से घर की ओर भाग गई।

सभी लोग ''राज राजेश्वरी'' विग्रह के जाग्रत देवी के रूप में विश्वास और भक्ति करते हैं एवं सभी सम्प्रदाय के लोग आन्तरिक भक्ति के साथ इस देवालय में भोग और बलि चढाते हैं।

महाराज रत्नमाणिक्य की अन्यतम समुज्जवल कीर्ति कसबा में कालिका विग्रह की स्थापना है। राजमाला तृतीय लहर में कहा गया है, महाराज विजय माणिक्य के शासन काल में यहाँ पर्वत के ऊपर दुर्ग के भीतर घास फूस के घर में कालिका विग्रह की स्थापना हुई थी। इसके बाद महाराज कल्याण माणिक्य ने इस समय के ईंट से बने मंदिर का निर्माण कराकर ''कालिका देवी'' को दान किया था। मन्दिर के दक्षिण दिशा में जो शिला लेख का संयोजन है, उसकी आलोचना से यह ज्ञात होता है कि महाराज रत्नमाणिक्य द्वितीय ने इस मंदिर का संस्कार कराया था।(1)

इस मन्दिर में इस समय जो विग्रह प्रतिष्ठित है, वह भी महाराज रत्नमाणिक्य द्वारा ही स्थापित किया गया है। राजमाला के रत्नमाणिक्य खण्ड में लिखा है –

कस्बाते काली मूर्ति कोरिलो स्थापन।	कस्बा में काली मूर्ति किया स्थापन।
दश भुजा भगबती पतित तारण।।	दस भुजा भगवती पतित तारण।।
राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 20पृ	राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 20पृ

अर्थात, '' दश भुजा भगवती पतित तारण काली मूर्ति को कसबा में स्थापित किया।''

इस समय बलिभीम नारायण (रत्नमाणिक्य के मामा और युवराज) विशेष प्रभावशाली और राज्य के शासन कर्ता थे। राजमाला भाषा की आलोचना से यह बात स्पष्ट होती है कि उनके ही तत्वाधान में इस मूर्ति की प्रतिष्ठा हुई थी। इस समय महाराज विजय माणिक्य या महाराज कल्याण माणिक्य के समय का विग्रह था या नहीं और अगर था तो उसकी हालत कैसी थी यह जाना नहीं जा सका। वर्तमान विग्रह का विवरण त्रिपुर वंशावली ग्रंथ में रत्नमाणिक्य के प्रसंग में सुस्पष्ट रूप से वर्णित है। उसके कुछ अंश नीचे दिये जा रहे हैं –

''मने मने आद्याशक्ति भाविते लागिलो।
कृपा कोरि जयकाली स्वप्न देखाइलो।।
काशीम नगर परगनाते अमि बास कोरि।
तथा होइते राजा तुमि आमाके नेव हरि।।
ग्रामेते आनाके द्विजे कोइराछे स्थापन।
एई स्थाने थाकि आमार तृप्ति नाई मन।।

(1) राजमाला तृल 170–174 पृ

चल–102
पर्वत शिखरे थाकि मने अभिलाष।
कार स्थाने राजा तुमि ना कोरो प्रकाश।।
गोपनेते तुमि मोरे तथाकारे निया।
स्थापन करह राजा भक्तियुक्त होइया।।

अर्थात, "आद्या शक्ति ने मन में सोचा और कृपा करके जय काली ने स्वप्न दिखाया। उन्होंने राजा को आदेश प्रदान किया और कहा, काशीम नगर परगना में रहती हूँ। वहाँ तुम मुझे हरण करके ले आओ। गाँव में ब्राह्मणों ने मेरी स्थापना की है। यहाँ रहने से मेरे मन में तृप्ति नहीं है। पर्वत शिखर पर रहने की मेरी अभिलाषा है। किसी के यहाँ तुम इस बात को प्रकाश न करो। गोपन से तुम मुझे वहाँ से ले आओ और भक्ति युक्त चित्त से मेरी स्थापना करो।"

जनश्रुति के अनुसार यह विग्रह श्री हट्ट जिला के अधीन काशीम नगर परगना के धर्मागड़ गाँव में किसी ब्राह्मण के द्वारा वे प्रतिष्ठित हुई थी। धर्मागड़ दत्तपाड़ा निवासी श्रद्धास्पद कविराज श्रीयुक्त राजेन्द्र चन्द्र भट्टाचार्य महाशय ने इस विग्रह का कुछ विवरण संग्रह किया है। उनके साथ आलाप से और उनके द्वारा संगृहीत विवरण की आलोचना से यह ज्ञात हुआ है कि उस देवी के अवस्थान की वेदी अब तक धर्मागड़ में है। इस वेदी पर एक मजबूत मंदिर था। वह मंदिर केवल एक प्रकोष्ठ वाला था। उसका भीतर आयतन था 12 फुट गुणे 12 फुट और बाहर का आयतन था 18 फुट गुणे 18 फुट था। उँचाई अनुमानतः 52 1/2 फुट (35 हाथ)। मंदिर के पश्चिम की ओर एक बड़े आकार का दरवाजा और दक्षिण की ओर एक छोटा सा दरवाजा और उत्तर की ओर एक खिड़की थी। चारों किनारे चार उप मंदिरों से शोभायमान था। पाँच गम्बूजी की वजह से इसे पंचरत्न कहा जाता था। मंदिर के बीचों बीच देवी का आसन था। देखकर ऐसा लगता है कि विग्रह के चारों ओर साधक लोग जैसे बैठकर योग साधना कर सकें, इस तरह की व्यवस्था थी।

पश्चिम दरवाजे के सामने दो चाला गृह का आकार विशिष्ट द्वारदालान(बाहरी मण्डप) था। देवालय के चारों ओर चार दीवारी रहने का निदर्शन मिलता है। उसके मिट्टी के गर्भ के अंश अब भी विद्यमान है। पश्चिम की ओर प्राचीर के बीच में प्रवेश द्वार, उस प्रवेश द्वार के ऊपर दोचाला गृहाकृति का एक प्रकोष्ठ था। इस प्रकोष्ठ में प्रहरी रहने का अथवा उत्सव आदि के समय नहबत के लिए उपयोगी करके रखने की संभावना ही अधिक लगती है। 1304 बंगाब्द 30 ज्येष्ठ को प्रबल भूकम्प के फलस्वरूप इस मंदिर के बहुत से स्थान फट जाने पर भी यह व्यवहार के योग्य था। लेकिन अर्थाभाव की वजह से मंदिर का संस्कार नहीं हो सका। 1325 बंगाब्द के आषाढ़ महीने की 24 तारीख को भयंकर भूकम्प से यह मंदिर ढ़ह गया। इस समय स्थानीय सहृदय व्यक्तिओं की सहायता से मंदिर की ईंटें हटाकर उस देवी के आसन के ऊपर एक टिन का घर बनाया गया है। कुछ दिन हुए पहले की मूर्ति की तरह एक छोटी सी मूर्ति की स्थापना वहाँ हुई है।

इस मंदिर के बनाने में पुराने जमाने की न मोटी न पतली ईंटों को लगाया गया है। उनमें एक लिपि युक्त ईंट मिली है। स्थानीय पंडित मण्डली उस

चल–103
लिपि के पाठोद्धार में असमर्थ होने पर वह एसियाटिक सोसाईटी में भेजी गई और वहाँ यह निर्णित हुआ है कि उस ईंट पर कुछ अक्षर मात्र लिखे गये हैं – उसके द्वारा कोई वाक्य रचित नहीं हुआ है। ये सभी अक्षर अशोक के समकालीन अक्षरों के अनुरूप हैं, कहकर, सोसाइटी के पण्डितों ने कहा है, राजा अशोक वर्द्धन ने ईशा पूर्व 273 में राज्य प्राप्त कर 232 ईशा पूर्व तक 41 सालों तक राजत्व किया था। अतएव उनका शासनकाल दो हजार एक सौ साल से भी अधिक पुराना है। अशोक के समय प्रचलित अक्षर उनके तिरोधान के पश्चात बहुत दिनों तक चलते रहने पर भी मंदिर का प्राचीनत्व कम से कम दो हजार साल निर्णय किया जा सकता है। इस मंदिर की अधिष्ठात्री देवी का विग्रह कितना पुराना है और इसके प्रतिष्ठाता कौन थे यह निर्णय करना मुश्किल है। पर इस मंदिर के साथ त्रिपुरेश्वरों का कोई सम्बन्ध नहीं था, यह अनुमानतः कहा जा सकता है। विग्रह त्रिपुरेश्वर द्वारा प्रतिष्ठित होने पर महाराज रत्नमाणिक्य उसे रात में गोपनीय तरीके से लाने के लिए बाध्य नहीं होते। इसी देवालय से ही महाराज इस मूर्ति को लाया था, इसमें संदेह की कोई गुंजाइश नहीं है। बाद में इस मंदिर में एक बुद्ध मूर्ति की स्थापना हुई थी।

इस देवालय के दक्षिण की ओर एक तालाब है। इसके उत्तर किनारे पर देवालय के व्यवहार के लिए पक्का घाट अब तक विद्‌यमान है।

कसबा के दुर्ग संस्थापन के बाद से ही यह विग्रह जयकाली के नाम से जाना जाता है। बहुत से लोग इसे कसबा की काली भी कहते हैं। मूर्ति एक खण्ड उत्कृष्ट काले पत्थर पर खुदाई करके बनाई गई है। इसकी उँचाई लगभग साढे चार फुट की है। यह दश भुजा मूर्ति है। सिंहारूढ है। उसके नीचे असुर मूर्ति है। असुर के बाँई ओर भैंस का मस्तक अंकित है। पाद पीठ पर उत्कीर्ण शिव लिंग के दक्षिण की ओर एक बृषभ मूर्ति है। क्षय हो जाने के कारण वह एकदम अस्पष्ट है। सतर्कता के साथ देखने से बृषम के केवल दो ही पैर दिखाई देते हैं। देवी हस्त स्थित अस्त्र भी क्षय प्राप्त हो गये हैं। सिंह का मुँह दक्षिण की ओर है देवी के बाँई है। असुर घुटने बल पर बैठा है। उसके आक्रमण का कोई भाव नहीं है। उसके वाम हस्त वाम घुटने के उपर एवं दक्षिण हाथ का टखना सिंह के अधिकार में है। हाथ में कोई हथियार था या नहीं इसका कोई पता नहीं चलता। वह स्थान क्षय हो गया है।

किस ध्यान मंत्र से इस देवी की अर्चना होती है। पूजक ब्राह्मण से पूछने पर उन्होंने कहने से इन्कार कर दिया, बहुत अनुनय विनय पर कुछ अंश मात्र बताया था जो हम नीचे दे रहे हैं –

''दशभूजा त्रिनेत्रांच सिंहवाहिनीश्वरी।
शवोपरी स्थितां देवी नाग यज्ञोपवितिनां।।''

चल–104

यह मूर्ति काशीम नगर में रहते समय किस ध्यान से पूजिता होती थी, यह किसी को ज्ञात नहीं है। फिलहाल पूर्वोक्त कविराज श्रीयुक्त राजेन्द्र चन्द्र भट्टाचार्य महाशय ने श्रीहट्ट जिला के अन्तर्गत महादेवी बड कापन ग्राम निवासी श्रीयुक्त कालीकिशोर तन्त्ररत्न महाशय ने एक ध्यान मंत्र का संग्रह किया है। यह मंत्र माया तंत्र के अष्ट चत्वारिंशत पटल में दिया गया है। मंत्र यह है

महालिंगात् समुन्भूतं पुरूषं कृष्णपिगंलं।
तस्योपरि महासिंहं स्वयंसम्भू मायात्मकं।।
तत्पृष्ठे चितंयेद्देवीं महाकालीं महेश्वरीं।
रक्त वस्त्र परिधानां नानालंकार भूषितां।।
खड्ग चर्म गदाशूल पद्मं दक्षोर्द्धतः न्यसेत्।
पाशांकुश शंरचापं त्रिशूलं वामतः क्रमात्।।
कृष्णवर्णां महादेवीं दिग्वाहुभिर्बिराजितां।
लिंगपार्श्वे शुक्लवर्णं बृषभं धर्मरूपिनं।।
उत्तमांगं लुलापस्य वामपार्श्वे व्यवस्थितं।
एवं कल्पतरूमूले ध्यायेद्ब्रह्म स्वरूपिनीं।।

यह महाकाली का ध्यान है। मूर्ति के प्रत्येक अंग के साथ इस मंत्र का सामंजस्य परिलक्षित हो रहा है। अतएव यह महाकाली विग्रह के रूप में ही समझा जा रहा है। इस समय के पुरोहित लोग जिस ध्यान से देवी की अर्चना करते हैं, वह इस मूर्ति का प्रकृत ध्यान नहीं लगता है। इस विग्रह के बारे में इसके अतिरिक्त कुछ कहने की सुविधा नहीं है।

महाराज राममाणिक्य ने अपना साला बलिभीम नारायण को युवराज का जो पद प्रदान किया उसकी चर्चा हम पहले ही करके आये हैं। राम माणिक्य के पुत्र द्वितीय रत्नमाणिक्य के शासन काल में भी बलिभीम नारायण की युवराज की उपाधि बरकरार थी। इस समय वे शासन भार ग्रहण करके राज कार्य की देखभाल कर रहे थे। इसी कारण वश कसबा की काली मूर्ति की प्रतिष्ठा हो पाई थी।

इसके अलावा बलिभीम की और कीर्तियां हैं। उन्होंने बिलोनिया विभाग के अन्तर्गत पिनाक पाथर नाम के एक जगह पर एक महल का निर्माण कर एक नगरी बसाई थी। वहाँ पर अनेक तालाब, रास्ता घाट आदि प्राचीन समृद्धि का निदर्शन अब भी देखने को मिलता है। पिनाक पाथर में अवस्थित बलिभीम नारायण के विशाल तालाब का नाम यहाँ पर उल्लेखनीय है।

पिनाक पायर के अन्तर्भुक्त ''देबारू'' और ''ठाकुरानी टीला'' नाम के एक जगह बृहदाकार शिला खण्ड पर उत्कीर्ण विष्णु मूर्ति, हनुमान मूर्ति, नृसिंह मूर्ति एवं एक अष्ट भुजा महिषासुर मर्दिनी शक्ति मूर्ति आदि अनेक विग्रह पर्वत के कन्दराओं में मिट्टी के ऊपर फैले

चल–105
इन्हें देखा जाता है। इन मूर्तियों की विशालता को देखने बरबस हमें विस्मित होना पड़ा था। जिस जमाने में रेल, स्टीमर आदि इन अंचलों से प्रचलित नहीं थे, उस समय किस जगह से, किस तरह से इन्हें लाया गया था, यह सोचा नहीं जा सकता। ये सभी पत्थर उत्कृष्ट श्रेणी के न होने पर नजदीकी किसी पहाड़ पर इस तरह के पत्थर नहीं हैं। ये अगर राज्य में कहीं पाये गये होगें तो इन्हें किसी दूरी से लाया गया होगा –इसमें कोई संदेह नही। दीर्घकाल तक धूप बारिश में मूर्तिओं का बहुत कुछ क्षय हो गया है। अतएव इनकी कला कृतिओं के बारे में विचार करना असंभव सा हो गया है। फिर भी मामूली तौर पर यह कहा जा सकता है कि इनकी शैली इतनी उच्च नहीं है। मूर्तियों की विशालता ही इनकी विशेषता है।

इन सभी मूर्तिओं में कोई कोई ईंटों से बनी मंदिरों में प्रतिष्ठित थी। अब भी मंदिरों भग्नावशेष पड़े हैं। मूर्तियां खडी अवस्था में ही थी और गुप्तधन लोभी तस्करों द्वारा वे गिराई गई। विग्रह पाद पीठ के नीचे भूगर्भ में गुप्त धन की बात सोचकर ही उन्होंने मिट्टी खोद खोदकर यह अपचय की सृष्टि की है। कोई कोई मूर्ति हटाई भी गई है, ऐसा लगता है। एक अष्ट भुजा महिषासुर मर्दिनी मूर्ति का नीचे का अंश अब भी मिट्टी के नीचे गड़ा हुआ है। महाराज कुमार श्रीलश्रीयुक्त ब्रजेन्द्र किशोर देव वर्मन बाहादुर के प्रयत्न से उस अंचल के मघ अधिवासिओं के द्वारा मिट्टी खुदवाकर मूर्ति के उद्धार की चेष्टा की गई थी। इस समय मैं भी उनका सह यात्री था। उसे उठा लाना मनुष्य के लिए असाध्य होने पर, एक हाथी के द्वारा भी उसे खिँचवाया गया था। सारा दिन कोशिश करने बावजूद भी सफलता नहीं मिलने पर, क्षुब्ध मन से लौटना पड़ा था। उस दिन प्रचण्ड धूप, कठोर श्रम एवं उपवास ही हमारे भाग्य में घटा था। इतनी कोशिश के बावजूद भी विग्रह का उद्धार नहीं हो सका। ये सारी कृतियाँ निर्जन बीहड में ही विलय न हो जायें, इसलिए इसकी उपयुक्त व्यवस्था करना बहुत जरूरी हो गया है।

गोविन्द माणिक्य के कनिष्ठ भ्राता जगन्नाथ ठाकुर

जगन्नाथ के पुत्र चम्पक राय एवं कन्या का नाम द्वितीया देवी था। यह द्वितीया देवी ने मेहेर कुल परगना के अधीन लालमाई पहाड़ी के नीचे एक दीर्घिका (बडा तालाब) का खनन कराया था। वह आज भी विद्यमान है। इस जलाशय को जन साधारण ''दुत्यार दिघि'' अर्थात द्वितीया का तालाब कहते हैं। द्वितीया शब्द अपभ्रंश होकर ''दूत्या'' नाम धारण किया है। अनभिज्ञता के फलस्वरूप कोई कोई इसे दूत्या राजा का तालाब भी कहत हैं। इस तालाब के पश्चिम की ओर पहाड़ के ऊपरी हिस्से पर ''द्वितीया ठाकुरानी'' (ठकुरानी) ने दो मंदिरों का निर्माण कराकर उनमें से एक में चण्डिका मूर्ति

चल–106

की स्थापना की थी। इस तालाब और देवायतन के बारे में राजमाला में लिखा है –

चम्पकराय देवान छिलो होइलो युबराज।	चम्पकराय थे दीवान, हो गये युवराज।
तार भग्नी द्वितीया नाम कोरे पुण्य काज।।	उनकी भगिनी द्वितीया नाम, करती पुण्य काज।।
मेहारकुल उदयपुर दीर्घिका खनिलो।	मेहेरकुल उदयपुर में दिर्घिका खनाया।
दौल सेतु चण्डीमुड़ा चण्डिका स्थापिलो।।	दौल सेतु चण्डीमुड़ा में चण्डिका बैठाया।।
राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 23पृ	राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 23पृ

अर्थात, "चम्पक राय दीवान और फिर युवराज बने। उनकी बहन द्वितीया नाम की थी और पुण्य कार्य करती थी। उदयपुर मेहेरकुल में उसने दीर्घिका (बडा तालाब) खनन कराया दौल सेतू चण्डी मुडा में चण्डिका मूर्ति की स्थापना की।

लालमाई पहाड़ के श्रृंग भूमि पर चण्डिका मूर्ति की स्थापना के समय से ही उस श्रृंग का नाम चण्डीमुडा हुआ है। यह विग्रह किस समय किस अवस्था में अंतर्हित हुआ यह जानने का कोई उपाय नहीं है। स्थानीय लोगों का कहना है कि किसी उन्माद ग्रस्त व्यक्ति ने विग्रह को मंदिर से ले जाकर कहाँ फेंक दिया है इसका कोई पता नहीं चला। चण्डीमुडा के नजदीक हरिपुर गाँव में किसी नमःशूद्र जाति के गृहस्थ के घर, पत्थर खण्ड पर उत्कीर्ण एक दस भुजा महिषासुर मर्दिनी मूर्ति प्रतिष्ठित है। यह मूर्ति उस ग्राम के एक तालाब के कीचड़ निकालते समय तालाब में नीचे दबी हुई थी। पहले यह मूर्ति कहां थी एवं किस कारण वश, कितने पहले, किसके द्वारा मूर्ति तालाब में फेंकी गई थी, इस बारे में कोई कुछ नहीं जानता। जिस तालाब में यह विग्रह मिली, वह तालाब बहुत प्राचीन है। इसकी उम्र का विवरण गाँव के साधारण लोगों के बुद्धि से परे है। हमें लगता है यह मूर्ति ही "चण्डिका" नामकरण करके चण्डीमुडा के मन्दिर में स्थापित की गई थी। मुसलमानों के हाथ से रक्षा के निमित अथवा अपहरण के उद्‌देश्य से किसी व्यक्ति के द्वारा इसे जलाशय में फेंक दिया गया होगा। पहले कहा गया उस विक्षिप्त व्यक्ति द्वारा भी ऐसा होना कोई विचित्र बात नहीं होगी। पर ये सारी बातें केवल अनुमान निर्भर हैं – इसका कोई प्रमाण नहीं है। इस तरह की मूर्ति हरिपुर गाँव के चारों ओर कहीं स्थापित थी अथवा उन दिनों इस तरह के विग्रह प्रतिष्ठा करने वाले उस अचंल में इस तरह के लोग थे इसका भी कोई प्रमाण नहीं मिलता। इसी वजह से यह धारणा स्वतः ही मन में आती है कि त्रिपुर राज परिवार की ही कीर्ति है।

मूर्ति दो हाथ अधिक उँचाई वाले पत्थर पर खुदाई करके बनाई गई है। इसका शिल्प नैपुण्य उल्लेख योग्य है। स्थानांतरित एवं जलाशय में फेंकें जाने के बाद भी यह अक्षुण्ण अवस्था में है।

पहले ही कहा गया है। चण्डीमुडा में दो मन्दिर हैं और इन्हें साधारणतः चण्डी मन्दिर के नाम से ही प्रसिद्ध हैं। यहां एक चण्डी मूर्ति है, यह सहज ही समझ में आता है। इसका दूसरा मन्दिर किस देवता के उद्‌देश्य से बनाया गया था यह जानने का कोई उपाय नहीं है। त्रिपुरा की पूर्व राजधानी उदयपुर है वहां सब प्राचीन

चल–107
मंदिर हैं। ये दोनों मंदिर उन्हीं के अनुकरण बनाये गये हैं। यह ईसवी सन् 17 सदी की बात है। अतएव इसका प्राचीनत्व कम से कम अढ़ाई सौ वर्ष का है। मंदिर निर्माण के पश्चात कभी इनका संस्कार किया गया है, ऐसा नहीं लगता। प्राचीन काल की निर्माण के गुण के कारण दोनों मंदिर जीर्ण शीर्ण देह लेकर खडे हैं। इनके ऊपर नीचे और चारों ओर वृक्षलतायें फैली हैं। एक मंदिर के दरवाजे पर एक शिलालेख का पत्थर जोडा गया था, ऐसा चिन्ह दिखाई देता है।

मंदिर द्वय दीर्घ कालों तक परित्यक्त अवस्था में थे। चाँदपुर निवासी श्रीयुक्त निवारण चन्द्र चक्रवर्ती ने पहले यहाँ एक सुवर्ण मण्डित अष्ट भुजा शक्ति मूर्ति यहां स्थापना की थी। यह 1325 बंगाब्द की बात है। प्रतिष्ठा के थोड़े दिनों के पश्चात इस विग्रह के अपहृत होने पर इस चक्रवर्ती महाशय ने पुनः कुछ मूर्तिओं का संग्रह कर दोनों मंदिरो में स्थापित किया था। एक मंदिर में एक दण्डायमान द्विभुज मूर्ति और एक मंदिर में उपविष्टावस्था में (बैठी हुई) गठित प्रस्तर मूर्ति, एक धातु की अष्ट भुजा शक्ति मूर्ति, एक प्रस्तरमय चक्र एवं एक दूसरे मंदिर में अष्टधातु निर्मित एक शिवलिंग स्थापन किया था। प्रथम मन्दिर में दण्डायमान(खड़ी) मूर्ति सूर्य मूर्ति थी एवं उपविष्ट मूर्ति चण्डी मूर्ति के नाम से जानी जाती है। किन्तु उपविष्ट मूर्ति के सामने दीवार आदि में जो मूर्तियां अंकित हैं वे नानावस्था के बुद्ध मूर्ति जैसी लगती हैं। सबसे ऊपर वाली अंकित मूर्ति ''ध्यानी बुद्ध'' की होने की संभावना ही अधिक है। अतएव यह विग्रह बौद्ध तांत्रिक समकालीन का होगा ऐसी हमारी धारणा हो रही है।

लाल माई पहाड़ का स्थूल विवरण एवं पूर्वोक्त अष्ट भुजा शक्ति मूर्ति की कथा राजमाला के द्वितीय लहर 289 – 297पृष्ठ में ''पाटिकारा'' राज्य के विवरण में उल्लेख किया गया है। यहाँ पर उसकी पुनः आलोचना नहीं की जा रही है।

महाराज मुकुन्द माणिक्य द्वारा स्थापित विग्रह व मंदिर

महाराज मुकुन्द माणिक्य ने अपने गुरू प्रभुपाद वृन्दावनचन्द्र गोस्वामी के नामानुसार अष्ट धातु निर्मित श्रीश्री वृन्दावनचन्द्र विग्रह की स्थापना की। इस प्रसंग में राजमाला में लिखा गया है

बृन्दावन चन्द्र गोसाई नित्यानन्द वंश।	वृन्दावन चन्द्र गोसाई नित्यानन्द के वंश।
तान कीर्ति कोतो बोलि तिनि देव अंश।।	उनकी कीर्ति कितना कहूँ थे वे देव अंश।।
मुकुन्द माणिक्य राजार तिनि ईष्ट देब।	मुकुन्द माणिक्य देव के थे ईष्ट देव।
राजा मने कोरे ईष्ट नामे स्थापे देब।।	राजा मन में उपजा ईष्ट नाम से स्थापना देव।।
ईष्ट मते धातुर विग्रह निर्माइलो।	ईष्ट देव के मत से किया धातु विग्रह निर्माण।
बृन्दाबन चन्द्र ईष्ट नामेते राखिलो।।	वृन्दावन चन्द्र रखा ईष्टदेव के नाम।।
दश कर्म कराइलो यथाविधि मते।	दस कर्म किया यथाविधि मानकर।
उदयपुर स्थापिलेक मन्दिर ताहाते।।	स्थापन किया भव्य एक मन्दिर उदयपुर।।
राजमाला चल मुकुन्द माणिक्य खण्ड 32–33पृ	राजमाला चल मुकुन्द माणिक्य खण्ड 32–33पृ

अर्थात, ''वृन्दावनचन्द्र गोसाई थे नित्यानन्द के वंशज हैं। उनकी कीर्ति की बात में कहाँ तक बखान करूँ वे तो देव अंश हैं। मुकुन्द माणिक्य राजा के वे ईष्ट देव हैं। राजा के मन में इच्छा थी कि वे ईष्ट देव के नाम से ही देश में विग्रह स्थापन करेगें। ईष्ट देव के मतानुसार उन्होंने धातु का विग्रह का निर्माण कराया ''वृन्दावनचन्द्र'' के नाम से उस विग्रह की स्थापना की। दश कर्म यथाविधि कराकर उदयपुर में मंदिर बनाकर उसकी स्थापना की।''

चल–108

श्रेणीमाला ग्रन्थ में भी इस विग्रह का विवरण मिलता है। इस ग्रंथ में मुकुन्द माणिक्य के प्रसंग में कहा गया है

आर पुण्य कोरिलेन कहिबो ऐखन।
अष्ट धातुर श्रीमूर्ति कराय रचन।।
नृपतिर ईष्ट देबे एई नाम छिलो।
वृन्दावनचन्द्र नाम ताहान राखिलो।।
आयोजन कोरिलेन यथा शास्त्रमते।
प्रतिष्ठा विवाह कराय देब जेनो ताते।।
वृन्दावनचन्द्र मंदिर ईष्टके निर्माण।
ठाकुर स्थापिलो नृप उदयपुर स्थान।।''

श्रेणी माला।

अर्थात, ''उन्होंने और पुण्य किया है। जिसे मैं अभी कहूँगा। उन्होंने अष्ट धातु की मूर्ति की रचना कराई। नृपति के ईष्ट देव का भी यही नाम था उसी के अनुसार ''वृन्दावनचन्द्र'' उनका नाम रखा। शास्त्रानुसार यथावत आयोजन किया गया। दसविध संस्कार के अनुसार विग्रह को प्रत्यक्ष मानकर प्रतिष्ठा विवाह कराया। वृन्दावनचन्द्र मंदिर निर्माण करके उसमें उदयपुर में नृप ने ठाकुर की स्थापना की।''

इन सभी वाक्यों से जाना जाता है, ''महाराज मुकुन्द माणिक्य ने श्रीश्रीवृन्दावनचन्द्र विग्रह का निर्माण कराकर उसका दसविध संस्कार समापन कर उदयपुर में स्थापना की। इस समय उनके द्वारा निर्मित वृन्दावनचन्द्र का मंदिर आज भी उदयपुर के भैरव बाड़ी (भैरव का घर) के चाहार दीवारी के भीतर (पश्चिम की ओर) विद्यमान है। इस मंदिर में जो शिला लेख संयोजित है उसके सभी अक्षर विनष्ट हो जाने के कारण पाठोद्धार का कोई उपाय अब नहीं रहा।

श्रीश्रीवृन्दावन विग्रह त्रिपुर राज परिवार के कुल देवता हैं। उदयपुर से राजधानी अगरतल्ला करने के समय महाराज कृष्ण माणिक्य द्वारा यह विग्रह भी अगरतल्ला लाया गया। इसके बाद दीर्घ दिनों तक अगरतल्ला के पुरानी हवेली में इस विग्रह की पूजा होती रही। महाराज वीर चन्द्र माणिक्य के शासन काल में इसे नई हवेली में लाया गया है। इस समय यह विग्रह ''लक्ष्मी नारायण'' और ''भुवनमोहन'' विग्रह के साथ पूजित हो रहा है। महाराज वीरेन्द्र किशोर माणिक्य द्वारा निर्मित सुरम्य मंदिर में यह विग्रह संस्थापित है।

महाराज कृष्ण माणिक्य द्वारा स्थापित विग्रह व मंदिर

महाराज कृष्ण माणिक्य ने उदयपुर के राज पाट उठाकर अगरतल्ला में एक नई राजधानी की स्थापना की। इस समय उदयपुर से श्रीश्री चतुर्दश देवताओं को भी साथ लाये थे। अगरतला में पुरानी हवेली में एक मंदिर का निर्माण कराकर उस मंदिर में ''चतुर्दश देवता'' की स्थापना की गई।(1) अब भी सभी विग्रह उसी मंदिर में प्रतिष्ठित हैं।

---

(1) महाराज कृष्ण माणिक्य प्रसंग में मिलता है –
हरिमणि युवराज कोरिलो आदेश।
अगरतल्ला धामें पुरी करह विशेष।। त्रिपुर वंशावली।
\+ + + +
ताहा सुनि युबराज झटिते चलिलो।
अगरतल्ला स्थाने असि उपनीत होइलो।। त्रिपुर वंशावली।

अर्थात, ''हरिमणि ने युवराज को आदेश दिया कि अगरतल्ला धाम में एक विशेष पुरी बनाओ। यह सुनकर युवराज तुरंत चल पड़े और अगरतल्ला में आकर उपस्थित हुए।

चल–109

महाराज कृष्ण माणिक्य की अन्य कीर्ति है– नूरनगर परगना के राधानगर गाँव में ''राधा माधव'' देवता का मन्दिर। आसाम बेंगल रेलवे के अखउड़ा (इस समय बंगला देश) स्टेशन के करीब कालिका गंज नाम के एक स्थान पर आस पास दो तालाबों का खनन कराकर उन दोनों तालाबों मध्य भाग में एक मन्दिर (पंचरत्न) का निर्माण किया गया। इस मन्दिर में श्रीश्री राधा माधव विग्रह की स्थापना की थी। महाराज के आज्ञानुसार राजमहिषी जाहुवी महादेवी ने यह देवालय एवं देवता की प्रतिष्ठा की थी। इस विषय में राजमाला में लिखा है –

कालिकागंजे दुई दीधि कोरिया खनन।	कालिका गंज में दो तालाबों का किया खनन।
पाड़ मध्ये निर्माइलो पंच जे रत्तन।।	तीर पर निर्माण किया पंचरत्न।।
एगार श आट सत्तैर सनेर समय।	ग्यारह सौ अठत्तर जब था समय।
महारानी जान्हुवाय प्रतिष्ठा करय।।	महारानी जान्हुवा ने प्रतिष्ठा कराया।।
राधामाधव दुई विग्रह कोरिलो यत्तन।	राधा माधव दो विग्रहों का करके जतन।
पंचरत्न निर्माइया(1) कोरेन स्थापन।।	पंचरत्न का निर्माण(1) कर दिया स्थापन।।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 53–54पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 53–54पृ

अर्थात, ''कालिकागंज में दो तालाबों का खनन कराकर उसके बीच में पंचरत्न(पाँच गुम्बज वाला) का निर्माण किया। महारानी जाहुवी ने राधा माधव के दो विग्रहों का यत्न पूर्वक प्रतिष्ठा की।''

कृष्णमाला ग्रंथ में इस विषय को सुस्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है। उस ग्रंथ में लिखा है –

''राजा कृष्ण माणिक्येर रानी पूण्यमति।
स्थापिते देवता एक कोरिलेक मति।।
कालिकागंजेते पूर्बे आछे जलाशय।
तथाते निर्माण कोराइलो देबालय।।
दुई दिके दुई पुष्करिणी मनोहर।
तार मध्ये देबालय परम सुन्दर।।
पंचरत्न नामे मठ ईष्टक रचित।(2)
निर्माइलो तार मध्ये अति सुललित।।'' कृष्णमाला

अर्थात, ''राजा माणिक्य की रानी पुण्यमति थी। देवता की स्थापना उन्होंने अपना मन बनाया और देव विग्रह स्थापना के लिए अपने मन में सोचा। कालिकागंज में पहले ही दो तालाब का खनन कराया था। उन्हीं दो जलाशयों के बीच मध्य भाग में एक देवालय बनाया। दोनों पुष्करिणिओं के बीच परम सुन्दर पंचरत्न नाम के ईंटों से बने अति सुन्दर मंदिर में विग्रहों की प्रतिष्ठा की।''

....

प्रथमत राजागण इट सुरकी दिया।
एक मठ वानाइलो मनोरम कोरिया।।
सेई मठे चौद्ददेव स्थापन कोरिलो।
तदन्तरे पुरी एक निर्माण होइलो।। त्रिपुर वंशावली।

अर्थात,''पहले राजा गणों ने ईंटें और सुरकी से एक अति मनोरम शोभा युक्त मठ का निर्माण किया। उस मठ में चौदह देवताओं की स्थापना की और उसके बाद वहाँ एक पुरी का निर्माण हुआ।''

(1 – 2) राजमाला, कृष्णमाला, श्रेणीमाला और त्रिपुर वंशावली आदि ग्रंथों में इस देवालय को पंचरत्न आख्या दी गई है। किन्तु इस समय ऊपर के हिस्से के मध्य भाग में दोचाला गृह के आकार विशिष्ट केवल अब चूड़ा ही रह गया है। एक चूडा विशिष्ट मंदिर को पंचरत्न क्यों कहा गया यह संशय ह्रदय में उपस्थित होने पर मंदिर का दर्शन करने गया था। देखकर पता चला कि ऊपर चारों कोने में चार चूड़ा थे। वे बहुत पहले ही नष्ट हो गये हैं। ये चूड़े कैसे थे, कितने बडे थे यह समझ में नहीं आया। सौभाग्य क्रम से राज सरकारी चित्रशाला में इस मंदिर का एक चित्र मुझे मिला। इससे मन्दिर के पूर्वास्था जानने की मुझे विशेष सहूलियत मिली। यह मन्दिर जो पाँच चूडा वाला था उक्त चित्र हस्तगत होने से इसका निर्णय करना आसान हो गया। उसके

चल–110
चारों किनारे चार चूडायें और मध्य स्थान में दोचाला घरनुमा प्रकोष्ठ के ऊपर एक चूडा था। इस समय केवल मध्य भाग का एक ही चूडा रह गया है।

प्रतिष्ठा कोरिते सेई देव आयतन।
फाल्गुन मासेते कोरिलेक आरंभन।।
+ + + +
तारपोर रानीके कोहिलो नृपमणि।
कर गिया पंचरत्न प्रतिष्ठा आपनि।।
तबे महारानी नृपतिर बचने।
पंचरत्न प्रतिष्ठा कोरिलो शुभक्षणे।।
निर्मल कोरिया मूर्ति कोरिया गठन।
स्थापिल देवता राधा श्रीराधामोहन।।
नब – धारा – धर जिमि श्याम कलेबर।
तड़ितेर प्राय ताहे हरित अम्बर।।
माथे चूडा होते बाँसी त्रिभंग भंगिमा।
कि कोहिते पारि सेई रूपेर महिमा।।
बामेते राधिकामूर्ति भुबन मोहिनी।
स्वरूपे आसिछे जेनो देवी सनातनी।।
सुवर्ण रजत मुक्ता प्रबाल रचित।
अलंकार नानाविध ताहाते भूषित।।
पंचरत्ने सेई मूर्ति कोरिया स्थापन।
नाम कोरिलेक राधा श्रीराधामोहन।।"

अर्थात, उस देवायतन की प्रतिष्ठा करने के लिए उन्होंने फागुन महीने में कार्य आरम्भ किया।
+ + + +
उसके बाद रानी से राजा ने कहा कि तुम जाकर पंचरत्न की प्रतिष्ठा करो। महारानी ने राजाज्ञा पर वहाँ जाकर एक शुभ क्षण में पंचरत्न की प्रतिष्ठा की। शुद्ध और निर्मल रूप से मूर्ति का निर्माण कर श्री राधा मोहन की स्थापना की। नव धारा धारण करने वाले जो श्याम कलेवर हैं। राधा साथ रहने पर श्याम अम्बर भी जैसे कुछ हरित आभा युक्त हो गया। सिर पर चूडा हाथ में बाँसुरी त्रिभंग – भंगिमा को देखकर ऐसा लगता है कि उस रूप की महिमा का वर्णन मैं कैसे करूँ। भुवन मोहिनी राधिका की मूर्ति बाँई ओर शोभित है। लगता है सनातनी देवी जैसे स्वरूप में आ गई है। स्वर्ण, रजत, मुक्ता और प्रबाल रचित नाना तरह के अलंकार से भूषित है। इस मूर्ति को पंचरत्न में स्थापित किया और नाम रखा राधा श्रीराधामोहन

कृष्णमाला

यह देवालय और देवता प्रतिष्ठा के बारे में श्रेणी माला ग्रंथ में लिखा है –

"परगने नूरनगर राधानगर ग्रामे।
पंचरत्न दिलो रानी जाहुवीर नामे।।
ताहार पूर्व पश्चिम ए दुई भागेते।
दुई दीर्घिका दिलो राजा रानी ताते।।
पंचरत्ने राधामाधब रानी जे स्थापिलो।
ठाकुर सेबार तोरे जमि कोतो दिलो।।

अर्थात, "नूरनगर परगना के राधानगर गाँव में रानी जाहुवी ने अपने नाम से पंचरत्न का निर्माण किया। पंचरत्न के पूर्व और पश्चिम दोनों किनारे तालाब खनाया और बीच में राधा माधव का विग्रह स्थापित किया। मंदिर की सेवा के जमीन भी दान दिया।

ग्रंथान्तर में है –

तत्परे नूरनगर राधानगर ग्राम।
दुई दिघि कटाइलो पंचरत्न समे।।
दुई दिघिर मध्य स्थले पंचरत्न दिया।
राधामाधव बुद्धदेब(1) ताहाते स्थापिया।।

अर्थात, इसके बाद नूरनगर के राधानगर गाँव में दो तालाब का खनन कराया और बीच में पंच रत्न की स्थापना कर, दो तालाबों के बीच पंच रत्न की स्थापना की। राधा माधव और बुद्ध देव की भी उसमें स्थापना की।

---

(1) राधामाधव विग्रह के साथ जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा की मूर्ति भी स्थापित हुई थी। यहां दारूब्रह्म अब भी राधामाधव के साथ ही पूजित होते हैं। एक सम्प्रदाय का कहना है यह त्रिमूर्ति बौद्धगणों का धर्मयन्त्र कह कर गृहीत हुआ है। इस कारण कुछ लोग जगन्नाथ को बुद्धदेव कहते है।

चल–111
प्रतिष्ठादि कार्य तबे स्वयं कोरिलो।
महारानी जाहुवी कीर्ति नियोजिलो।।
त्रिपुर वंशावली।

अर्थात, विग्रह प्रतिष्ठा आदि का कार्य उन्होंने स्वयं किया। महारानी जाहुवी ने अपनी कीर्ति को स्वयं उज्जवल किया।''

ऊपर दिये गये वाक्यों की आलोचना करने पर यह प्रतीयमान होता है कि देवायतन की भूमि पहले कालिकागंज के नाम से प्रख्यात थी। राधामाधव विग्रह प्रतिष्ठा के बाद उसका नाम राधानगर हुआ है।

राजमाला के वाक्यों की आलोचना से यह जाना जाता है कि यह देवायतन 1185 त्रिपुराब्द में प्रतिष्ठित हुआ। कृष्णमाला ग्रंथ में है।
''षोलोशत सातानब्बई शकेर समय।
प्रतिष्ठा होईलो पंचरत्न देबालय।।
कृष्णमाला।

अर्थात, ''सोलह सौ सतानब्बे शकाब्द में यह पंचरत्न देवालय की स्थापना हुई।''

1185 त्रिपुराब्द और 1697 शक अभिन्न हैं। अतएव उभय ग्रंथों के निर्धारित समय का परस्पर एक्य दिखाई देता है। इस मंदिर की दीवार पर जो शिलालिपि संयोजित थी, वह इस समय राजमाला कार्यालय में सुरक्षित है। उस पत्थर के ऊपर उत्कीर्ण श्लोकों में मंदिर का स्थूल विवरण मिलता है। प्रतिष्ठा का शंकाक में भी उसमें लिखा गया है। शिलालिपि इस तरह है –

स्वस्ति – आसीद् भूपैकभूपः क्षयितरिपुकुलः कल्याणदेवः क्षितौ,
तत्पुत्रः कीर्त्तिवल्ली प्रथित सुरपुरो गोविन्ददेवो नृपः।
तत्सूनु धर्मशीलः प्रबल नृपवरो रामदेवः प्रतापी,
तज्जः श्रीकृष्णसेवानवरत कृतधीदेवो मुकुन्दो नृपः।।
तत्सूनुर्विप्रगोप्ताह्यरिकुल विजयैर्विश्वविभ्रान्त कीर्तिः,
श्रीयुक्तः कृष्णदेवः क्षितिपतिरित तत्पत्नी महेषी शुभा।
नाम्ना श्रीजान्हवी सा पतिचरणरता विष्णवे कृष्णप्रीत्या,
प्रदाद् रम्येष्ट कामिर्विरचितममलं मन्दिरं पंचरत्नं।।
कालिकागंजके याम्ये दिर्घिकाद्वय मध्यतः,
मुणिग्रहषड़ब्जे च माघे माकरी(1) संज्ञके।
धर्म्माधर्म्म विचारे च राजद्वारे व्यवस्थितः,
श्रीकृष्णचन्द्र शर्मा श्रीकृष्णमाणिक्य भूपते।।

....

यहाँ तक कि दसावतार की मूर्तियों के अकंन के समय किसी किसी चित्रकार ने बुद्ध की जगह जगन्नाथ की मूर्ति आंक दिया है। यहाँ पर भी जगन्नाथ विग्रह को बुद्धदेव कहा गया है।

(1) माकरी – प्रधानतः माघ महीने की शुक्ला सप्तमी तिथि को माकरी सप्तमी कहा जाता है। इस माघ महीने की पूर्णिमा तिथि भी माकरी तिथि में आती है, किन्तु सप्तमी तिथि मुख्यतः मानी जाती है। भविष्य पुराण में लिखा है –
सूर्यग्रहण तुल्या हि शुक्ला माघस्य सप्तमी।
अरूणोदय बेलायां तस्यां स्नानं महा फलम्।।
\+ \+ \+ \+

चल–112

मन्तव्य – श्लोक की चौथी पंक्ति में ''श्री कृष्ण सेवा'' के स्थल पर शिला खण्ड पर ''श्री कृष्ण देवा'' उत्कीर्ण हुआ है। पाँचवी पंक्ति में ''विजैय'' शब्दों में ''ज'' के स्थान पर अन्त्यस्थ''य'' व्यवहार किया गया है। छठी पंक्ति में ''महिषी'' शब्द को देश प्रचलित भाषा में ''महेषी'' किया गया है। नवीं पंक्ति में ''याम्ये'' की जगह ''खाम्ये'' उत्कीर्ण हुआ है। मूल में श्लोकानुरोध पर पृथक पृथक पंक्तियों की लिपि नहीं की गई है। प्रस्तर फलक का आयतन पूर्ण करके पंक्तियों की खुदाई हुई है। आठ पंक्तियों में पूर्वोक्त सम्यक वाक्य उत्कीर्ण हुए हैं। शिला खण्ड का आयतन 26इन्च गुणे 13 1/2इन्च है।

शिला लिपि का मर्म

''भूपतियों में श्रेष्ठ रिपु कुल के उच्छेदकारी, कल्याण देव नाम से पृथिवी में एक नृपति थे। उनके पुत्र गोविन्द देव कीर्ति द्वारा सुरलोक में भी विख्यात थे। तत् पुत्र महाराज मुकुन्द देव कृष्ण सेवा में निरत थे। उनके पुत्र ब्राह्मणों के रक्षक, शत्रु कुल विजयी महाराज श्रीयुक्त कृष्ण देव थे। उनकी पत्नी पतिभक्त परायण जाहुवी ने दक्षिण कालिकागंज में दो दिर्घिकाओं की मध्य स्थल में मनोहर ईष्टक निर्मित पंचरत्न को 1697 शक के माघ महीने में माकरी (सप्तमी या पूर्णिमा) तिथि में विष्णु प्रीत्यर्थ दान किया था। श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा नाम के पुरूष कृष्ण माणिक्य नरपति के द्वार पण्डित थे।''

शिला लिपि संग्रह।

कृष्णमाला में लिखा है। यह देवायतन फाल्गुन महीने में प्रतिष्ठित हुआ है। शिलालिपि के द्वारा माघ के माकरी तिथि में प्रतिष्ठा की बात पाई जाती है। इससे यह उपलब्ध होता है कि माघ महीने की माकरी तिथि फाल्गुन महीने में पड़ी थी। इस अवस्था में शिलालिपि में चन्द्र मास और कृष्ण माला में सौर मास के हिसाब से समय निर्धारण किया गया है।

पाँच चूडा विशिष्ट कहकर इस मंदिर का ''पंचरत्न'' नाम हुआ है। इस समय केवल एक मात्र चूडा विद्यमान रहने का विषय पहले ही हम उल्लेख कर चुके हैं। मन्दिर द्वितल है। ऊपरी कोठे पर दोचाला वाला आकार के प्रकोष्ठ के चारों ओर घूमकर प्रदक्षिण करने की जगह है। इस प्रकोष्ठ के बाहर की ओर दीवार एवं नीचे की दीवार पर प्रस्तर खण्ड पर अंकित दशावतार की मूर्तियां एवं कृष्ण लीला

....

अरूणोदय बेलायां शुक्ला माघस्य सप्तमी।
गंगायां यदि लभ्येत सूर्यग्रह शतैः समाः।।
+ + + +
यद्यज्जन्मकृतं पापं मया सप्तसु जन्मसु।
तन्मे रोगन्च शोकन्च माकरी हन्तु सप्तमी।।

चल–113
घटित और भी नाना तरह की मूर्तियां संयोजित थी। भयंकर भूकम्प से मंदिर का अधिकांश विध्वस्त होने पर कुछ मूर्तिया भी ध्वस्त हो गई। इन मूर्तियों का कारू कार्य, भास्कर्य का शिल्प नैपुण्य विशेष रूप से सराहनीय है। मंदिर के पूर्व किनारे पर धातु निर्मित सूर्य की प्रतिकृति और पश्चिम की ओर अर्द्ध चन्द्र की आकृति संयोजित थी।

मन्दिर के निचले हिस्से का आयतन 45 गुणे 30 फुट, उँचाई 45 फुट की होगी। ऊपरी तल का गृह देवायतन है। वह निम्न तल से आकार में छोटा है। ऊपर के गृह का छत दो चाला घट के आकार में बना है। शिला लिपि की आलोचना से इस मंदिर का प्राचीनत्व डेढ़ सौ साल का आँका गया है। निर्माण के पश्चात इसके संस्कार कराने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। देखने पर लगता है, कभी इसका संस्कार नहीं किया गया। 1325 बंगला सन् में प्रबल भूकम्प से निम्न तल का अधिकाँश भाग धँस गया है। अब इसका संस्कार साधन अतिरिक्त व्यय और कष्ट साध्य है।

इस मंदिर के विवरण से भरा एक श्लोक कृष्णमाला ग्रंथ में दिया गया है। वह इस प्रकार है –

आसीद् भूमीश्वर्यः कविकुल कमलानन्दनादित्य मूर्तिः
धीर कृष्णांध्रिपद्मासबरसरसिकः कृष्णमाणिक्य नामा।
राज्ञी तस्यातिसाध्वी विमलमतिमती निर्म्ममे जान्हवीदं
शाके शैलान्कतके नृभृति मुरारिपोमन्दिरं पंचरत्नं।।

मर्म –''कवि कुल रूप पद्म के हित आनन्ददायक सूर्य स्वरूप, धीर स्वभाव, श्रीकृष्ण चरणारविन्द, मकरन्द रसज्ञ, कृष्ण माणिक्य नाम के नरपति थे। सुनिर्मल बुद्धिमती, अति साध्वी उनकी रानी जाहुवी ने 1697 शकाब्द में मुरारी के प्रीत्यर्थ पंचरत्न मंदिर का निर्माण किया।''

मंदिर के ऊपरी तल पर श्रीश्रीराधामाधव की युगल मूर्ति, एक जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा के दारूमय विग्रह का स्थापन किया था। मन्दिर के विध्वस्त होने के बाद वे सभी विग्रह स्वतन्त्र एक घर में रखे गये हैं और उनकी पूजा भी हो रही है। मन्दिर दक्षिणाद्वारी है। दो विशाल जलाशय के मध्य भाग में यह मंदिर प्रतिष्ठित है। पूर्व के ओर के जलाशय का नाम कृष्ण सागर और पश्चिम के किनारे जलाशय का नाम जाहुवी सागर है।

यह देवायतन और दीर्घिकाद्वय की कथा त्रिपुर वंशावली ग्रंथ में मिलती है – (इसका हिन्दी भावार्थ हम पहले ही दे चुके हैं।)

तत्परे नूरनगर राधानगर ग्रामे।
दुई दिघि कटाइलो पंचरत्न समे(1)।।

---

(1) समे – सहित।

चल–114
दुई दीधिर मध्यस्थले पंचरत्न दिया।
राधामाधव बुद्वदेब(1) ताहाते स्थापिया।।
प्रतिष्ठादि कार्य तबे स्वयं कोरिलो।
महारानी जाहुबाय कीर्ति नियोजिलो।।
(110 पृष्ठ में हम इसका हिन्दी भावार्थ दे चुके हैं।)

देवार्चन और अभ्यागत सन्यासी मंहतो की सेवा का व्यय निर्वाह के लिए स्थापयिता के द्वारा जो देवोत्तर भूमि प्रदान की गई थी, आज भी उसी के आय द्वारा देवालय के हर तरह के व्यय का निर्वाह हो रहा है। इस व्यय के बारे में राजमाला में है –

कालिकागंजेर राधामाधब सेबाते।	कालिकागंज के राधा माधव की सेवा में।
कोतो दूर भूमि दिछे पुष्कर्णी पाड़ेते।।	कुछ दूर की भूमि दी तालाब के किनारे में।।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 54पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 54पृ

अर्थात, ''कालिकागंज में राधामाधव की सेवा के लिए तालाब के यहाँ भूमिदान किया।''

कृष्णमाला ग्रंथ में लिखा है –
''तोबे राधा मोहनेर पूजार कारण।
नियुक्त कोरिया दिल पुजक ब्राह्मण।।
भूमि दिलो देवोत्तर सनद कोरिया।
सेई राधामोहनेर सेबार लागिया।।
परिचार कोतेक कोरिलो नियोजन।
देवालय परिचर्या कोरिते कारण।।
बैष्णव सन्यासी किबा सामान्य अतिथि।
जे सकल होय आसि तथा उपस्थिति।।
से सबार भक्षण सामग्री तथा दिते।
भाण्डार नियुक्त कोरि दिलेक तथाते।।
बिमुख ना होय तथा आसिले अतिथि।
अद्‌यापि अतिथि सेवा होय निति निति।।

अर्थात, ''राधा मोहन के पूजा के लिए एक पूजक ब्राह्मण ठीक कर दिया। सनद करके देवोत्तर भूमिदान दिया – उसी राधा मोहन के सेवा के निमित। देवालय के परिचर्या के लिए कुछ नौकरों को भी ठीक कर दिया। वैष्णव सन्यासी अथवा साधारण कोई भी अतिथि यहाँ आकर उपस्थित हो तो उनके भोजन के लिए भण्डार की स्थापना की और उसके लिए आदमी नियुक्त किया। कोई भी अतिथि जैसे यहाँ से विमुख होकर नहीं लौटे। आज तक सारी व्यवस्थायें सुचारू रूप से चल रही हैं। नित्य दिन अतिथि सेवा होती है।''

इस देवोत्तर भूमि को सनद (ताम्र शासन) मिल गई है। इस आलोचना से जाना जाता है कि रघुदास नाम के ब्रजवासी महंत को इस मंदिर का अधिकारिक सेवक नियुक्त किया गया था। इस समय भी हिन्दुस्तानी संसार त्यागी वैष्णव साधु पुरूष लोग शिष्य परम्परा से इस देवालय के महंत के पद को अलंकृत करते आ रहे हैं।

उस ताम्र शासन का दैर्ध्य 11 $^{1/2}$ इंच और चौडाई 5 $^{1/2}$ इंच है। इसमें आठ पंक्तियों में सात श्लोक एवं शासन सम्पादन के शकांक और देवता अधिकारिक सेवक के नाम

(1) जगन्नाथ विग्रह को बुद्धदेव भी बोला है।

चल–115

आदि उत्कीर्ण हैं। ताम्र शासन की वाक्यावली नीचे प्रदान की जा रही है –

Rgd No 546
(पारसी में साक्षर)

महाराज
कृष्णमाणिक्य की
पद्म मोहर

(1) स्वस्ति – यस्याभुमेद्र्दक्षिणतो देवग्राम इति श्रुतिः तितासाख्यनदी पश्चाद्दुर्गापुराख्य उत्तरे पूर्वस्या
(2) मचलद्देषो मध्येच दीर्घिकाद्वयं। तत्तीरे स्थापितोदेवो राधामोहन संगकः लक्ष्मीना –
(3) रायणस्तत्र तयोः पूजार्थ मेव हि। दीर्घिकाद्वय केदारे ये बसन्ति च मानवाः तेषां करं पक्षमितां
(4) द्रोण भूमिन्च साश्वतीं। प्रदात् श्रीकृष्णदेवस्त्रिपुर कुलमणिर्द्दानधर्म्मेषु दक्षः शाकेऽकाष्टर्तुचन्द्र
(5) प्रमित परिगते माघस्य मन्वादिके राधामोहन तुष्टये कृतिवरः संसारभित्याकुल स्तस्मै बाहुबलेन
(6) वैरीवनिताक्ष्याब्धुतपाद्भुपतिः।। स्ववंशजाता ये भूपा ये केचित् परवंशजाः निरयं यान्तु ते पूर्व्वेर्म्मम
(7) दत्त विनाशकाः।। मद्दत्त पालन करा भूपा विख्यात कीर्त्तयः। करोमि पुरूषैः सार्धं प्रणामं तेभ्य एव
(8) हि शक 1689 रघुनाथ दाष ब्रेजवासि मोहंतकेई सेवाते देया गेलो।।ः।। भोग कोरिते रहो

इस ताम्र पात्र के दूसरी ओर लिखा है

जाए		जमि
मौजे आखाउडा	–	4
मौः नारायणपुर	–	5
मौः देबग्राम	–	5
मौः चन्दनसार	–	1
		——
		15
हाट राधानगर –		

इस ताम्र पात्र पर छन्दानुरोध से चरण विभाग नहीं किया गया। पट्टी में एक एक पंक्ति में जितना शब्द समा सका है, वह खुदाया गया है। छन्द को अक्षुण्ण रखकर

चल–116

प्रत्येक चरण में स्वतन्त्र भाव से लिपि करने पर जिस तरह उसका स्वरूप होगा – पाद की सहुलियत के लिए उसको दिया जा रहा है।

स्वस्ति –यस्याभुमेर्द्दक्षिणतो देवग्राम(1) इति श्रुतिः
तितासाख्य(2) नदीपश्चाद्दुर्गापुराख्य उत्तरे
पूर्वस्यामचलद्देषो(3) मध्ये च दीर्घिकाद्वयं।
तत्तीरे स्थापितो देवो राधामोहन संगकः(4)
लक्ष्मीनारायणस्तत्र तयोः पुजार्थ(5) मेव हि।
दीर्घिकाद्वय केदारे(6) ये वसंति च मानवाः
तेषां करं पक्षमितां द्रोण(7) भूमिन्च साश्वतीं।
प्रदात् श्रीकृष्णदेवस्त्रिपुरकुलमणिर्द्दानधेर्म्मेषु दक्षः।
शाकेऽंकाष्टर्तुचन्द्र(8) प्रमित परिगते माघस्य मन्वादिके(9)
राधामोहन तुष्टये कृतिवरः संसारभित्याकुल
स्तस्मै बाहुबलेन वैरी वनिताक्ष्याब्धुत(10) पाद्भूपतिः।।
स्ववंश जाता ये भूपा ये केचित् परवंशजाः।
निरयं यान्तु ते पूर्व्वेर्म्ममदत्त विनाशकाः।।
मद्दत्त पालन करा भूपा विख्यात कीर्त्तयः ।
करोमि पुरूषैः सार्द्धं प्रणामं तेभ्य एव हि
शक 1689 – श्रीरघुनाथदाष(11) ब्रेजवासी(12) मोहंतकेई(13)
सेवाते देया(14) गेलो(15)।।ः।। भोग कोरिते रह

(1) ताम्र शासन संलिष्ट देवालय के एक मील के भीतर दक्षिण की ओर देवग्राम है। यहाँ पर एक महादेव विग्रह प्रतिष्ठित है। इस विग्रह का विवरण यथा स्थान दिया जायेगा।

(2) उस जगह से पश्चिम की ओर तितास नदी बहती है। यह नदी त्रिपुर पर्वत से निकलती है।

(3) ''अचलद्देषो'' वाक्य द्वारा पार्वत्य प्रदेश(अरण्यमय भूमि) को लक्ष्य किया गया है। यहाँ पर तालव्य ''श'' की जगह मुर्धन्य ''ष'' का व्यवहार किया गया है। उन दिनों अखउडा के पूर्ब की ओर स्थान शायद जंगलों से भरा पड़ा रहा होगा, इसलिए शायद ऐसा लिखा गया होगा।

(4) यहाँ पर ''संज्ञके'' स्थल पर ''संगके'' अंकित हुआ है।

(5) ''पूजार्थ'' की जगह ''पुजार्थ'' लिखा गया है।

(6) केदारे – क्षेत्र में या भूमि में।

(7) द्रोण – यह द्रोण परिमाण ज्ञापक शब्द है। त्रिपुरा में जिस हिसाब भूमि का परिमाण स्थिर किया जाता है वह यह है – 20 धुर में एक क्रान्ति, तीन क्रान्ति में एक कडा, चार कडा में एक गण्डा, बीस गन्डा में एक कानि, सोलह कानि में एक द्रोण। आठ हाथ के हिसाब से 10 गुणे 12 नल का एक कानि होता है।

(8) यह ताम्र शासन का समय निर्देशक वाक्य है। अंक–9, अष्ठ–8, ऋतु–6, चन्द्र–1 अंकश्य वामागतिः के हिसाब से 1689 शक निर्णित हुआ है। शासन के निम्न भाग में अंक द्वारा भी यह समय लिखा गया है।

चल–117

ताम्रशासन का मर्म

इस भूमि के दक्षिण में देव ग्राम, पश्चिम भाग में तितास नदी, उत्तर में दुर्गापुर ग्राम, पूर्व में पार्वत्य प्रदेश, मध्य भाग में दो दिर्घिकायें – उसके किनारे राधामोहन और लक्ष्मी नारायण विग्रह की प्रतिष्ठा हुई। इन सभी देवताओं की पूजा के लिए, त्रिपुर कुलमनि, दान धर्म दक्ष, कृतिवर बाहुबल से विजित शत्रुवृन्द के वनिता कुल के नेत्र–वारि द्वारा विधौत–पद भूपति श्रीकृष्णदेव ने संसार से भयाकुल होकर, 1689 शक में माघ महीने मन्वतर के दिन (माघी सप्तमी में) राधामोहन के प्रीति कामना से दोनों दीर्घिकाओं के सन्निहित स्थलवासी मानवों के देय राजस्व और पन्द्रह द्रोण भूमि चिर स्थायी रूप से दान किया। स्ववंश सम्भूत किंवा अन्य वंशजात जो कोई भी भूपति मेरे दान को लोप करेगा, वे अपने उर्द्ध पुरूषों के साथ नर्कगामी होगें। जो सभी विख्यात कीर्ति भूपति मेरे दान की रक्षा करेगें, मैं प्रकृतिवृन्द के साथ उन्हें प्रणाम करता हूँ। शक 1689। श्री रघुनाथ दास ब्रजवासी महंत की सेवा में दिया गया।।:।। भोग करते रहो।''

इस ताम्र फलक में जो भ्रम प्रमाद है, वे रचनाकारी पंडित के या खुदाई करने वाले कार्यकार के (बढई) त्रुटियों से घटे हैं, यह निर्णय करना कठिन है। पर शेषोक्त व्यक्ति द्वारा प्रमाद घटने की संभावना ही अधिक है। शासन की भाषा की आलोचना से यह स्पष्ट होता है कि इसके रचियता श्लोक रचना कार्य में सुदक्ष नहीं थे।

ताम्र पट्टी के दूसरी ओर के विवरण से जाना जाता है कि अखउडा, नारायणपुर, देवग्राम औरचन्दनसार यह चार मौजाओं में 15 द्रोण भूमि दान की गई थी। इसके अलावा राधानगर बाजार का आय भी देश सेवा के निमित अर्पित किया गया था।

---

(9) मन्वादिक – मन्वतंर – एक मनु का लय और दूसरे मनु के अविर्भाव के काल को मन्वतंर कहा जाता है। यहाँ पर माघ महीने की शुक्ला सप्तमी को लक्ष्य करके कहा गया है। इस तिथि को रथ सप्तमी कहते हैं। मत्स्य पुराण में लिखा है –

यस्मान्नन्वन्तरादौतु रथमापुर्द्दिवाकराः।
माघमासस्य सप्तम्यां तस्मात्सा रथसप्तमी।।

भविष्य पुराण में चतुर्दश मन्वंतर के चतुर्दश तिथि का नामोल्लेख पाया जाता है। इस ग्रंथ में मन्वतंर में – आषाढ़स्यापि दसमी तथा माघस्य सप्तमी कहा गया है।

(10) अक्ष्यव्धुत शब्द को ''अक्ष्याव्धुत'' किया गया है। धुत न होकर धूत होगा।

(11) ''दास'' स्थल पर ''दाष'' अंकित हुआ है।

(12) व्रजवासी शब्द को देशज भाषानुसार ब्रेजवासी किया गया है।

(13) मोहांत के स्थल पर ''मोहंत'' शब्द उत्कीर्ण हुआ है।

(14) ''देवया'' स्थल पर ''देया'' शब्द खुदाया गया है।

(15) ''गेल'' स्थल पर ''गेलो'' लिखा गया है।

चल–118

महाराज कृष्ण माणिक्य की दूसरी कीर्ति है– श्रीश्रीजगन्नाथ देव की मन्दिर प्रतिष्ठा। कुमिल्ला नगरी के पूर्व प्रान्त में नगर के करीब महाराज ने एक सप्तदस रत्न निर्माण कराकर उसमें जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा का दारूमय विग्रह स्थापन किया था। त्रिपुरेश्वर गण पुरूषानुक्रम से श्रद्धा के साथ इस देवता की अर्चना करते रहे हैं।

इस मठ के बारे में परलोकगत कैलाश चन्द्र सिंह महाशय ने लिखा है –

"महाराज कृष्ण माणिक्य एक दयालु, दाता और धर्मनिरत नरपति थे। कुमिल्ला नगरी के पूर्व की ओर महाराज रत्नमाणिक्य ने जो सत्रह रत्न नामक देव मन्दिर की नींव डाली थी महाराज कृष्ण माणिक्य ने उस मन्दिर का कार्य सम्पूर्ण कर, उसमें जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा की दारू मूर्ति संस्थापन किया।"

कैलाश बाबू की राजमाला दूसरा भाग 11 अध्याय 131पृ।

त्रिपुर वंशावली पुस्तिका में भी इस तरह लिखा गया है। किन्तु महाराज रत्नमाणिक्य द्वारा उस मंदिर की नींव डाली थी। इस तरह के प्रमाण त्रिपुरा के किसी भी इतिहास ग्रंथ में नहीं मिलता। इस मंदिर के विषय में राजमाला कृष्ण माणिक्य प्रसंग में लिखा है –

सत्ररत्न निर्माइलो जगन्नाथपुरे।	सत्रह रत्न निर्माण किया जगन्नाथपुर में।
जगन्नाथ महाप्रभु स्थापित ऊपरे।।	जगन्नाथ महाप्रभु हुआ स्थापित ऊपर में।।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 54पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 54पृ

(इसका भी अर्थ हिन्दी में इसके पहले दिया जा चुका है।)

श्रेणीमाला ग्रंथ में कृष्ण माणिक्य के प्रसंग में लिखा गया है –

"निज पुष्करिणी एक दिलेन राजन।
जगन्नाथ बाटीते दिलो सतर रत्न।।"

\+ + + + + + + + + + + + + +

अर्थात, "राजा ने एक पुष्करिणी बना दिया। जगन्नाथ मंदिर में सत्रह रत्न (अर्थात सत्रह गम्बुद वाला मन्दिर बनाया। सतरह गम्बुद को सत्रह रत्न या रत्न कहा गया है)

जगन्नाथ देव स्थापन सेखाने कोरिलो।
वाटीर पश्चिमे एक सरोबर दिलो।।

अर्थात, "वहाँ पर जगन्नाथ देव की स्थापना की और मंदिर के पश्चिम में एक सरोवर बनाया।"

कृष्णमाला एक विस्तृत ग्रंथ है। यह केवल एकमात्र महाराज कृष्ण माणिक्य के विवरण को लेकर ही रचा गया है। इस ग्रंथ में उस मंदिर के बारे में जो ब्यौरा हमें मिलता है उसे यहाँ उद्धृत कर रहे हैं –

"चंताई कोहेन पुनि सुनो नरपति।
सतररत्नेर कथा कोहिबो सम्प्रति।।
श्रीकृष्णमाणिक्य राजा अति मतिमान।
मने होइलो एक मठ कोरिते निर्माण।।
मठे जगन्नाथ मूर्ति कोरिबो स्थापन।
इहा मने कोरिया कोरिलो आयोजन।।"

अर्थात,"चंताई ने पुनः कहा हे नरपति सुनो। सत्रह रत्नों की कथा अभी कहूँगा। श्रीकृष्ण माणिक्य राजा अत्यन्त बुद्धिमान थे। एक मठ निर्माण करने का भाव उनके मन में आया। उन्होंने कहा कि मैं मठ में जगन्नाथ देव की मूर्ति स्थापन करूँगा। यह मन में सोचकर उन्होंने आयोजन करना शुरू किया।

चल–119
दियाछे तडाग पूर्बे जगन्नाथपुरे।
निर्माइलो सप्तदस रत्न तार तीरे।।
एक मठ सप्तदस मठेर गठन।
सप्तदस रत्न नाम होइलो से कारण।।
एक शत हस्त परिमाण मठ उभे।
नाना मूर्ति चित्र ताहे ठाँई ठाँई शोभे।।
सुवर्ण–मंडित ताम्र घट सारि सारि।
बसाईछे ठाँई ठाँई मठेर उपरि।।

अर्थात, "पहले ही जगन्नाथ पुर में एक सरोवर बना दिया गया था। उसी के किनारे सत्रह रत्न का निर्माण कराया। एक मठ में सतरह मठों का गढ़ने का काम हुआ। इसलिए उसका नाम सप्तदस रत्न हुआ। एक सौ हाथ परिमाण मठ का था। उसमें नाना तरह की मूर्तियों के चित्र जगह जगह पर शोभायमान थे। स्वर्ण जड़े गये तामें के घट लगाये गये थे। मठ के ऊपर इन्हे जगह जगह पर लगाया गया था।"

मठ सप्तदस चूडे वाला था। इसलिए इसका नाम सप्तदस रत्न पड़ा। मन्दिर का मुख्य चूडा एक सौ हाथ उँचा था। इसके निचले तल का गठन आठ कोणों वाला था। इसकी नीव सुविस्तृत थी। मन्दिर त्रितल वाला है। मध्य तल बिना दरवाजा और खिडकियाँ वाला है। – जिसमें घोर अंधकार है। निचले तल से ऊपर की ओर जाने के लिए भीतर की ओर सीढियाँ हैं। चारों ओर की दीवारों से सटी हुई घुमावदार होती हुई ऊपर की ओर चली गई हैं। इसके गठन नैपुण्य को देखकर आधुनिक स्थापत्य शिल्पी भी विस्मित हो जाते हैं। सालार जंग महाराज राजबल्लभ सेन राय रायन के घर में अविकल इस प्रणाली से बना हुआ एक मठ था, वह बहुत पहले पद्मा नदी में विलीन हो गया है। इसके अलावा इस प्रणाली के किसी दूसरे किसी मठ की बात सुनी नहीं गई। इस मन्दिर के बाहरी भाग में चारों ओर दीवारों में नाना तरह के देव देवियों के प्रति मूर्तियों के साथ कुछ अश्लील भाव व्यजंक मूर्ति भी अंकित है। किसी किसी प्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्र में भी देव मन्दिर में इस तरह के अश्लील चित्रांकित रहने की बात बहुत से लोग जानते हैं। यहाँ पर पुरी धाम में श्री मंदिर का नाम उल्लेख योग्य है। इस तरह क्यों किया गया, इसकी आवश्यकता का उद्देश्य को लेकर आलोचना करना यहाँ संभव नहीं है।

पहले कहे गये कृष्णमाला के वाक्यों से जाना जाता है कि मठ के सभी चूडा सुवर्ण मण्डित ताम्र घटों से सज्जित था। "त्रिपुर वंशावली" ग्रंथ के मतानुसार ये सभी घडे या कलश स्वर्ण निर्मित थे। इन दोनों गंथों के वाक्य परस्पर भिन्न भावापन्न होने पर भी समग्र परिस्थितिओं की आलोचना से इसके सामंजस्य की रक्षा की जा सकती है।

जन श्रुतिओं से जाना जाता है कि इस मंदिर के निर्माण के समय प्रधान राज मिस्त्री ने दूसरे के अगोचर में प्रधान चूडा के नीचे मूल की ओर से अग्र भाग तक श्रेणी बद्ध रूप से कुछ गर्त रखे था। इसके बाद चूड़ा स्थित स्वर्ण घट चोरी करने के उद्देश्य से लालचवश एक रात को सीढी की सहायता से ऊपर तल पर जाकर वहाँ से पहले कहे गये गर्तो में क्रमे क्रमे लोहे की कील ठोककर उन्हीं के उपर पैर रखकर, क्रमशः चूड़ा के अग्रभाग के पास पंहुच गया था। देव दुर्बिपाकवश फिसलने से वह

चल–120
नीचे गिर गया, तक्षण ही उसकी मृत्यु हो गई। राज मिस्त्री ऊपर के छोटे छोटे सभी चूडाओं के कलसों को चुरा सकता था। इनकी उपेक्षा कर प्रधान चूडा के प्रति उसकी पहले से ही लुब्ध दृष्टि थी, यही समझ में आता है। प्रधान चूडा का कलश स्वर्ण निर्मित था और दूसरे छोटे छोटे कलश तामें के बने थे और इनके ऊपर स्वर्ण मढ़ा गया था। मिस्त्री पहले से ही जानता था और इसके लिए उसने इन छोटे छोटे घटों की उपेक्षा कर प्रधान चूडे की स्वर्ण से बने बडे कलस को ही चोरी करने का प्रयास किया था। इस घटना के पश्चात वह लोभनीय वस्तु के बदले स्वर्ण मण्डित ताँबें का घट स्थापित हुआ है।

प्रधान चूडा पर ठोकें गई लोहे की सारी कीलें अब भी विद्‌यमान है और उस घटना की सत्यता की घोषणा कर रही है। सप्तदस रत्न की हालत अच्छी रहते समय ही एक स्वतन्त्र मंदिर का निर्माण कराकर उस मंदिर में देवता को स्थानांतरित किया गया। कहा जाता है कि मंदिर के चूडा स्थित कलश की चोरी करते समय गिर कर अपमृत्यु के कारण मंदिर को अपवित्र समझकर उसे त्याग कर दिया गया। वास्तव, विशेष कारण व्यथित इस तरह के सुरम्य मंदिर को त्यागकर, स्वतन्त्र देवायतन निर्माण का कारण युक्तियुक्त नहीं है। स्वर्ण कलस चोरी के जनश्रुति सत्य प्रतीत होती है।(1)

यह मन्दिर 1188 त्रिपुराब्द में (1700शक) प्रतिष्ठित हुआ है। राजमाला में है।

एगार श आटाशि जे सनेर समये।	ग्यारह सौ अठ्‌ठासी सन के समय।
प्रतिष्ठा करये राजा धर्मेर तनये।।	प्रतिष्ठा किया राजा धर्म का तनय।।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड54पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड54पृ

(इसका अर्थ हमने 54 पृष्ठ पर दिया है।)

कृष्णमाला ग्रंथ में लिखा है –

सप्तदस शत संख्या शकेर समय।
चैत्र मासे प्रतिष्ठा कोरिलो देवालय।।

अर्थात, ''सतरह सौ शक के चैत्र महीने में उन्होंने देवालय की प्रतिष्ठा की''

1188 त्रिपुराब्द में और तद्‌नुसार 1700 शक में कोई पार्थक्य नहीं है। अतएव यह देवायतन डेढ सौ साल की प्राचीन कीर्ति है। यह मंदिर इतना मजबूत है कि बार बार प्रचण्ड भूकम्प का झटका सहकर भी यह अपने अस्तित्व की रक्षा करने में समर्थ हुआ है। किन्तु संस्कार के अभाव में एवं बार बार भूकम्प में इस मंदिर जो कुछ बड़ी क्षति हुई है, उसके संशोधन का कोई उपाय है, ऐसा नहीं लगता

....

(1) ऐतिहासिक लोग पहले कोई प्रवाद वाक्य या जनश्रुतियों पर विश्वास नहीं करते थे। क्रमशः भूपृष्ठ में धँसे नाना तरह के वस्तुओं के अविष्कार होने पर इसके साथ जन श्रुतियों के सामजंस्य की एक एकरूपता देखने पर इन प्रवाद वाक्यों को अब इतिहास का अंग माना जाने लगा है। वस्तुतः ये जन श्रुतियाँ अतिरंजित हो सकती है, फिर भी जन श्रुति अमूलक नहीं हैं। अतः उनकी ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि अस्वीकार नहीं की जा सकती।

चल–121

इस मंदिर के बारे में प्राच्य स्थापत्य विद्याविशारद श्रद्धास्पद श्रीयुक्त श्रीशचन्द्र चट्टोपाध्याय महाशय ने कहा है –

कुमिल्ला के सतरह रत्न मंदिर बांगला के स्थापत्य का श्रेष्ठ निदर्शन है। उसका गठन नैपुण्य से विस्मित होना पड़ता है। फर्गुसन, हेबेल आदि के ग्रंथों में उसका कोई उल्लेख क्यों नहीं है। यह समझ में नहीं आता। संस्कारों के अभाव में यह अतुलनीय मन्दिर ध्वँस के आगोश में आ पड़ा है।

– रवि – 5 वर्ष द्वितीय संख्या।

इस मंदिर के उत्तर की ओर सिंह द्वार था। अब उसका भग्नस्तूप मात्र रह गया है।

कृष्णमाला ग्रंथ में इस सिंह द्वार का विवरण पाया जाता है।

दुई दिके दुई मूर्ति सिंहेर आकार।
मठेर उत्तरे निर्म्माइछे सिंह द्वार।।

अर्थात,''दोनों ओर दो सिंह की मूर्तियां थी मठ के उत्तर में सिंह द्वार का निर्माण हुआ था।''

इस मंदिर के दीवार पर कोई शिलालिपि नहीं है। इस तरह के एक श्रेष्ठ मंदिर में इसका न रहना संभव नहीं है। शायद सिंह द्वार पर पत्थर की पट्टी रही होगी, उस द्वार के साथ वह शिला खण्ड भी शायद ध्वँस हो गया है। त्रिपुरा में सिंह द्वार पर शिला लेख के संयोजन का दृष्टांत अन्यत्र भी मिला है। उदयपुर के महादेव बाडी (घर या मंदिर) के सिंह द्वार पर संयोजित शिला लेख की बात यहाँ उल्लेख योग्य है।

जगन्नाथ, बलराम और सुभद्रा की दारूमय मूर्ति इस मंदिर के अधिष्ठित विग्रह हैं। तीनों मूर्तिया श्रीक्षेत्र के विग्रह के अनुकरण से बनाई गई है। लेकिन इनकी विशेषता यह है कि पुरी धाम के विग्रह की तरह इन मूर्तियों की हाथ और उँगलियां विवर्जित नहीं है, सभी मूर्तियों के हाथों में उँगलिया है। इन्हीं विशेषताओं की वजह से बहुत से लोग सोचते हैं कि ये राम, लक्ष्मण और सीता की मूर्तियां है। किन्तु कृष्णमाला ग्रंथ की आलोचना से यह संशय मिट जाता है। उस ग्रंथ में लिखा है –

''एई रूपे देवालय प्रतिष्ठा कोरिया।
देवता स्थापन ताहे कोरिलक निया।।
बलभद्र, जगन्नाथ, सुभद्रा सहित।
सप्तदस रत्ने राजा कोरिलो स्थापित।।
अपरूप तीन मूर्ति कि दिबो उपम।
जगन्नाथ सुनील–जलद जिनि श्याम।।
शरतकालेर मेघ जेमन धवल।
तेन मत बलभद्र शरीर उज्जवल।।
मध्ये सुभुद्रार मूर्ति गौरवर्ण काया।
भुवनमोहन रूप जनो महामाया।।

चल–122
ऐई तीन मूर्ति मठे कोरिया स्थापन।
परम आनन्द होइलो नृपति मन।।

अर्थात, "इस तरह देवालय की प्रतिष्ठा करके उसमें देवताओं को ले जाकर स्थापना की। बल भद्र, जगन्नाथ सुभद्रा की मूर्ति की स्थापना की गई। राजा ने सत्रह रत्न में इनकी स्थापना की। इन तीन मूर्तियों को मैं क्या उपमा दूँगा। जगन्नाथ नील मेघाम्बर श्याम रूप में शोभायमान थे। शरत काल के धवल मेघ बलभद्र की अपूर्व देह क्रान्ति है और सबके मध्य भाग में गौर वर्ण भुवन विमाहिनी महामाया ही जैसे हो। इन तीनों मूर्तियों की स्थापना करके नृपति के मन में परम आनन्द हुआ।

इस वर्णन का पाठ करने पर राम लक्ष्मण की मूति का आरोप नहीं पाया जाता है। विशेषतः देवता गठन व अर्चना पद्धति इत्यादि समस्त उडीसा के मन्दिर के अनुरुप है। उत्कल देशीय ब्राह्मण(पाण्डा) गण इसी देवता के पूजक है, देवता प्रतिष्ठा समय से ही इसकी अर्चना का भार पाया था।

जगन्नाथ प्रतिष्ठा एक सुविख्यात घटना है। इस तरह के समारोहों का आयोजन त्रिपुरा में बहुत कम ही हुआ है। इस समय पंचाग्नि, दान सागर, तुला पुरूष दान आदि बहुत से पुण्य कार्य अनुष्ठित हुए थे। इनका विवरण यथा स्थान दिया जायेगा। मन्दिर के पश्चिम की ओर स्थित सरोवर भी इसी समय बनाया गया। इसके गर्भ में एक ईटों से बने हुए प्रकोष्ठ निर्माण कर उसमें पंचतीर्थ का जल रखा गया था। तब से सरोवर भी एक पवित्र तीर्थ क्षेत्र के रूप में बदल गया। अब वे रथ द्वितीया के दिन एवं दूसरे तीर्थ स्नान की तिथि में बहुत से तीर्थ यात्रियों का यहाँ समागम होता है। वे इस सरोवर में स्नानादि करके श्रीमूर्ति का दर्शन करते हैं।

जगन्नाथ देव की सेवा और पूजा का व्यय निर्वाह के लिए महाराज कृष्ण माणिक्य ने प्रायः 15 द्रोण भूमि देवोत्र सम्पत्ति के रूप में दिया था। इस पवित्र देवोत्र भूमि का संश्लिष्ट ताम्र शासन 1186 त्रिपुराब्द में सम्पादित हुआ था। राजमाला में है –

जगन्नाथ महाप्रभु स्थापित जखन।	जगन्नाथ महाप्रभु जब किया स्थापन।
जगन्नाथपुरे भूमि दियाछे राजन।।	जगन्नाथपुर में भूमि दान कर दिये राजन।।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड55पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड55पृ

(इसका भी हिन्दी रूपसन्तर राजमाला 55 पृष्ठ पर दिया गया है।)

पहले ही देखा गया है, सत्रह रत्न मठ 1188 त्रिपुराब्द (1700 शक) में प्रतिष्ठित हुआ है। ताम्र शासन की आलोचना से जाना जाता है, जगन्नाथ विग्रह के सेवार्थ 1186 त्रिपुराब्द में (1698 शक) में भूमि दान की गई थी। फिर भी राजमाला के वाक्यों से जाना जाता है कि जगन्नाथ विग्रह स्थापना के समय ही देवोत्र भूमि दान की गई है। इन सभी विवरणों के अनुसार सत्रह रत्न मन्दिर प्रतिष्ठा के दो वर्ष पहले जगन्नाथ मूर्ति स्थापन करके उसी उद्‌देश्य से देवोत्तर भूमि दान की गई थी। मन्दिर के निर्माण होने के पश्चात (1700 शक में) वह विग्रह सप्तदस रत्न में लाया गया। देवता की स्थापना के पहले उस उद्‌देश्य से भूमिदान करना संभव नहीं है। अतएव 1698 शकाब्द में विग्रह स्थापित हुआ एवं इसके पश्चात 1700 शकाब्द में मन्दिर प्रतिष्ठित हुआ था। इस तरह का निर्धारण करना समीचीन व संगत लगता है।

पहले कहे गये देवोत्र भूमि से जुडे ताम्र शासन की प्रतिलिपि दूसरे पृष्ठ में दी जा रही है।

चल–123

इति सन 1186
तारीख 9 अग्रहायण

श्रीयुत जगर्न्नाथः (मोहर)
स्वति–तेतैआड़ोत्तरे या च पूर्वे कृष्णपुरस्य च झाकनि ग्राम दक्षे भुश्चारण्यपुर पश्चिमे
मेहारकुलाख्य देशे तां सपादोपरि किलकां द्रोणी पंचदशमितां भूमिं यत्सह किलकी
˘जगन्नाथाय देवाय सेवायै हृष्ट मानसः। भूपः श्रीकृष्णमाणिक्य देवोऽदाद्धारि तुष्टये
वस्वन्क तर्कन्दुमिते शकाब्दे बिछांगतस्यापिरवेर्न्नवांशे।। परदत्तां क्षितिं यस्तु
रक्षित क्ष्मापतिः प्रभुः। स कोटिगुण माप्नोति पुण्यं दातृ जनादपि।। यो हरेच्च
महीं ताबद्‌देवश्य ब्राह्मणस्य वा न तस्य दुष्कृतिर्याति वर्ष कोटि शतैरपि–

छह पंक्तियों में यह शासन–लिपि सम्पादन की गई है। इसमें छंदानुयायी पंक्तियों का विभाग नहीं किया गया है। ऐसा करने पर उत्कीर्ण श्लोकों का निम्नलिखित रूप होगा।

तेतैआड़ोत्तरे(1) या च पूर्वे कृष्णपुरस्य च
झाकनि ग्राम दक्षे भुश्चारण्यपुर पश्चिमे
मेहारकुलाख्य देशे तां सपादोपरि किलकां(2)
द्रोणी पंचदशमितां भूमि यत्सह किलकी
˘जगन्नाथाय देवाय सेवायै हृष्ट मानसः।
भूपः श्रीकृष्णमाणिक्य देवोऽदाद्धारि तुष्टये
वस्कन्क तर्कन्दुमिते(3) शकाब्दे बिछां गतस्यापि रवेर्न्नवांशे।।
परदत्तां क्षितिं यस्तु रक्षति क्ष्मापतिः प्रभुः।
स कोटि गुणमाप्नोति पुण्यं दातृ जनादपि।।
यो हरेच्च महीं ताबद्‌देवश्य ब्राह्मणस्य वा
ना तस्य दुष्कृतिर्याति वर्षकोटि शतैरपि–

अलग रंग से दोनो में अन्तर दिखाता है।

---

(1) तेतैआड़ा शब्द में अन्त्यस्थ य की जगह “अ” का व्यवहार किया गया है।
(2) कीलकां की जगह किलकां उत्कीर्ण हुआ है।
(3) यह ताम्र शासन सम्पादन का काल निर्देशक वाक्य है। बसु – 8, अंक – 9, तर्क – 6, इन्दु –1 अंकस्य वामाः गतिः इस नियम से 1698 शक निर्धारित हो रहा है।

चल–124

मर्म – "मेहारकुल परगना के अन्तर्गत ततैआड़ा के उत्तर, कृष्णपुरा के पूर्व, झाकिनी ग्राम का दक्षिण, अरण्यपुर का पश्चिम, पन्द्रह द्रोण परिमित भूमि स्तंभ द्वारा चिन्हित करके, उसी स्तम्भ के साथ राजा कृष्ण माणिक्य देव ने हरि के प्रीत्यर्थ 1698 शकाब्द के 9 अग्रहायण की तारीख को हृष्ट चित्त से जगन्नाथ देव को दान किया।

जो भूपति प्रदत्त भूमि की रक्षा करते हैं, वे दाता से भी कोटि गुण अधिक पुण्य लाभ करते हैं। जो देवता अथवा ब्राह्मण की भूमि का अपहरण करते हैं, शत कोटि वर्ष में भी उनकी दुष्कृति का भी मोचन नहीं होता।

श्रीश्रीजगन्नाथ विग्रह स्थापन के समय से, देवालय के साथ चारों ओर का भूभाग जगन्नाथपुर नाम से आख्यायित हुआ।

इस जगन्नाथ देव की रथ यात्रा एक उल्लेख सुयोग्य महोत्सव है। देवता प्रतिष्ठा के समय से ही यह उत्सव, पूर्ण आडम्बर के साथ पालन किया जाता है। यह रथ विशिष्ट चक्रों वाला है। इसका आयतन 27फुट गुणे 27फुट है। और उँचाई 33 फुट की है। हर साल नव निर्मित रथ से रथ यात्रा उत्सव सम्पन्न होता है। एक साल के व्यवहार में लाया गया रथ और उसका कोई भी सरंजाम अगले वर्ष की रथ यात्रा में व्यवहार में लाया नहीं जाता । इस समय कुमिल्ला नगरी असंख्य जन समूहों की भीड़ से भरी रहती है। त्रिपुरा, नोयाखाली, चट्‌टगाँव, श्रीहट्‌ट जिलाओं से असंख्य यात्रियों का समागम होता है। जन साधारण में यह धारणा प्रचलित है कि रथ यात्रा के समय यह पुण्य क्षेत्र श्रीक्षेत्र की तरह महात्म्य पूर्ण हो उठता है। इस विग्रह को पुरी धाम के श्रीमूर्ति के अंग स्पर्श कराकर यहाँ लाकर स्थापित किया गया है। इस देवालय के पश्चिम तट स्थित जलाशय के गर्भ में ईष्टक निर्मित कोठरी में पंच तीर्थ का पानी रखा गया है। इसलिए यह सरोवर और मन्दिर, तीर्थ की मर्यादा प्राप्त है। चट्‌टगाँव विभाग में कुमिल्ला की रथ यात्रा एक विराट उत्सव के ख्याति अर्जन किया है।

अखउडा के पश्चिम की ओर दुर्गापुर गाँव में प्रतिष्ठित जगन्नाथ मूर्ति महाराज कृष्ण माणिक्य की अन्यतम कृति है। यह देवालय दुर्गापुरे का अखाडा नाम से जाना जाता है।

जलाशय प्रतिष्ठा

पूर्ववर्ती राजाओं के विवरण से पता चलता है कि जलाशय खनन और उसकी प्रतिष्ठा त्रिपुर भूपतियों का वंशानुक्रमिक धर्म है। राजमाला चतुर्थ लहर में भी यह धर्म कार्य सम्पादन के बहुत से प्रमाण मिलते है। यह इस सन्दर्भ में यहाँ कुछ आभास दिये जा रहे हैं।

चल–125
महाराज गोविन्द माणिक्य ने, सीताकुंड तीर्थ के महंत के घर के नजदीक एक दीर्घिका का खनन कराया था, वह आज भी विद्यमान है। तिष्णा परगना के अन्तर्गत वातिसा गाँव में वैद्य–बाजार के करीब उनका खनाया एक सरोवर है। उसका पानी बडा ही निर्मल और सुपेय है। सरोवर के उत्तर तट पर एक डाक बंगला बनाया गया है।

महाराज गोविन्द माणिक्य की महिषी महारानी गुणवती ने कसबा थाना के अधीन जाजीयाडा गाँव में एक दीर्घिका खनन कराया था। वह भी ''गुणसागर'' नाम से परिचित है। चौदहगाँव के वर्तमान पुलिस स्टेशन के करीब इस महारानी की एक और दीर्घिका है। वह भी ''गुणसागर'' नाम से परिचित है। कोई कोई व्यक्ति तथा प्रकृत तथ्य के अज्ञानता के कारण इसे गुण माणिक्य की दिघि (दिघि याने तालाब) कहते हैं। इस महारानी के नामानुसार एक गाँव का नाम ''गुणवती'' रखा गया है। इस समय महारानी के नामानुसार तिष्णा परगना में वह गुणवती ग्राम है। इस गाँव में इस समय आसाम बेंगल रेलवे स्टेशन, (अब नहीं है अनुवादक) का एक स्टेशन स्थापित हुआ है। उसका नाम भी ''गुणवती'' है।

गोविन्द माणिक्य के सौतेले भाई महाराज छत्र माणिक्य ने उदयपुर में एक सरोवर खनाया था, यह छत्र सागर के नाम से परिचित हुआ। इस सरोवर का परिसर 270 गुणे 140 गज है। जलाशय, दक्षिण चन्द्रपुर गाँव में है।

गोविन्द माणिक्य के सहोदर भ्राता जगन्नाथ ठाकुर एक कृती पुरूष थे। उन्होंने तिष्णा परगना के केचकिमुडा गाँव में एक विशाल सरोवर का खनन कराया था। वह ''जगन्नाथ दिघि'' के नाम से प्रसिद्ध है। कुमिल्ला से चट्टग्राम तक प्रसारित राजवर्त्मेर(राज पथ) के पूरब की ओर यह सरोवर है। इस विशाल सरोवर के पश्चिम तट पर होकर वह सड़क चली गई है। इस सरोवर की लम्बाई करीब एक मील है और चौडाई तुलनात्मक रूप से कम है। जगन्नाथ ठाकुर ने उदयपुर में भी एक दिर्घिका का खनन कराया था। वह जगन्नाथ दिघि या ''पुरातन दिधि'' के नाम से प्रख्यात है। यह जलाशय सोनामुडा मौजा में स्थित है। इसका परिसर 754 गुणे 218 गज है। इस सरोवर के दक्षिण–पश्चिम किनारे पर पूर्व कथित श्रीश्रीजगन्नाथ देव का मन्दिर है। सरकारी आफिस आदि इसके उत्तर तट पर बनाये गये हैं। इस सरोवर के तट पर शिलामय जगन्नाथ देव के मन्दिर निर्माण कार्य में जगन्नाथ ठाकुर और भ्राता सहयोगी थे। मन्दिर के शिलालेख से इसकी जानकारी मिलती है।

महाराज राम माणिक्य ने नूरनगर परगना के अधीन माइजखाड ग्राम में एक सुवृहत दिर्घिका का खनन कराया था। उदयपुर के दक्षिण चन्द्रपुर गाँव में उनके और भी दो सरोवर हैं। इन तीनों सरोवरों को ''रामसागर'' नाम से जाना जाता

है।(1) राम माणिक्य के खनाये गये उदयपुर के सरोवरों में से एक खिलपाडा मौजा में है। उसका परिसर 250 गुणे 165 गज है। दक्षिण चन्द्रपुर गाँव में इस दूसरे सरोवर का परिसर 80 गुणे 60 गज है।

महेन्द्र माणिक्य द्वारा उदयपुर में खनन किया गया जलाशय खिलपाडा में अब भी है। उसका नाम महेन्द्रसागर है । इस सरोवर का परिसर 270 गुणे 140 गज है। महाराज द्वितीय धर्म माणिक्य द्वारा खनन कराया गया धर्मासागर ''माता बाडी'' मौजा में विद्यमान है। इसका परिसर 130 गुणे 60 गज है। कुमिल्ला में खनन कराया गया सुविख्यात धर्मसागर भी इन्हीं के द्वारा किया गया है, ऐसी धारणा बहुत से लोगों की है। यह धारणा प्रमादपूर्ण है, उक्त सागर के उत्सर्ग काल में संपादित ब्रह्मोत्र भूमि के ताम्रशासन संपादन काल की आलोचना करने से वह स्पष्टतः समझ में आयेगा। उक्त ताम्रशासन प्रतिलिपि राजमाला प्रथम लहर में दी हुई है।

धर्म माणिक्य महिषी महारानी सुभद्रा (बाद में धर्मशीला) ने कुमिल्ला में एक सुबृहत सरोवर खनन कराया था वह ''नानुया की दिघि'' नाम से परिचित है। इस बारे में श्रेणीमाला ग्रंथ में लिखा है –

धर्म माणिक्य नृप छिलो पूण्यवान।
मुकुन्देर युबराज भातृ जे ताहान।।
धर्मशीला रानी नामे दिर्घिका खनिल।
कुमिल्लाते नानुयार दिघि नाम होइलो।।
श्रेणीमाला।

अर्थात, ''धर्ममाणिक्य नृप पुण्यवान थे। मुकुन्द माणिक्य युवराज उनके भाई थे। धर्मशीला रानी ने एक सरोवर खनन किया। कुमिल्ला में ''नानुया की दिधि'' उसी का नाम हुआ।''

इस उक्ति से यह ज्ञात होता है, युवराज धर्म देव की महिषी धर्मशीला देवी ने इस सरोवर को खनन कराया था। उन दिनों युवराज की पत्नी को ''नानुया'' कहा जाता था।(2) इसी कारण से उस सरोवर को ''नानुयार दिधि'' अर्थात नानुया का तालाब कहा जाता है।

महाराज मुकुन्द माणिक्य ने तिष्णा परगना के अन्तर्गत फाल्गुनकरा गाँव में एक सरोवर खनन कराया था। यह सरोवर ''चौद्दग्राम बाजार'' और ''बैद्य का बाजार'' के बीच राज पथ के पश्चिम किनारे है। इस सरोवर के पूर्व तट पर सड़क निर्मित है। उक्त सरोवर का नाम मुकुन्द सागर है, किन्तु इस समय

---

(1) राममाणिक्य देव नृपति होइलो।
मेहेरकुल सीमानाते दीर्घिका एक दिलो।।
उदयपुरेते एक खनाइलो सागर।
रामसागर नाम राखिलो तत्पर।। – श्रेणीमाला।

अर्थात, ''राम माणिक्य देव राजा हुए। मेहेरकुल की सीमा पर एक दीर्घिका(सरोवर) खनाया। उदयपुर में भी एक सागर खनाया। इसके बाद उसका नाम रामसागर रखा।''

(2) ''दुर्गाराम भग्नी रत्नमाला जेनो छिलो।
हरिमणि युबराजेर नानुया कहिलो।।'' – श्रेणीमाला।

अर्थात, ''दुर्गाराम की भग्नी रत्नमाला थी और हरिमणि युवराज की ''नानुया'' हुई। (युवराज की पत्नी को ''नानुया'' कहा जाता था।)

चल–127
यहां जन साधारण के यहाँ ''फाल्गुनकरार दिघि'' (अर्थात फाल्गुनकरा का तालाब) के नाम से जानते है। महाराज मुकुन्द ने उदयपुर में भी एक जलाशय खनन कराया था। राजमाला में है

उदयपुर तिषिना फागुनकरा ग्राम।	उदयपुर तिष्णा में फागुनकरा ग्राम।
सागर खनिलो राजा मुकुन्द सागर नाम।।	सागर खनाया राजा मुकुन्द सागर नाम।।
राजमाला चल मुकुन्द माणिक्य खण्ड 33पृ	राजमाला चल मुकुन्द माणिक्य खण्ड 33पृ

अर्थात, ''उदयपुर तिष्णा के फाल्गुनकरा गाँव में राजा मुकुन्द ने एक सागर (सरोवर) खनाया जिसका नाम ''मुकुन्द सागर'' हुआ।''

श्रेणीमालाग्रन्थ में फाल्गुनकरा दीघि का उल्लेख मिलता है।

मुकुन्दमाणिक्य नामे होइलो राजन।
तिष्णा फाल्गुनकरा दिघि दिलेन तखन।।
श्रेणीमाला।

अर्थात, ''मुकुन्द माणिक्य नाम के एक राजा ने फाल्गुनकरा नाम का एक सरोवर खनन कराया।''

महाराज कृष्ण माणिक्य द्वारा कालिकागंज में (बाद में राधानगर) में राधामाधव विग्रह स्थापन और मन्दिर निर्माण का विवरण पहले दिया जा चुका है। इस देबायतन के पूर्ब और पश्चिम किनारे दो विशाल सरोवर शोभायमान हैं। इन सरोवरों को महाराज कृष्ण माणिक्य की कीर्ति माना जाता है। उस महाराज के चरित्राख्यान कृष्णमाला ग्रंथ में लिखा है

''तारपोरे नूरनगरेते नृपति।
खनाय कालिकागंजे दुई पुष्करिणी।।
सेई दुई पुष्करिणी प्रतिष्ठा कारण।
निमंत्रिया आनि नाना देशी द्विजगण।।
कृष्णमाला

\+ + + +

अर्थात, ''इसके बाद नृपति ने नूरनगर के कालिका गंज में दो सरोवरों का खनन कराया। उन दो सरोवरों की प्रतिष्ठा के लिए नाना देश के ब्राह्मणों को निमन्त्रण करके मँगाया।''

''आपनि बोसिया राज आर राज रानी।
उत्सर्गिलो दुई जने दुई पुष्करिणी।।''
कृष्णमाला

अर्थात, ''स्वयं राजा और राज रानी दोनों ने दोनो सरोवरों को वहीं बैठकर उत्सर्ग किया।''

\+ + + + +

शक षोलशत सातासी बत्सरेते।
प्रतिष्ठा कारिलो वापि फाल्गुन मासेते।।
कृष्णमाला।

अर्थात, ''शकाब्द सौलह सौ सत्तासी के फाल्गुन महीने में दोनों सरोवरों की प्रतिष्ठा की।''

राजमाला में भी इन दो सरोवरों का उल्लेख मिलता है –

कालिकागंजे दुई दीघि खनिलो राजन।	कालियागंज में दो तालाब खनाया राजन।।
राजा रानी उत्सर्गिलो इष्टे समर्पण।।	राजा रानी ने मिलकर किया ईष्ट समर्पण।।
एगार श पाँच सत्तैर सनेर जे माझे।	ग्यारह सौ पचहत्तर सन् के माह बीच फागुन में।
फाल्गुनेते प्रतिष्ठा करये महाराजे।।	प्रतिष्ठा की महाराजा ने ।।
राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 52पृ	राजमाला चल कृष्ण माणिक्य खण्ड 52पृ

अर्थात,''कालिकागंज में राजा दो सरोवर खनन कराया। राजा रानी ने ईष्ट के नाम समर्पण व उत्सर्ग किया। ग्यारह सौ पचहत्तर सन् के फाल्गुन माह में इनकी प्रतिष्ठा महाराज ने किया।''

पहले ही पाया गया है, 1697 शक(1185 त्रिपुराब्द) में श्रीश्रीराधामाधव विग्रह और मंदिर की प्रतिष्ठा हुई थी। उद्धृत वाक्य से पता चलता है कि 1687 शक अर्थात 1175 त्रिपुराब्द में दोनों सरोवरों की प्रतिष्ठा हो चुकी थी। मंदिर के पूरब की ओर सरोवर का नाम कृष्ण सागर और पश्चिम ओर के जलाशय का नाम जाहुवी सागर नाम पड़ा। इससे यह पता चलता है, पूर्व के किनारे के सरोवर को महाराज ने उत्सर्ग किया था।

महारानी जाहुवी महादेवी ने कुमिल्ला नगरी में एक सरोवर का खनन कराया था। वह रानीर दिघि (रानी का सरोवर) के नाम से विख्यात हुआ है। कुछ दिन पहले भी एक मात्र इसी

चल–128

सरोवर से सुपेय और स्वास्थ्यप्रद जल द्वारा अधिकांश लोगों की जीवन रक्षा हो रही थी। इस समय शहर के और कुछ सुवृहत जलाशयों को रिजर्व किया गया है और कल(Hand Pump) के जल व्यवहार लाया जा रहा हैं। इसके बावजूद भी इस सरोवर का गौरब और आदर पूर्ववत् अक्षुण्ण है।

इसके अलावा राज परिवार के बहुत से व्यक्तियों ने बहुत सी जगहों पर जलाशयों की प्रतिष्ठा की है। यहाँ पर उनका उल्लेख करना असंभव है। इस समय इस धर्मनिष्ठ परिवार के लोगों द्वारा प्रदत्त बहुत से जलाशय मिट्टी से भरपूर शश्य(कृषि) क्षेत्र में रूपांतरित हो गये हैं। फिर भी कुछ अब भी मौजूद है, पर वे किस महापुरूष की देन है, यह जाना नहीं जाता। इन सभी कीर्तियों के कर्ता का नाम भी अब विस्मृति के गर्भ में विलीन हो गया है।

भूमि दान

देव सेवा और ब्राह्मणों के पोषणार्थ देवोत्र और ब्रह्मोत्र सूत्रों से निष्कर भूमिदान करना ही त्रिपुर राजवंश की एक विख्यात और पुण्यमय कीर्ति है। सभी भूपतियों ने कमोवेश यह परमार्थिक कार्य सम्पादन किया है। इनमें महाराज गोविन्द माणिक्य का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनके द्वारा सम्पादित अनेक सनद और ताम्रशासन दृष्टिगोचर होते है।

महाराज गोविन्द माणिक्य के ताम्र शासन महाराज गोविन्द माणिक्य के प्रदत्त कुछ ताम्र शासन और सनद का विवरण यहाँ पर दिया जा रहा है। उन्होंने शुकदेव शर्मा नाम के एक ब्राह्मण को एक खण्ड ताम्र शासन द्वारा ब्रह्मोत्र भूमिदान किया था। वह सनद 1079 त्रिपुराब्द(1591 शक) में सम्पादित हुआ था। सनद की लिपि नीचे दी जा रही है।

ए विष्णु

श्रीराम सत्य जय

श्रीराम सत्य

स्वस्ति – श्रीश्रीयुत गोविन्दमाणिक्य देव विषम समर विजयि महामहोदयि
राजनामादेशोयं(1) श्रीकारकोनवर्गे(2) विराजतेऽन्यगतं राजधानी हस्तिनापुर(3)
सरकार उदयपुर(4) परगणे मेहेरकुल मौजे फुलतली हासिल ।6।।0 छय द्रोण आष्ट
काणि(5) भूमि ए ते(6) ब्रह्मोत्तर श्रीशुकदेव शर्माके दिलाम एहि भूमि निज
हस्ते हाल चाष कोराइया परम सुखे भोग करौक एहि भूमिर माल खाजाना औ
पाचापंचक(7) भेट(8) बेगार(9) वीरसिंह(10) सम (स्त मा) ना(11) इति सन
1079 तेरिख 11कार्त्तिक शक 1598 शन तेरिख 1 चैत्र(12)

चल–129

इस ताम्र शासन के आलोच्य विषयों की विवृति नीचे दी जा रही है –

(1) शासन के प्रथमावधि 'राजानामादेशोयं' शब्द तक संस्कृत भाषा है, इसके बाद का ''कारकोन'' शब्द पारसी भाषा जात है, उसके साथ ''बर्गे'' संस्कृत शब्द योग किया गया है। इस तरह संस्कृत, बंगला और पारसी भाषा के समिश्रण से ताम्र शासन को सम्पादित किया गया है। इनमें बहुत बर्ण अशुद्विया हैं।

(2) कारकोन वर्गे विराजते – वाक्य, वर्तमान काल में प्रचलित ''मंत्री सभाधिष्टित'' वाक्य की प्रतिष्ठा कर रहा है। 'कारकोन वर्ग' वाक्य का अर्थ है– कर्मचारी वृन्द।

(3) राजधानी हस्तिनापुर – इस वाक्य के प्रयोग का अर्थ यह है कि त्रिपुर राजवंश के आदि पुरूष सम्राट ययाति के पुत्र द्रुहयु, पितृ राज्य से आये थे, उस पितृराज्य के साथ सम्बन्ध रखने के अभिप्राय से एवं सम्राट युधिष्ठर के राजसूय यज्ञ के समय से सम्राट के आनुगत्य के निर्देशन स्वरूप ''राजधानी हस्तिनापुर'' वाक्य का व्यवहार होता आया है।

(4) सरकार उदयपुर – त्रिपुरा की राजधानी उदयपुर में प्रतिष्ठित होने के पश्चात सनद इत्यादि में ''सरकार उदयपुर'' लिखा जाता था। अगरतल्ला में राजधानी परिवर्तित होने के बाद भी बहुत दिनों तक वही प्राचीन शब्द का व्यवहार हो रहा था। महाराज राधाकिशोर माणिक्य के शासनकाल से उस शब्द के बदले ''सरकार अगरतल्ला'' लिखा जाने लगा।

(5) द्रोण और कानि – यह भूमि का परिमाप ज्ञापक शब्द है। इसका हिसाब यह है कि तीन क्रांति में एक कडा, चार कडा में एक गंडा और बीस गंडा में एक कानि और सौलह कानि में एक द्रोण होता है। (आधुनिक हिसाब से 40 डेसिमेल के बराबर एक कानि होती है। इस तरह द्रोण= 40गुणे16 कानि = 640 डेसिमेल हुआ –अनुवादक)

(6) प्रीते – प्रीते शब्द की जगह प्रिते लिखा है। इस शब्द के पहले + इस जगह प्रयुक्त ''विष्णु'' शब्द शासन के ऊपर शीर्ष भाग में लिखा गया है। ताम्रशासन दाता और गृहीता के नाम के नीचे विष्णु का नाम लिपि करना असंगत मानकर, यह नाम ऊपर दिया गया है।

(7) पाचा पंचक – राज सरकार के विशिष्ट उत्सव या दूसरे किसी व्यापार उपलक्ष्य पर सभी श्रेणी के प्रजाओं से चन्दा वसूल करने का नियम था। यह चन्दा साधारणतः प्रत्येक व्यक्ति के देय राजस्व का एक पंचमांश निर्धारित होता था इसी कारण से यह पाचा पंचक के नाम से जाना जाता था।

(8) भेट – कुछ निर्दिविष्ट पर्व के उपलक्ष्य में राजेश्वर को नाना तरह के वस्तु उपढौकन के स्वरूप देने पर प्रजा बाध्य थे। इसी उपढौकन को नजर या भेंट कहा जाता था। वर्तमान काल में भी त्रिपुरेश्वर की जमीदारी के तालुकदार आदि उत्तरायण का भेंट प्रदान करते थे।

चल–130

(9) वेगार – राजेश्वर के या राज कार्य के उपलक्ष में कर्मचारियों के आवश्यकीय कार्य सम्पादन के लिए तालुकदार आदि प्रजागण अपने अधिनस्थ लोगों के द्वारा उन सभी कामों की सहायता करते थे। इसी श्रेणी के कार्य निर्वाहक को ''वेगार'' कहा जाता था।

(10) वीरसिंह – युद्ध के समय सभी श्रेणी के प्रजा ही युद्ध उपयोगी सरंजाम अथवा उनके बदले में मुद्रा और युद्धार्थ सैन्य देने पर मजबूर थे। इसी सहायता को ''वीर सिंह'' कहा जाता था।

(11) समस्त माना – ये दो शब्दों में स्त और मा थे। दो अक्षर विनष्ट हो जाने से इन्हें बन्धनी में प्रदान किया गया है।

(12) ताम्र शासन के अन्त में ''सन् 1079 तेरिख 11 कार्तिक'' और ''शक 1598 सन् तेरिख 1 चैत्र'' ये दो सन् और तारीख उत्कीर्ण है। 1079 अंक त्रिपुराब्द सूचक है। 1079 त्रिपुराब्द –1591 शक था। उत्कीर्ण शकांक 1598 से पूर्वोक्त अंक सात साल आगे है। इस तरह परस्पर सात साल अन्तर्वर्ती दोनों सन् और दोनों तारीखों का उल्लेख रहने का कारणों का अनुसन्धान करने पर यह तथ्य सामने उभरकर आता है कि महाराज गोविन्द माणिक्य ने 1079 त्रिपुराब्द में (1591 शक) 11 कार्तिक तारीख को ताम्र शासन का सम्पादन किया था। सम्भवतः किसी कारणवश वह गृहीता को प्रदान नहीं किया जा सका। उनके गोलोक प्राप्ति के पश्चात तदीय पुत्र पैतृक सिंहासन पर रामदेव माणिक्य के आरोहण करने के बाद पिता द्वारा संकल्पित दान को स्थिरीकृत किया और 1598 शक के पहला चैत्र तारीख को पिता द्वारा संपादित ताम्र शासन को अर्पित किया। इस ताम्र शासन में दो मोहरे अंकित है। उनमें से एक में ''श्रीराम सत्य जय'' और दूसरे में ''श्रीराम सत्य'' लिखा है। पहली मोहर महाराज गोविन्द माणिक्य और दूसरी मोहर रामदेव माणिक्य के शासन काल की है।(1) दोनों राजाओं की समय की मोहरे उत्कीर्ण होने पर हमारा अनुमान सत्य प्रमाणित हुआ है।

इस तरह दोनों मोहरे और दो सन् तारीख युक्त महाराज गोविन्द माणिक्य के और कुछ ताम्र शासन हमारे दृष्टि गोचर हुए हैं। उनमें से एक के बारे में राजमाला तृतीय लहर के 85 पृष्ठ में आलोचना की गई है और कुछ ताम्र शासन के विवरण इसके बाद प्रदान किये जायेगें।

---

(1) महाराज रामदेव गोविन्द माणिक्य के मोहर में जो राम सत्य वाक्य का प्रयोग किया गया था, राजमाला की आलोचना से उसका प्रमाण मिलता है। उस ग्रंथ में राम देव माणिक्य खण्ड में लिखा गया है –

ताम्र पत्रे लिखि सनद कोरिया यतन।	ताम्र पत्र सनद करके लिखा यतन।
राम सत्य नामे भूमि द्विजेते अर्पण।।	'राम सत्य' नाम से भूमि किया द्विजार्पण।।
राजमाला चल राम माणिक्य खण्ड 18पृ	राजमाला चल राम माणिक्य खण्ड 18पृ

अर्थात, ''ताम्र पत्र में यत्न से सनद बनाया और उसमें राम सत्य लिखकर द्विज को भूमि अर्पण किया।

चल–131

महाराज गोचिन्द माणिक्य ने केवल देवता एवं ब्राह्मणों को ही भूमिदान किया था, ऐसी बात नहीं है। इस्लाम धर्मावलम्बी साधु पुरूष भी इस राजानुग्रह से वंचित नहीं थे। ''एकदिल काजी'' नाम के व्यक्ति को प्रदत्त एक ताम्र शासन का विवरण का यहाँ पर आलोचना की जा रही है। ताम्र शासन में अंकित वाक्यावली यह है –

श्रीराम सत्य जय | श्रीराम सत्य

ी स्वस्ति(1) श्रीश्रीयुत गोविन्दमाणिक्य देव विषम समर विजयी महा
महोदयी राजनामादेशोऽयं श्रीकारकोनवर्गे विराजतेऽन्यत राजधानि हस्तिनापुर
सरकार उदयपुर परगने मेहेरकुल एकदिल कजिरे(2) 33 शन आधा हासिला
आधा जंगला डेढ द्रोण जमि आयमा(3) दिछिलेन तान मौते(4) तान भाई
ओ पुत्र शनुसारे(5) मौजे तेतैयाडा हासिलात ।11 (6) बारो कानि भूमि श्रीकाजि
होसन ओ श्रीसुकुर माहामदेर आयमा दिलाम निज हाताले(7) चास कोरिया दोय(8)
करिआ सुखे रहौक पांचा पंचक भेट वेगार इत्यादि माना इति शन 1077
तें 19 कात्तिक(9)

(1) इस ताम्र शासन के प्रारम्भ में ही ी स्वास्ति अंकित हुआ है। त्रिपुरा के बहुत से शासन और सनन्द में इस तरह की लिपि देखी जाती है। दूसरे प्रदेशों के शासन एवं शिलालिपि में भी इस तरह के दृष्टान्त के अभाव नहीं हैं। किसी किसी शासन में इसके बदले '' ऽ'' व्यवहार के भी निदर्शन मिलते हैं। प्रत्नतात्विक पंडितों ने इन्हें प्रणव के प्रतिरूप के हिसाब से ग्रहण किया है किन्तु ''कामरूप शासनावली'' के हिसाब से संग्राहक श्रृद्धाष्पद अध्यापक श्रीयुक्त पद्मनाथ विद्याविनोद महाशय इस बात को स्वीकार नहीं करते। उन्होंने कहा है ''हम लोग बाल्यकाल से विद्यारंभ के समय ,क, ख, ग, घ, ड इस तरह लिखते थे '''' इस चिन्ह का नाम आन्जी है।' और इसी आन्जी के ही रूपांतर है। (कामरूप शासनावली 55 – 56 पृष्ठ देखिये) ब्राह्मण समाज पत्र अष्टम वर्ष, सप्तम संख्या में प्रकाशित स्वः महामहोपाध्याय रामनाथ विद्यारत्न महाशय की लिखित प्रबन्ध की आलोचना से जाना जाता है कि इन सभी चिन्ह के साथ षट चक्रों का सम्बन्ध है। पण्डितप्रवर श्रीयुत पंचानन तर्करत्न महाशय के मत में) सर्पाकृति कुलकुडंलिनी मध्यमा भावापन्ना चित्र प्रतिकृति है। किसी किसी के मतानुसार ये सभी स्वास्तिक चिन्ह है। इन सभी विभिन्न मतों के बीच कौन सा चिन्ह ग्रहणीय है और कौन सा वर्जनीय है, यह निर्णय करना दुःसाध्य है किन्तु पूर्वोक्त चिन्ह जो निरर्थक नहीं है – इस बात को अवश्य ही स्वीकार करना होगा।

(2) काजिरे के स्थल पर कजिरे उत्कीर्ण हुआ है। काजिके शब्द देशज भाषा में ''काजिरे'' हुआ है।

चल–132

(3) आयमा – निष्कर,

(4) मौते – मृत्यु के बाद,

(5) अंशानुसारे शब्द में अं अक्षर छूट गया है।

(6) ।।। द्वारा तीन रेखा द्वारा तीन चौक अर्थात बारह कानि अंक का प्रतीक है।

(7) दूसरे शासनों में भी ''निज हात हाले'' वाक्य मिलते है।

(8) ''दोया'' (दुआ) के स्थल पर ''दोय'' उत्कीर्ण हुआ है।

(9) इस ताम्र शासन में पूर्व आलोचित शासन की तरह दो मोहरे अंकित हुई हैं किन्तु आखिरी मोहराकंन में सन् तारीख नहीं दी गई है।

इस शासन की भाषा नितान्त ही असंपूर्ण एवं अस्पष्ट है। इससे मामूली तौर पर यह समझा जा रहा है कि एकदिल काजी नाम के व्यक्ति के देढ़ दोण भूमि 33 साल के लिए निष्कर दी गई थी। उस व्यक्ति के मृत्यु के बाद, उसके भ्राता और पुत्रों में अंशानुसार प्रत्येक को डेढ द्रोण भूमि का अर्द्धांश बारह कानि भूमि इस शासन द्वारा निष्कर के रूप में प्रदान की गई है।

दूसरे ताम्र शासन और सनद की तरह इस ताम्र फलक की भाषा भी संस्कृत, बांगला और पारसी शब्दों के समिश्रण से युक्त है। मुसलमानों के प्रभाव ये बंग देश के सर्वत्र ही दलिलों की भाषा इसी अवस्था को प्राप्त हुई थी। इस समय भी उनका प्रभाव है। दलिल की भाषा शायद चिर दिन ऐसी ही रहेगी।

इस ताम्र शासन में भ्रम प्रमाद और वर्णो की बहुत सी अशुद्धियां है। उनकी आलोचना करना निरर्थक है।

महाराज गोविन्द माणिक्य के द्वारा गंगानारायण नाम के एक पण्डित को भूमि प्रदान विषयक और एक ताम्र शासन मिला है। उस शासन में लिखा है।

ए विष्णु

श्रीराम सत्य जय

श्रीराम सत्य

शक 1599 सन् 1086 तें 11 माघि न(3)

ी स्वस्ति – श्रीश्रीयुत गोविन्दमाणिक्य देव समर विजयि महामहोदयी
पादपद्मानामादेशोऽयं श्रीकारकोन वर्गे विराजतेऽन्यत राजधानी हस्तिनापुर
सरकार उदयपुर परगने मेहेरकुल मौजे पांचथुपि अज्जंगला जमा
खारिज ।।(1) आदद्रोण भूमि श्रीगंगानारायण पण्डितेरे ब्राह्मात्तर दिलाम निज
हाथ हाले चास करिया ए्ीते(2) परमसुखे भोग करौक एहि भूमिर
पंचक भेट बेगार इत्यादि माना इति शन 1080 तेरिख 19 माघ

---

(1) ''।।'' इस चिन्ह द्वारा ।।0 आठ कानि या अर्द्ध द्रोण लिखा गया है।

चल–133

(2) प्रिते (प्रीते) शब्द से पहले U, इस चिन्ह को देखकर विष्णु शब्द को शासन के शीर्ष भाग में अंकन किया गया है। इस तरह करने का कारण हम पहले ही बता चुके हैं।

(3) 1087 त्रिपुरा सन् के स्थल पर 1086 अंकित हुआ है एवं आश्विन शब्द की जगह ''यासिन'' लिखा है।

इस नृपति के सम्पादित और एक ताम्र शासन का पाठ यहाँ दिया जा रहा है। इस ताम्र पट्टी में दो तारीख या दो मोहरें अंकित नहीं हैं। इससे समझा जाता है कि यह शासन महाराज गोविन्द माणिक्य ने स्वयं ही प्रदान किया था। महाराज रामदेव माणिक्य को इसके बाद हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं हुई।

ए विष्णु

श्रीराम
सत्य जय

ी स्वास्ति–श्रीश्रीयुत गोविन्दमाणिक्य देव विषम समर विजयि महामहोदयि
राजनामादे (शोऽयं)(1) श्रीकारकोन बगे(2) विराजतेऽन्यत राजधानी
हस्तिनापुर सरकार उदयपुर परगने (मेहेरकुल)(3) मौजे पांचथुपि ।। आदद्रोण
भूमि ब्रह्मोत्तर कामदेव पण्डिते पाइयाछिल अखने सेई भू (मि ताहार)(4) बेटा
श्रीजादू (5) पण्डितेरे दिलाम प्रि ए ब्रह्मोत्तर एहि भूमि निज हात हाले चाष
करि अ (।) (6) सुखे भोग करौक एहार पांचा पंचक भेट वेगार इत्यादि माना
इति 1083 तरीख 22 कात्तिक (7)

(1) (3) (4) (6) ताम्र फलक के दक्षिण भाग में कुछ अंश टूट जाने से () बन्धनी में रखे गये सभी शब्द विनष्ट हो गये हैं।

(2) बर्गे की जगह बगे उत्कीर्ण हुआ है।

(5) श्रीयदु के स्थल पर श्रीजादू लिखित है।

(7) कार्तिक की जगह पर कात्तिक अंकित हुआ है।

इसके अलावा महाराज गोविन्द माणिक्य के प्रदत्त देवीप्रसाद शर्मा नाम से एक, नरसिंह शर्मा नाम से और तथा अब्दुल गनि खन्दकार नाम से एक, ताम्र शासन और द्विजरत्न नारायण पुरोहित नाम से ब्रह्मोत्र भूमि का एक ताम्र शासन हमारी नजरों में आया है। उनमें नारायण नामक सनद का यहाँ पर आलोचना करना संगत जान पड़ता है। बाहुल्य भय से दूसरे सनदों की आलोचना से विरत रहना पड़ा।

द्विजरत्न नारायण राज पुरोहित एवं सभा पण्डित थे। उनकी योग्यता और राज दरबार में प्रतिपत्ति पाने के बहुत से परिचय मिलते हैं। महाराज कृष्ण माणिक्य के युवराज रहते समय वे विपन्नावस्था में राजधानी परित्याग करके सपरिवार नाना जगह परिभ्रमण करते हुए कष्ट भोग कर रहे थे। इसी समय धर्मरत्न नारायण नाम के एक पुरोहित

चल–134

असहनीय दुख और कष्ट को सहते हुए युवराज के सहयात्री हुए थे। कृष्णमाला ग्रंथ की आलोचना से यह जाना जाता है कि यह महाराज गोविन्द माणिक्य के समय राजपुरोहित के पद पर उक्त द्विजरत्ननारायण अलग स्वतन्त्र व्यक्ति थे। इसमें कोई संदेह नही। क्योंकि गोविन्द माणिक्य के प्रायः एक सदी के पश्चात कृष्ण माणिक्य राजा हुए थे। इस अवस्था में गोविन्द माणिक्य द्वारा नियोजित हुये राजपुरोहित महाराज कृष्ण माणिक्य के समय जीवित रहना और उनके साथ और दुर्गम स्थानों पर उनके साथ भ्रमण करना और वह भी दीर्घ काल तक, संभव नहीं है। पर उनमें कुछ अंश तक नाम की एक रूपता दिखाई देती है। राज पुरोहित द्विजरत्ननारायण को महाराज गोविन्द ने 1070 त्रिपुराब्द के 25 वैशाख सूर्य, ग्रहण के समय तुला पुरूष दान और महानदान के उपलक्ष्य में एक सनद द्वारा बीस द्रोण भूमि ब्रह्मोत्र प्रदान किया था। यह सनद कागज पर लिखी गई है। त्रिपुरा सुन्दरी देवी के पूजक (द्विजरत्ननारायण के वंशधर) श्रीयुत राजकुमार चक्रवर्ती महाशय ने सनद को हम लोगों को दिखाया है। वह अति जीर्ण एवं कुछ पाठ्य है। उस सनद का पाठ नीचे दिया जा रहा हैं

स्टाम्प मुद्रित 4 रूपया | रामसत्य जय | रामसत्य | श्रीरा माज्ञा | 34नं सेहा पारसी साक्षर

जाए –	जमि–	
साइला		
मौजा चन्द्रपुर	1ˎ	ीस्वस्ति –श्रीश्रीयुत गोविन्दमाणिक्य विषम समर
खिलपाडा	12ˎ	विजयि महामहोदयि रीजनामादेशोयं श्रीकारकनवर्ग
वासुवा पाडा	1ˎ	विराजतेऽन्यत परं राजधानी हस्तिनापुर सरकार
सोनामुडा	1ˎ	उदयपुर परगने उदयपुर मौजे चन्द्रपुर गएरह
डियारा	1ˎ	साइला(1) ओ बोरूआ(2) तुलापुरुष ओ महा अन्नदान
	–	बाबत सूर्यग्रहण काले ॅप्रीते विंशति द्रोण जमि
	16ˎ	श्रीद्विजरत्ननारायण पुरोहितके ब्रह्मोत्तर देउया गेल
		एहि जमिर मालखाजाना ओ भेट बेगार बीरसिंहादि
	बोरूआ	समस्तांक निषेद। एहि जमि आमल काबेज करिया पुत्र
नलगइर हंसध्वजेर		पौत्रादिक्रमे आशीर्व्वादपूर्व्वक परम सुखे भोग
तोला–	2ˎ	तछरूप करिते रहुक। इति सन् 1070 तेरिख 25
तीन नालिया –	1ˎ	बैशाख
छागल नाइया –	1ˎ	
	–	
	20ˎ	
विंशति द्रोण जमि मात्र		

(1) साइला – हेमंत काल में धान्य उत्पन्न योग्य भूमि।

(2) बोरूआ – बोरो धान्य उत्पन्न योग्य क्षेत्र।

चल–135

इस सनद की आलोचना करने से, सनद गृहीता और उनके वंशधरों के विशेष सतर्कता का परिचय मिलता है। महाराज गोविन्द माणिक्य द्वारा ''राम सत्य जय'' मोहर अंकन पूर्वक सनद प्रदत्त होने के बाद उसमें महाराज रामदेव माणिक्य का ''राम सत्य'' मोहर अंकन करा लिया गया है। इसके बाद पुनः सनद को महाराज कृष्ण माणिक्य के समक्ष उपस्थित कराकर ''श्रीरामाज्ञा'' मोहर अंकन कराया गया है। इसके पश्चात महाराज बीरचन्द्र माणिक्य के समय स्टाम्प प्रचलित हो जाने पर उस समय के घोषित राजाज्ञानुसार यह सनद चार रूपये के स्टाम्प पर मुद्रित कराया गया है। इसके द्वारा परिवर्ती राजाओं के समय भी सनद को प्रबल रखने के लिए विशेष सतर्कता अवलम्बन के प्रमाण मिलते है।

महाराज रामदेव माणिक्य का दिया हुआ कोई सनद हमारे नजरों में न आने पर भी उन्होंने ब्राह्मणों को ताम्र पत्र द्वारा भूमि अर्पण किया है। इस तरह के निदर्शन राजमाला में मिलते है। यथा।

ताम्र पत्रे लिखि सनद कोरिया यतन।	ताम्र पत्र सनद करके लिखा यतन।
राम सत्य नामे भूमि द्विजेते अर्पण।।	'राम सत्य' नाम से भूमि किया द्विजार्पण।।
राजमाला चल राम माणिक्य खण्ड 18पृ	राजमाला चल राम माणिक्य खण्ड 18पृ

(इसका भावार्थ 130 पृष्ठ पर दिया गया हैं)

इसके अलावा महाराज गोविन्द माणिक्य द्वारा सम्पादित और भी बहुत से ताम्र शासन महाराज रामदेव माणिक्य ने अपनी मुहर अंकन द्वारा उन्होंने उसे प्रबल किया है। यह भी उनकी दानशीलता का परिचायक कहना होगा।

महाराज द्वितीय रत्नमाणिक्य के प्रदत्त भूमि दान की कोई ताम्र शासन या सनद हमें नहीं मिली। किन्तु वे भी दानशील थे एवं ब्राह्मणों को भूमिदान किया है। राजमाला की आलोचना से इसके प्रमाण मिलते हैं। उस ग्रंथ में लिखा है –

रत्नमाणिक्य पुन होइलो नरेश्वर।	रत्नमाणिक्य पुनः हुए नरेश्वर।
द्विजे भूमिदान राज्य शासन तत्पर।।	द्विजों को भूमिदान, रहे राज्य शासन तत्पर।।
राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 23पृ	राजमाला चल रत्नमाणिक्य खण्ड 23पृ

अर्थात, ''रत्नमाणिक्य पुनः राजेश्वर हुए, द्विजो को भूमि दान किया और राज्य शासन के लिए तत्पर हुए।''

महाराज धर्म माणिक्य (द्वितीय) ने भूमि दान द्वारा सत्कीर्ति अर्जन किया है। उनके द्वारा भूमि दान का कोई निदर्शन न मिलने पर भी राजमाला के वाक्य द्वारा इस विषय के प्रमाण मिलते हैं –

तिल, धेनु, तुलापुरूष आर जे विपुल।	तिल, धेनु, तुलापुरूष और कितने ही विपुल।
शास्त्र प्रमाण दान भूम्यादि अतुल।।	किया शास्त्र प्रमाणदि से भूमिदान अतुल।।
राजमाला चल धर्म माणिक्य खण्ड 30पृ	राजमाला चल धर्म माणिक्य खण्ड 30पृ

अर्थात, ''तिल, धेनु, तुला पुरूष और भी अन्य विपुल शास्त्रों के अनुसार भूम्यादि अतुलनीय दान किया।''

चल–136

इसके पश्चात जय माणिक्य और इन्द्र माणिक्य ने कुछ दिनों तक प्रतिद्वन्द्वी के रूप में एक समान राजत्व किया था। लोगों को अपने अपने पक्ष में करने के लिए उन्होंने उन्हें निष्कर भूमि दान किया थ। इनके दानों का कोई भी निदर्शन संग्रह नहीं किया जा सका। ये सभी दान दया या धर्म भाव से किया गया था, ऐसा नहीं लगता। ये राजा अपने कार्य उद्धार के लिए लोगों को अपनी मुठ्ठी में रखने के अभिप्राय से ऐसा किया करते थे। ये दान किसी स्थल पर धर्म के नाम पर साधना उद्देश के लिए भी भूमि दान करना कोई असंभव सी बात नहीं है। पर हम उसका भी कोई निदर्शन संग्रह करने में असमर्थ रहे।

महाराज कृष्ण माणिक्य के ताम्र शासन महाराज कृष्ण माणिक्य के राधामाधव देवता और जगन्नाथ देवता सेवा के लिए ताम्र शासन के जरिये देवोत्र भूमि दान करने का विवरण हम पहले दे चुके हैं।(1) इसके अलावा नानकार, खानाबाडी इत्यादि नाना सूत्रों से बहुत से व्यक्तियों को उन्होंने भूमि प्रदान किया है। इसी श्रेणी के कुछ सनद और पत्रों को हमने देखा है। विस्तार और बाहुल्य भय से उनका विवरण यहाँ नहीं दिया जा सका।

महाराज कृष्ण माणिक्य ने मेहेर कुल परगना के अन्तर्गत मिथिलापुर गाँव में अपने गुरू को निष्कर रूप से उन्होंने प्रदान किया था।

चट्ट ग्राम कॉलेज के संस्कृत भाषा के अध्यापक श्रद्धास्पद श्रीयुक्त दिनेशचन्द्र भट्टाचार्य एम. ए. महाशय ने महाराज कृष्ण माणिक्य का प्रदत्त एक सनद की प्रतिलिपि संग्रह किया है। उनके अनुग्रह से उस सनद का विवरण हमें प्राप्त हुआ है। सनद 1171 त्रिपुराब्द के 13 बैशाख तारीख को सम्पादित हुई थी, इसके द्वारा हरिनारायण चौधुरी, रामबल्लभ चौधुरी और सीताराम चौधुरी को मेहेरकुल परगना के अधीन तपेराजापाडा और तपेवानासूया मध्य स्थित आठ द्रोण चार कानि भूमि बेहारा चाकर पोषणार्थ इनाम सूत्रों में दी गई थी। यह बात सनद के अन्त में लिखी गई है – ''माहाफिक तपछिल आठ द्रोण चार कानि जमि तोमारग बेरा चाकर राखनेर जन्य इनाम देउआ गेलो। एई जमि दिया तोमारघ पुत्र, पौत्रादि क्रमे बेरा चाकर राखिया तोमारग आपन आपन काज कर्म कराव। एई जमीर माल खाजना ओ वृसिंह(वीर सिंह) इत्यादि समस्तांक निषेद।''

नाना कारणवश प्राचीन ताम्र शासन और सनद इत्यादि संग्रह करना कठिन हो गया है। बहुत से व्यक्ति अपने हस्त स्थित दलिलों को दिखाने में अनिच्छा प्रकाश करते हैं। वे सोचते है। ये सभी दलिलों को बाहर निकालने पर उन्हें खोने/देने पर मजबूर पड़ेगा अथवा दूसरी कोई मुसीबत खडी हो सकती है। उनके इस भ्रम विश्वास के फलस्वरूप हमें बहुत सी मुसीबतों का सामना करना पड़ रहा है।

---

(1) पूर्ववर्ती 115 और 123 पृष्ठ देखिये।

चल–137

इस ग्रंथ में सभी ताम्र शासन और सनद का विवरण प्रदान किया गया है। इससे जुड़ी सभी भूमि नाना तरह की अवस्थाओं से गुजरती हुई स्थानान्तरित होती हुई नाना व्यक्तियों के हाथों से होती हुई पुनः त्रिपुरेश्वर सरकार में तब्दील हो गई। देवोत्तर भूमि की हालत भी अनेक जगहों पर इसी तरह की हुई है। अतएव आलोच्य सनद और ताम्र शासनों में बहुत से शासनों का अब कोई मूल्य ही नहीं है।

अन्य पुण्य कार्य

देवायतन निर्माण, विग्रह स्थापन, जलाशय प्रतिष्ठा एवं भूमि दान अन्य पुण्य कार्यानुष्ठान त्रिपुर नृपतियों की चिरंतन प्रथा रही है। जिन राजाओं ने ये सभी कार्य सम्पादन नहीं कर सके उन्होने कम से कम दो एक तालाब खनवाकर जल दान की व्यवस्था की है। इसके अलावा दूसरे तरह के पुण्य कार्यानुष्ठान भी त्रिपुरेश्वरों की वंश परम्परा की कीर्ति हैं।

महाराज गोविन्द माणिक्य बार बार कनक के तुलापुरूष दान और तीर्थ भ्रमणादि बहुत से सत्कार्यों का सम्पादन किया है। महाराज रामदेव माणिक्य देव द्विज के प्रति भक्ति परायण एवं प्रतिक्षण देवार्चन में रत रहते थे। महाराज धर्म माणिक्य(द्वितीय) के तिल धेनु दान, तुला पुरूष दान और षोड़स दान करने के निदर्शन मिलते हैं। वे प्रतिदिन नियमित रूप से पुराण श्रवण द्वारा चित्त शुद्धि करते थे। महाराज कृष्ण माणिक्य ने तुलापुरूष दान, षोड़स दान एवं पंचाग्नि आदि कृच्छव्रत का उद्यापन किया है। कुमिल्ला के जगन्नाथपुर में इनके द्वारा सम्पादित एक सप्ताह तक चलने वाला महोत्सव एक चिरस्मरणीय घटना है।

कृष्णमाला ग्रंथ में इस महोत्सव का विशद विवरण पाया जाता है। बाहुल्य भय से यहाँ उसे नहीं दिया जा सका।

राजाओं के कार्य कलापों की आलोचना से उनके धर्मानुराग का परिचय मिलता है। किन्तु बहुत ही दुःख के साथ यह उल्लेख करना पड़ा कि काल के प्रभाव से राजवंशीय बहुत से "अनाधिकारी व्यक्ति राज्य लालसा लोभ से, सुपवित्र राजकुल और राजधर्म को कलुषित करने से नहीं चूके। इसके बाद हम इस विषय पर आलोचना करेगें।

सामरिक बल और समर विवरण

त्रिपुरा का सामरिक बल कितना दृढ़ था, राजमाला के प्रथम, द्वितीय और तृतीय लहर की आलोचना से उनका परिचय मिला है। अन्तर्विप्लव, बाहरी शत्रुओं का पुनः पुनः आक्रमण और प्रबल शक्तियों के साथ एक के बाद एक आक्रमण के फलरूवरूप त्रिपुरा का बाहुबल उत्तरोत्तर शिथिल हो रहा था। उन दिनों मघ और मुगल, इन दो प्रबल शक्तियों के साथ

चल–138
त्रिपुरा की हमेशा प्रतिद्वन्दिता चल रही थी। इतने दिनों तक कोई भी शक्ति त्रिपुरा के बल वीर्य के सामने टिक नहीं सकी। राजमाला चतुर्थ लहर में आई घटनाओं का समकालीन समय में राज परिवार के ही कोई कोई व्यक्ति ने अशोभनीय और असंगत स्वार्थसिद्धि की लालसा से बारबार शत्रु पक्ष को आह्वान कर उनकी सहायता से अपने ही महान शौर्य के जड़ में जिस तरह कुठाराघात किया है, उसे याद करते ही हृदय में शूलबिद्ध सी यातना होती है।

महाराज छत्र माणिक्य का त्रिपुरा आक्रमण त्रिपुरा के दरबार से मुर्शिदाबाद नवाब के दरबार में किसी व्यक्ति को नियोग करने का नियम था। यह नियम गोविन्द माणिक्य के शासन काल में प्रवर्तित होने की बात हम पहले ही बता चुके हैं। महाराज गोविन्द माणिक्य के सिंहासन पर बैठने के बाद उन्होंने अपने सौतेले भाई नक्षत्र राय को नवाब दरबार में प्रतिभु स्वरूप भेजा था। गोविन्द माणिक्य के सिंहासन प्राप्ति से नक्षत्र राय संतुष्ट नहीं थे। नवाब दरबार में कुछ दिनों तक रहने के बाद अपनी प्रतिभा से उन्होंने नवाब को वशीभूत कर लिया एवं उनकी सहायता से अपने भ्राता को राज्यच्युत कर स्वयं सिंहासन प्राप्ति के लिए कोशिश करने लगे। इधर देवालयों में बलि प्रथा बन्द कर देने के फलस्वरूप चंताई आदि प्रमुख प्रजा वृन्द महाराज गोविन्द माणिक्य के प्रति असन्तुष्ट थे। नक्षत्र राय ने देखा कि राज्य पर अधिकार प्राप्त करने का सुनहरा अवसर है। उन्होंने बंग के शासक शाहसुजा की अनुकम्पा से मुगल वाहिनी को लेकर विजय के लिए विजय के लिए रवाना हो गये।

महाराज गोविन्द माणिक्य का त्याग स्वीकार नवाब सेना की आगमन वार्ता पाकर मंत्री और सेनापतियों ने युद्ध की तैयारी के लिए बार बार राजाज्ञा के लिए प्रार्थना करने लगे, किन्तु भातृ वत्सल और शांति प्रिय महाराज गोविन्द इस प्रस्ताव से सहमत नहीं हुए। रण भूमि में अवतीर्ण होने पर हो सकता है कि भाई के खून से समरगण प्लवित होगा अथवा आत्म जीवन की आहुति प्रदान करनी होगी, विशेषतः इस व्यापार में प्रजाक्षय अवश्य होगा। अतएव वे युद्धाकांक्षा का परित्याग कर बिना झगड़ा–फसाद किये राज्य छोड़कर चले गये(1)

महाराज छत्र माणिक्य का सिंहासन लाभ ''नक्षत्र राय'' ''छत्र माणिक्य'' नाम धारण कर त्रिपुरा के सिंहासन पर बैठे।

---

(1) गोविन्द माणिक्य राजा बोलिलो तखन।	राजा गोविन्द माणिक्य ने कहा उस क्षण।
भाई संगे कोरि युद्ध किसेर कारण।।	भ्राता संग युद्ध करूँ मैं किस कारण।।
आत्म कलह होइले प्रजा नष्ट होय।	आत्म कलह से प्रजा होती नष्ट।
पापे त होइबो स्थिति बोलिलो निश्चय।।	पाप से बिगडे स्थिति यही है स्पष्ट।।
राजत्व कोरिलो आमि बर्ष परिमाण।	राजत्व किया हूँ एक वर्ष परिमाण।
एखनि राजत्व ज्ञान ताहान विधान।।	अभी राजत्व ज्ञान उनका विधान।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 6–7पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 6–7पृ

अर्थात, ''गोविन्द माणिक्य राजा ने तब कहा, भाई के साथ में युद्ध क्यों करूँ, आत्म कलह से प्रजा नष्ट होती है। स्थिति पापमय होगी यह निश्चित है। एक साल तक मैं ने राजत्व किया इस समय का राजत्व उसके ही विधान से चलेगा।''

चल–139

महाराज छत्र माणिक्य के सहायताकारी कौन यहाँ पर एक बात का उल्लेख करना संगत जान पड़ता है। नक्षत्र राय के वंशजों ने अपने यहाँ रखी राजमाला में लिखा है – नक्षत्र राय ने भीषण संग्राम के पश्चात गोविन्द माणिक्य को जीतकर त्रिपुर सिंहासन पर अधिकार जताया।'' राज ग्रंथागार में रखे हुऐ हुए राजमाला के अनुसार –नक्षत्र राय शाहसुजा की सहायता से त्रिपुरा को आक्रमण किया था। किन्तु युद्ध क्षेत्र में शक्ति परीक्षा आवश्यकता नहीं हुई। राजमाला के संग्राहक स्वर्गीय कैलाश चन्द्र सिंह महाशय ने इन दो मतों में पूर्वोक्त मत को ही ग्रहण किया है। उन्होंने कहा है –

जिस समय सुल्तान सुजा की आत्म रक्षा की क्षमता सम्पूर्ण रूप से तिरोहित हो गई थी, उस समय वे कैसे किसी दूसरे व्यक्ति की सहायता कर सकने में सक्षम हुए थे? अतएव नक्षत्र राय ने अपने बाहुबल से सिंहासन पर अधिकार किया। यही सत्य है।

कैलाश बाबू की राजमाला दूसरा भाग सँातवा अध्याय 85पृ

कैलाश बाबू के इस मत को ग्रहण करने में द्विधाभाव आता है। उन्होंने इस जगह शाह सुजा के दूसरे की सहायता पँहुचाने पर अक्षम सोचने पर भी, सुजा गोविन्द माणिक्य पर विजय प्राप्त कर, कुमिल्ला नगरी में विजय चिन्ह स्मृति स्वरुप मस्जिद निर्माण कथा विश्वास करते है।(1) जो व्यक्ति नक्षत्र राय की सहायता करने में अक्षम थे, उन्होंने त्रिपुरा पर विजय प्राप्त की, किस तरह? एवं दूसरे की सहायता के बिना राजा के विरूद्ध अस्त्र धारण करने का सामर्थ्य नक्षत्र राय के लिए संभव था या नही? किस तरह नक्षत्र राय ने राज्य पर अधिकार प्राप्त किया था उस विषय पर आलोचना अर्थहीन है। स्थूल बात तो यह है कि राजत्व प्राप्ति के लिए उन्होंने जिस पंथा का अवलम्बन किया था, वह प्रंशसनीय नहीं है। खासतौर से उनके प्रदर्शित पथ, बाद में त्रिपुरा के लिए भयंकर अनिष्टकारी सिद्ध हुआ था।

कैलाश बाबू चाहे जो भी कहे, राजमाला के सार–संकलियता रेवरेंड जेम्स लाँग साहब ने राजमाला का मत ही ग्रहण किया था। उनके लेख से पता चलता है –

"The step brother of Raja, having obtained assistance from the Nawab of Murshidabad attempted to gain possession of the throne; the Raja being a peaceable man and not wishing to fight with a relative, fled to the king of Arakan, who gave him hospitable reception."

J.A.S.B. -Vol XIX

मर्म – राजा के सौतेले भाई ने मुर्शिदाबाद के नवाब की सहायता से सिंहासन पर अधिकार प्राप्त करने के लिए चेष्टा किया था। शांति प्रिय राजा ने अपने भाई के साथ लड़ाई के साथ युद्ध में लिप्त न होकर पलायन कर आराकान के राजा के यहाँ उपस्थित हुए। आराकान–राज ने उन्हें सादर आश्रय दान दिया था।

---

(1) कैलाश बाबू की राजमाला दूसरा भाग सँातवा अध्याय 94पृ

चल–140

इस उक्ति से बंगेश्वर की सहायता लेना एवं गोविन्द माणिक्य का बिना युद्ध राज्य त्याग का निदर्शन पाया जाता है। छत्र माणिक्य (नक्षत्र राय) ने 1661 ई0 सन् में राज्य लाभ किया था। शाह सुजा के 1639 ई0 सन् से 1660 ई0 तक बंग के शासक के पद पर नियोजित रहने के प्रमाण मिलते हैं। अतएव उनके नक्षत्र राय की सहायतार्थ त्रिपुरा आक्रमण के लिए अग्रसर होना असंभव नहीं लगता। शाह सुजा और महाराज गोविन्द माणिक्य एक ही समय भातृ विरोध पर राज्य त्याग करने पर मजबूर हुए थे। सम्भवतः सुजा ने भागने के कुछ दिन पहले त्रिपुरा के विरूद्ध सेनायें भेजी थी।

कैलाश बाबू ने कहा, गोविन्द माणिक्य के राज्य त्याग के पश्चात, उनके पुत्र रामदेव माणिक्य ने छत्र माणिक्य के विरूद्ध अस्त्र धारण किया था। यह विवरण उन्हें कहाँ मिला यह जानने का कोई उपाय नहीं है। राजमाला में लिखा है, महाराज गोविन्द माणिक्य राज्य परित्याग करके जाने के समय उनके पुत्रगण भ्राता जगन्नाथ देव एवं भ्रातुष पुत्र गण उनके सहयात्री हुए थे। अतएव छत्र माणिक्य के विरूद्ध कुमार रामदेव का अस्त्र धारण करना संभव नहीं लगता। खासकर राज्य भ्रष्ट राजकुमार के लिए नव–जागृत राजा के विरूद्ध अस्त्र धारण करना आसान नहीं है।

महाराज गोविन्द माणिक्य के दूसरी बार के राजत्व काल में युद्ध विग्रह में लिप्त होने ही किसी भी घटना का आभास नहीं मिलता।

महाराज छत्र माणिक्य का राज्यत्व काल महाराज छत्र माणिक्य ने राज्य प्राप्ति के लिए भ्राता के विरूद्ध अस्त्र धारण किया था। किन्तु राजा होने के पश्चात वे किसी के साथ किसी संघर्ष में लिप्त नहीं हुए। उनके शासन काल में राज्य सर्वतो भाव से शांतिपूर्ण था।

महाराज रामदेव माणिक्य और द्वारिका ठाकुर गोविन्द माणिक्य के पुत्र रामदेव माणिक्य के शासनकाल में संग्राम आदि किसी तरह की कोई भी अशांति जनक कोई घटना नहीं घटी। महाराज रामदेव ने अपने भाई के लड़के (दुर्गा ठाकुर के पुत्र) द्वारिका ठाकुर को नवाब के दरबार में प्रतिनिधि के रूप में रखा था। उनके काज कर्मों की वजह से रामदेव माणिक्य को कुछ अशांति उन्हें भोगनी पड़ी थी। इसका विवरण हम बाद में देगें।

महाराज रत्नमाणिक्य का राजत्वकाल महाराज रामदेव माणिक्य के परलोक सिधारने पश्चात, उनके पाँच साल का बेटा रत्नमाणिक्य को सिंहासन पर बैठाया गया। नवीन भूपति के मामा बलिभीम नारायण युवराज की आख्या पाकर शिशु राजा के नाम से राज्य शासन चलाने लगे। अप्रतिहत प्रभाव के फलस्वरूप बलिभीम नारायण अत्याचारी हो उठे थे। वे मुगल शक्ति के प्रति ताच्छिल्य भाव

का प्रदर्शन कर रहे थे। इसलिए ढाका का शासन कर्ता सायेस्ताखाँ ने केशरीदास नाम के एक सेनापति को भेजकर बलिभीम नारायण को पकड़ कर मुर्शिदाबाद प्रेरण किया। इस समय मुगल शक्ति के साथ त्रिपुरा संघर्ष हुआ था।

द्वारिका ठाकुर द्वारा त्रिपुरा आक्रमण व विजय द्वारिका ठाकुर रामदेव माणिक्य को हराकर राज्य प्राप्ति की चेष्टा में नाकामयाब हुए थे। इस बार उनकी आकांक्षा पूर्ति का सुयोग आया। एकदल नवाब की सेनाओं के साथ उन्होंने त्रिपुरा कि विरूद्ध युद्ध यात्रा की। राजधानी पर कब्जा और राजा को हराकर नरेन्द्र माणिक्य नाम धारण कर सिंहासनरूढ हुए। इस ओर जगन्नाथ ठाकुर के पुत्र(महाराज गोविन्द माणिक्य के भाई के पुत्र) चम्पक राय ने ढाका जाकर सारी परिस्थितियों से नवाब को अवगत कराया। नवाब ने रत्नमाणिक्य की सहायता के लिए नरेन्द्र माणिक्य के विरूद्ध सेना भेजी। मुसलमान वाहिनी उदयपुर राजधानी को आक्रमण और नरेन्द्र माणिक्य को पकड़ कर ढाका ले जाने के पश्चात पुनः रत्नमाणिक्य सिंहासन पर बैठे।

घनश्याम ठाकुर द्वारा त्रिपुरा आक्रमण महाराज रत्नमाणिक्य पुनः राज सिंहासन पर बैठे, लेकिन इस बार उनकी विपदायें और घनीभूत होकर सामने आई। रामदेव माणिक्य के पुत्र घनश्याम ठाकुर(रत्नमाणिक्य के सौतेले भाई) इस समय मुर्शिदाबाद के दरबार में राज्य के प्रतिभू स्वरूप थे। उन्होंने नवाब को अपने वश में करके सेना की सहायता प्राप्त की एवं उदयपुर आक्रमण किया और राजा को वध करके महेन्द्र माणिक्य नाम धारण पूर्वक त्रिपुरा का राजदण्ड अपने हाथों में लिया।

जगतराम ठाकुर द्वारा त्रिपुरा आक्रमण महेन्द्र माणिक्य के परलोक सिधारने के पश्चात उनके भ्राता दुर्योधन ठाकुर ने राजत्व प्राप्त किया। उन्होंने धर्म माणिक्य (द्वितीय) नाम ग्रहण किया था। इस समय छत्र माणिक्य के प्रपौत्र जगत राम ठाकुर त्रिपुरा के सिंहासन के अभिलाषी हुए। उन्होंने बरदाखात के जमीदार आका सादेक की सहायता से ढाका नबाब के दीवान मीर हबीब के साथ मिलकर ढाका के शासक को वशीभूत किया और उनकी दी हुई फौजों की सहायता से उदयपुर को आक्रमण किया था। किन्तु धर्म माणिक्य हाथों सम्पूर्ण रूप से पराभूत होकर वे ढाका लौट जाने पर मजबूर हुए। नवाब ने इस पराजय वार्ता को सुन क्रोधान्ध होकर एक विशाल सेना वाहिनी पुनः विजयार्थ प्रेरण की। नवाब की सेनायें दो भागों में विभक्त होकर, एक भाग गोमती नदी के रास्ते से और दूसरे भाग की सेनायें कैलारगढ के रास्ते से आगे बढ़ने लगी और उत्तर एवं पश्चिम की ओर से राजधानी को आक्रमण किया। मीर हबीब स्वयं इस युद्ध में नायक थे। घोर संग्राम के पश्चात त्रिपुरा सेनायें पराजित हुई। राजा ने राजधानी परित्याग कर पार्वत्य प्रदेश में आश्रय लिया। इधर मुगल वाहिनी ने राजधानी को लूटा और जगतराम

चल–142
ठाकुर को राजत्व प्रदान कर प्रस्थान किया। महाराज धर्म माणिक्य, जगत सेठ की सहायता से पुनः राजा हुए थे। किन्तु उसी समय समतल क्षेत्र का ''रोशनाबाद'' नामकरण से मुगलों के अधीन जमींदारी में परिणित हुआ। इस आक्रमण और विजय द्वारा पार्वत्य प्रदेश की स्वाधीनता किसी भी क्षुण्ण नहीं हुई।

मणिपुर राज का त्रिपुरा आक्रमण

महाराज धर्म माणिक्य मुसलमानों के साथ संघर्ष में फंसे रहने के कारण सुयोग देखकर मणिपुराधिपति पामहेईबा (कमि नवयाज) ने त्रिपुरा के उत्तर सीमान्त के रक्षक सेनाओं को आक्रमण कर और जीतकर अपने राज्य की सीमा रेखा दक्षिण की ओर कुछ माने में बढाया था। इस सामान्य युद्ध में मामूली सी त्रिपुर सेनाओं को आक्रमण और जीतकर मणिपुरी इतने उत्फुल्ल हुए थे कि उन्होंने राजा पाम हेईबा को ताखेलड०म्वा (त्रिपुरा विजयी) उपाधि से भूषित कर गौरव का अनुभव किया था। इस उपलक्ष्य में एक ग्रंथ की रचना की गई थी। उसका नाम ताखेलड०म्बा (त्रिपुरा विजय) था। उन दिनों त्रिपुरा विजयी कहा कर अपने को गौरवान्वित समझना अस्वाभाविक नहीं है, लेकिन इस विजय का फल नितान्त ही अकिंचितकर ही लगता है।

महाराज मुकुन्द माणिक्य का राजत्वकाल

महाराज मुकुन्द माणिक्य नियमित संख्यक हाथी प्रदान न करने की वजह से उसे अदा कराने के लिए नवाब के फौजदार सेना सामन्तों के साथ त्रिपुरा आये वे उदयपुर जाकर छावनी लगाकर बैठे। पुनः पुनः खेदा का आयोजन करके भी अच्छा हाथी न पकड़ लाने पर प्रतिश्रुति हाथी न दे सकने पर विघ्न उपस्थित हुआ था। इस समय गोविन्द माणिक्य के अनुज जगन्नाथ ठाकुर के प्रपौत्र रुद्रमणि ठाकुर सुबा पद पर प्रतिष्ठित थे। हाथी ''खेदा'' का सारा दायित्व उनके ऊपर था। नवाब के फौजदार के आगमन के समय वे उदयपुर के दक्षिण में मोताई नाम की जगह पर हस्ती खेदा के काम में व्यस्त थे। उन्होंने महाराज को पत्र द्वारा सूचित किया कि हाथी पकड़ा नहीं गया। राजाज्ञा मिलने पर वे नवाब के फौजदार को आक्रमण और खदेड देने के लिए तैयार हैं। महाराज मुकुन्द ने देखा, उनका ज्येष्ठ पुत्र पाँचकडि ठाकुर प्रतिनिधि के रूप में नवाब के दरबार में है। रूद्रमणि सुबा के प्रस्ताव के अनुसार फौजदार के प्रति अत्याचार करने पर पुत्र को उसका फल भोग करना होगा। इस तरह की चिन्ता करके वे रूद्रमणि के प्रस्ताव पर सहमत नहीं हुए। रूद्रमणि ने पुनः इस तरह का प्रस्ताव भेजकर, आदेश प्राप्ति के पहले ही ससैन्य राजधानी की ओर प्रस्थान किया। महाराज मुकुन्द माणिक्य उभय संकट में पड़ गये और फौजदार को सतर्क करने के लिए सुबा रूद्रमणि का पत्र उनके यहाँ भेज दिया। अविवेचक फौजदार ने उल्टा अर्थ लगाकर मन में सोचा कि बिना राजा की सम्मति के अधिनस्थ अधिकारी इस तरह कार्य में लिप्त नहीं हो सकता।

चल–143

मुसलमान द्वारा राजधानी आक्रमण और राजा का जीवनविसर्जन

फौजदार ने क्रोधित होकर अकस्मात् राजपुरी पर आक्रमण किया। मुकुन्द माणिक्य, कुमार कृष्णमणि ठाकुर और धर्म माणिक्य पुत्र गदाधर ठाकुर को पकड़ कर अवरूद्ध कर दिया। इस ओर राज सेनाओं ने फौजदार को पकड़ने के लिए उसकी छावनी को चारों ओर से घेर लिया। किन्तु इसका कोई फल नहीं हुआ। महाराज मुकुन्द कारारूद्ध के अपमान सह नहीं सके और अपमान वश विषपान से आत्महत्या कर ली। रात को ही उनकी मृत्यु हो गई। राज सेनाओं ने इस शोक जनित घटना विमर्ष होकर फौजदार को आक्रमण का संकल्प परित्याग कर दिया।

सूबा रुद्रमणि का व्यवहार

महाराज मुकुन्द माणिक्य के परलोक गमन के समय ज्येष्ठ पुत्र पाँचकडि ठाकुर नवाब के दरबार में थे। इसी सुयोग को अपनाकर सुबा रूद्रमणि ने जय माणिक्य नाम ग्रहण कर सिंहासन पर अपना अधिकार जमा लिया। पाँचकडि ठाकरु स्वदेश लौट रहे थे। रास्ते में पितृ वियोग की और जय माणिक्य के सिंहासन अधिकार कर लेने की खबर सुनकर मुर्शिदाबाद लौट गये एवं सारी परिस्थितियां नवाब के यहाँ निवेदन की और उनसे सहायता प्रार्थना की। वे राज्य में आकर नबाब की सहायता से राज्य पर अपना अधिकार कायम किया और इन्द्र माणिक्य नाम धारण किया था। किन्तु रूद्रमणि आसानी से राज्य त्याग करने के पात्र नहीं थे। मोताई नाम के एक जगह पर जाकर उन्होंने एक नई राजधानी की प्रतिष्ठा की एवं राज्य के दक्षिणांचल के प्रजाओं को लेकर एक छोटे से राज्य की प्रतिष्ठा की। कुछ दिनों के पश्चात महाराज इन्द्र माणिक्य अनुरोध पर, नवाब की सेनायें त्रिपुरा आकर जय माणिक्य (रूद्रमणि को) पकड़ कर ले गई।

महाराज इन्द्रमाणिक्य द्वारा त्रिपुरा आक्रमण

मुसलमान द्वारा त्रिपुरा आक्रमण

जय माणिक्य को विताड़ित करके भी महाराज इन्द्र शांति से राज्य भोग करने में भी समर्थ नहीं हो सके। समसेर गाजी नाम के त्रिपुरेश्वर के अधिनस्थ एक प्रजा की प्ररोचना से नवाब सेनाओं द्वारा पुनः राज्य आक्रान्त हुआ। घोर संग्राम के पश्चात विजयलक्ष्मी मुसलमानों की अंकशायनी हुई। महाराज इन्द्र माणिक्य पकड़े गये और उन्हें मुर्शिदाबाद ले जाने साथ साथ युवराज कृष्णमणि ने सपरिवार राजधानी परित्याग पूर्वक मनु नदी के किनारे जाकर आश्रय लिया।

युवराज कृष्णमणि देशांतरित अवस्था में नाना देशों का परिभ्रमण करके अशेष दुर्गति भोग किया था एवं राज्य प्राप्ति के बाद उन्हें मुसलमान, कुकी, त्रिपुरा और अंग्रेजो के साथ बार बार संघर्ष में जुझना पड़ा था। इसका विवरण आगे विशद रूप से दिया जायेगा। महाराज कृष्ण माणिक्य राजमाला चतुर्थ लहर के शेष राजा हैं।

चल–144

त्रिपुरा सामरिक बल की अवनति सामरिक विवरण थोडे से वाक्यों में ही शेष करना पड़ा। जो संक्षिप्त विवरण प्रदान किया गया हें इससे यह उपलब्धि होती है कि त्रिपुरा के जिस सिंह पराक्रम के सामने एक दिन बंग भूमि का सिंहासन काँप उठा था, जिस विपुल विक्रम के यहाँ मुगल, पठान, मघ और पुर्तगीज आदि प्रबल शक्तियों का मस्तक नत हुआ था, इसी शक्ति का कितना अपचय हुआ है। कहते समय दुख होता है, आत्मद्रोहिता और अन्तर्विप्लव की इस शोचनीय अवनति का प्रधान कारण है। प्रतिनियत प्रबल मुसलमान शक्तियों के घात–प्रतिघात से त्रिपुरा को इस तरह जर्जरित और दुर्बल कर दिया था कि अन्तर्विप्लव के दमन के लिए भी त्रिपुरेश्वरों को प्रतिद्वन्द्वी मुसलमान शासकों की सहायता पर ही निर्भर रहना पड़ता था। अगले अध्याय में इस विषय की आलोचना से ये सारी बातें हृदयगंम होगी।

——————— + ———————

राज्यघटित विवरण

राजधानी प्रतिष्ठा

उदयपुर राजधानी महाराज गोविन्द माणिक्य, छत्र माणिक्य, रामदेव माणिक्य, रत्नमाणिक्य (द्वितीय), मुकुन्द माणिक्य और इन्द्र माणिक्य(द्वितीय) पूर्ववर्ती राजाओं की तरह उदयपुर में राज पाठ प्रतिष्ठित कर राज्य शासन किया है।

मोताई नामक स्थान में राजधानी महाराज जय माणिक्य(द्वितीय) ने इन्द्र माणिक्य के प्रतियोगी के रूप में मोताई नाम की एक जगह पर एक नया राज पाट स्थापन किया था, किन्तु वह अधिक दिनों तक स्थायी न हो सका। उन दिनों महाराज इन्द्र माणिक्य की राजधानी उदयपुर में ही थी। इसके कुछ दिनों के पश्चात राज्य के दक्षिण आंचल में मुगलों का शासन प्रतिष्ठित हुआ। इस समय युवराज कृष्णमणि ठाकुर (बाद में कृष्ण माणिक्य) ने सपरिवार राजधानी का परित्याग कर नाना स्थलों का परिभ्रमण कर अशेष विडम्बना भोग कर, बहुत सी कोशिशों के फलस्वरूप पुनः अधिकार स्थापना कर सके। उनकी राजधानी त्यागने के पश्चात कुछ दिनों तक महाराज अमर माणिक्य के अध्युषित राताछडा नाम के एक जगह पर वास भवन निर्माण कराके वहाँ रह रहे थे। वहाँ पर अधिक दिनों तक रहना उनके भाग्य में नहीं हुआ। शत्रु के द्वारा विताडित होने पर नाना जगह रहने के पश्चात मनतला परगना में आकर एक घर का निर्माण किया और वहीं रहकर राज्य अधिकार की कोशिश करने लगे। कृष्णमणि ने राज्य प्राप्ति के साथ साथ ही उदयपुर

चल–145
राजधानी का परित्याग किया था।

अगरतल्ला में राजधानी

उन्होने देखा कि मघ और मुसलमानों के आक्रमण से उदयपुर नगरी की रक्षा करना बड़ा ही कठिन हो गया है। इसलिए उन्होंने उस राजधानी को परित्याग करके 1170 त्रिपुराब्द तदनुसार 1760 ई0 सन् में अगरतल्ला में नया राज पाट की स्थापना की। तब से इसी जगह राजधानी का स्थायित्व हो गया, उदयपुर के राजधानी का गौरव विलुप्त हो गया।

राज्य की सीमा

राजमाला चतुर्थ लहर में सन्निविष्ट घटनाओं के समय राज्य की सीमा का विशेष कोई परिवर्तन नहीं हुआ। समतल क्षेत्र –जो मुगलों के शासनाधीन और जमींदारी में तबदील हो गया था, वह हमेशा के लिए राज्य के अंकच्युत होकर त्रिपुरेश्वरों की जमीदारी में परिवर्तित हो गया था। किन्तु राज्य की सीमा के विषय में कोई कमी या वृद्धि न होने पर भी एक के बाद एक अन्तर्विप्लव और बाहरी विप्लव के फलस्वरूप राज्य की बहुत ही दुरावस्था हो गई थी। इसका विवरण यथा स्थान दिया गया हैं।

प्रजाओं की राजानुरक्ति

राजपरिवार के व्यक्तियों में बहुत से राजा एवं राज्य के अनिष्ट चिन्ता में प्रवृत्त होने के निदर्शन आलोच्य लहर में बहुत से मिलेगें। किन्तु त्रिपुरा और कुकी आदि पार्वत्य प्रजा वृन्दों की राज भक्ति और राजा के प्रति अनुरक्ति बहुत ही विस्मयकारी है। महाराज कृष्ण माणिक्य के राज्य प्राप्ति के पूर्व के समय प्रजाओं के इस असाधारण गुण का प्रकृष्ट परिचय मिलता है। उन दिनों पार्वत्य प्रजागण राज्य के मेरूदण्ड स्वरूप थे एवं उनके बाहुबल से त्रिपुरा की राजश्री अम्लान थी।

प्राकृतिक उपद्रव

संक्रामक रोगो का प्रभाव

जल प्लावन, दुर्भिक्ष एवं संक्रामक व्याधिओं का प्रकोप समय समय राज्य में भयंकर मूर्ति धारण करता था। संक्रामक पीडाओं में बसंत रोग की बात ही विशेष उल्लेखनीय थी। राजमाला की पहले की लहरों की आलोचना में देखा गया है कि अनेक राजाओं को भी इस रोग से जीवन विसर्जन देना पड़ा है। आलोच्य चतुर्थ लहर में मिलता है कि महाराज छत्र माणिक्य ने बसंत रोग से ग्रसित होकर लोक लीला समाप्त की थी। सतर्कता से सुरक्षित राज देह भी रोगाक्रांत हो जाता था। इस रोग का प्रकोप समय समय पर दुर्दमनीय हो उठता था। बसंत की टीका ग्रहण न करने की कारण यह रोग भीषण मूर्ति धारण करता था। हालातों की आलोचना से यही स्पष्ट होता है कि

चल–146
वर्तमान समय में पार्वत्य जातियों में बहुत से लोग गो–बीज की टीका लेना नहीं चाहते।

जल प्लावन और दुर्भिक्ष

महाराज कृष्ण माणिक्य की मृत्यु के पश्चात उनकी महिषी महारानी जाहुवी महादेवी ने दो साल राज्य शासन किया था। इस समय (1194 त्रिपुराब्द) त्रिपुरा में भीषण जल प्लावन से सभी फसलें विनष्ट होने पर राज्य में भयंकर दुर्भिक्ष आरंभ हुआ था। इस दुर्भिक्ष की कथा राजमाला में जिस भाषा कही गई है उसका आभाष हम नीचे दे रहे हैं –

एगार श चौरानब्बाई त्रिपुरेर सन्।
अन्नाभावे प्रजा क्षिति होइलो निधन।।
मूल्य दिया अन्न नाहि पाय कोन स्थान।
पिता पुत्र संबंधेते अन्न नाहि दान।।
दुखित कांगाली जतो स्नेह दूर कोरे।
ईष्ट मित्र पुत्र कन्या त्यागये सत्वरे।।
सहस्रावधि मृत्यु होय अन्नेर अभावे।
बिना मूल्ये बिक्री लोक देखि असंभबे।।

अर्थात, ''1194 त्रिपुराब्द में अन्नाभाव से पृथ्वी के बहुत लोगों का निधन हो गया। कोई भी जगह ऐसी नहीं थी जहाँ मूल्य देकर अन्न मिलता हो। पिता पुत्र का भी ऐसा सम्बन्ध हो गया कि कोई किसी को अन्न दान नहीं कर रहा था। दुखी कांगाली के प्रति भी किसी को स्नेह ममता नहीं रही। लोग ईष्ट मित्र, पुत्र कन्या को तुरन्त त्यागने लगे। हजारों के ऊपर लोग मर गये। मूल्य के बिना लोग आदमियों को भी बेचना चाहते थे – यह असंभव था। कौन किसे खिलायेगा।''

यह घटना त्रिपुरा सन् 1194 की है। 1195 सन् में भी ऐसी ही घटना घटी थी।

जल धौत धान्य नष्ट दुर्भिक्ष जे मन।
एगार श पंचसनब्बई होइछे तेमन।।

''पानी में विनष्ट जैसे धान होता है। उसी तरह 1195 त्रिपुर सन् में दुर्भिक्ष वैसा ही हुआ।''

एक के बाद एक अर्थात दो सालों के भीषण दुर्भिक्ष से राज्य की जो सोचनीय अवस्था हुई थी। ऊपर दिये गये राजमाला के वाक्यों से उसके स्पष्ट विवृति मिल रही है। इस विषय में और कोई बात कहना निष्प्रयोजन है।

शिल्प चर्चा और शिल्पोन्नति

शिल्प चर्चा व राजा सुबडाई

शिल्प चर्चा त्रिपुरा का चिराभ्यस्त उन्नतिजनक मुखर सत्कार्य है। त्रिपुर राज्य के प्रथम श्रृंखलाबद्धकारी महाराज त्रिलोचन(सुबडाई राजा) शिल्प चर्चा के आदि प्रवर्तक हैं।

यह कलियुग के प्रारंभ काल की कथा है। उसके बाद से ही राज्य में नानाविध शिल्प कार्य का प्रचलन और क्रमोन्नति का स्त्रोत चला आया है।

पार्वत्य प्रजाओं में बहुत तरह के शिल्प आलोचना देखी गई है। यह महाराज त्रिलोचन द्वारा प्रदत्त उत्साह का ही फल लगता है। इस सर्वगुणालंकृत नरपति के प्रति अभी भी पार्वत्य असभ्य समाज सर्वान्तःकरण से

चल–147
जो श्रद्धांजलि अर्पण कर रहे हैं, सभ्य समाज में उसका दृष्टांत सुदुर्लभ है। हम सभ्यता के अभिमान में अंधे होकर जिन्हें असभ्य और बर्बर कहकर उपेक्षा की नजरों से देखते हैं, उनके कारू नैपुण्य एक बार मात्र दर्शन करने से वह धारणा निश्चय ही परित्याग करना होगा, सभ्यता और शिक्षाभिमानी व्यक्ति मात्र को ही उनके इस गुण के यहाँ मस्तक नत करना ही पड़ेगा। इन सभी गुणों के मूलाधार महाराज त्रिलोचन (सुबडाई राजा) थे। अतएव पार्वत्य समाज आज तक उन्हें भूल नहीं सकी। अनेक समाज में प्रचलित त्रिपुरा भाषा जात जितनी रूप कथायें हम ने सुनी हैं उनमें हरेक में सुबडाई राजा का नाम एवं अनेक प्रचलित शिल्प कार्यो का विवरण पाकर हमें विस्मय और आनन्द हुआ है। रूप कथाओं में उनके जुड़ जाने से अशिक्षित परिवार के आवालबृद्ध वनिता के ह्रदय में सुपवित्र ''सुबडाई'' नाम चिरजागरूक है। उनका विश्वास है वस्त्र कयन के प्रधान उपादान कपास महाराज सुबडाई के प्रयत्न से राज्य में अनेक जगह उत्पादन का सूत्रपात हुआ था एवं जितने तरह के शिल्प प्रचलित हैं सुबडाई राजा ही उसके प्रर्वतक हैं।

शिल्प कार्य का उत्कर्ष विधान इसके बावजूद भी राजाओं की कृपा से ही शिल्प का उत्कर्ष सफल होकर आ रहा है और बहुत से उत्कृष्ट शिल्प राज अन्तःपुर से बाहर प्रचारित हुआ है। महाराज आचंग फा की महिषी राजपरिवार में शिल्प कार्य की चर्चा की वृद्धि की थी।(1) महाराज खिचोंग फा की महिषी स्वहस्त से शिल्प शिल्पकार्य करके महिलाओं को शिक्षा प्रदान करती थी। बाद में भी राज अन्तःपुर में शिल्पचर्चा पूर्ण मात्रा में प्रचलित रहने के निदर्शन मिलते हैं। त्रिपुर राज्य में प्रचलित प्रधान शिल्प कार्यों के स्थूल विवरण यहाँ दिये जा रहे हैं।

बयन शिल्प त्रिपुरा के शिल्प कार्यों में बयन शिल्प (बुनाई के शिल्प) सबसे पहले उल्लेख योग्य हैं। इस शिल्प का विवरण राजमाला के पहले की लहरों में यथा संभव दिया गया है। यहाँ पर अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। अरण्यवासी त्रिपुरा, कुकी, हालाम, और रियां आदि सभी श्रेणी की महिलायें अपने अपने परिवार के लिए साडी, पाँछडा, दुबड़ा, चादर आदि हमेशा व्यवहार के वस्त्र समूह स्वयं बुन लेती हैं। यह कार्य स्त्रीसमूह में प्रचलित है। बुनाई के शिल्प में बक्ष आवरणी या बक्ष बन्धनी रिया (चोली) शिल्प नैपुण्य में किसी तरह का उच्च स्थान प्राप्त करने योग्य है। राजमाला के प्रथम और द्वितीय लहर में इसकी आलोचना की गई है। त्रिपुरा के प्रधान मंत्री स्वर्गीय धनन्जय ठाकुर महोदय ने ''रिया'' शब्द को संस्कृत शब्द का

---

(1) राजमाला प्रथम लहर 115पृ

अपभ्रंश माना है। उनके मतानुसार ह्री – हा (ह्री – लज्जा, ही – त्याग या निवारण) शब्द से "रिया" शब्द का प्रचलन हुआ है। रमणीगण इस वस्त्र से वक्षावृत करके लज्जा निवारण करती हैं, इसलिए इसका नाम "रिया" हो गया। यह सिद्धान्त अयौक्तिक नहीं लगता। त्रिपुरा, कुकी और हालाम आदि की भाषा आलोचना करने से संस्कृत के अनेक शब्द पाये जाते हैं।

त्रिपुरा में इस समय भी बुनाई शिल्प का प्रचलन कितना अधिक है इसका आँकडा विगत 1931 ई0 के जनगणना कार्य में उभर आई है। इसकी आलोचना से यह स्पष्ट हो जायेगा। राज्य के पहाड़ी इलाके 98,968 स्त्रियों में 1,925 छोटी उम्र की लड़कियों की संख्या को बाद(कम) देने पर ताँत परिचालन की उपयोगी संख्या 97,043 होती है। उनमें 41,424 ताँत और 41,119 चरखे चल रहे हैं। विदेशी सूते के प्रभाव से चरखे का प्रचलन बहुत कम हो गया है।

(यह स्वाधीनता प्राप्ति के पहले के बहुत आँकडें हैं। इन दिनों इनकी संख्या बहुत अधिक है। बहुत तरह की सुविधायें भी दी गई है। सरकारी तौर पर फिलहाल बहुत सारी सुविधायें दी जा रही हैं और उनमें आधुनिक प्रयुक्तियों से नई निखार भी आई है। अनुवादक)

बाँस और बेंत शिल्प बाँस और बेंत द्वारा नाना तरह के सुदृश्य और टिकाउ चीजें बनाई जाती हैं। इस स्तरीय शिल्प कलाओं में टेबल, नाना तरह के आसन, आर्वजनाओं के रखने की झूडियाँ, बाजार करने की झूडिया, रद्दी कागजों से बने सामान, पिटारी, आलोकाधार, डालियाँ, कूला, धुचनी, लाई, औड़ा, धारी, सूप, चटाई और पंखे आदि प्रमुख हैं। कारू कार्य खंचित घर के लिए बेडा, टंगृह, तोरणद्वार, पार्टीशन छोटी छोटी दुकानों के लिए घर, विवाह वेदी के लिए बेडा आदि देखने पर इन इनके शिल्प कला के निपुणता का परिचय मिलता है।

काष्ठ शिल्प त्रिपुरा का काष्ठ शिल्प भी उल्लेख योग्य है। पर्वतवासी वृहदाकार वृक्षों की खुदाई करके छोटी या बडी नाव बनाते हैं। ये दोनों तरह की नौकायें बहुत टिकाउ होती हैं और इनके पेंदी का हिस्सा चपटा होने की वजह से नावें थोडे पानी में भी चल सकती हैं। पानी के नीचे दबे वृक्षों या पत्थर की चट्टानों के आघात से भी इनकी कोई क्षति नहीं होती। पहाड़ी इलाकों की नदियों के लिए ये विशेष उपयोगी होती है। महाराज विजय माणिक्य की रणतरियों में दूसरी जाति की नौकाओं के साथ इन दो जाति की नौकायें शामिल होने के प्रमाण राजमाला के द्वितीय लहर में मिलते हैं।

टेबल, चेयर, आलमारी, ताक, केबिनेट स्क्रीन, चौकी, पीढी, गमला आदि रोज व्यवहार की सुन्दर सुन्दर चीजें काष्ठ द्वारा बनाई जाती हैं। सितार, एसराज आदि नाना तरह के वाद्य यन्त्र भी लकड़ी द्वारा बनाये जाते हैं। आनन्द की बात

---

(1) राजमाला द्वितीय लहर 117–118पृ

चल–149

यह है कि राज परिवार के व्यक्ति भी इस कार्य में सुदक्ष एवं प्रचुर श्रम स्वीकार करके स्वहस्त अनेक कार्य सम्पादन करते हैं।

धातु शिल्प त्रिपुरा के धातु शिल्प की बातें यहाँ पर उल्लेख करने योग्य हैं। राजमाला द्वितीय लहर में पाया गया है, महाराज विजय माणिक्य ध्वज घाट से बानिया (स्वर्णवनिक) (सोनार) और कांस्य वनिकों (ताँबा, पीतल आदि के काम करने वाले) को लाकर राज्य में काँसा और पीतल के बर्तन सोने से बने नाना तरह के आभरण निर्माण का पथ प्रशस्त किया था। ये सभी शिल्प कलायें दिनों दिन उन्नत होती हुई त्रिपुरा राज्य को श्रीसम्पन्न किया है। लोहे से दाव, कास्तिया, खंता, कुदाल, कुठार, कटारी टाक्कल (त्रिपुरा के कुछ पहाड़ी कुकी आदि के व्यवहार में लाने वाले एक तरह के दाव) आदि गृहस्थ के रोज व्यवहार में आने वाली चीजें बनाई जाती हैं। बल्लम, तलवार, कृपाण आदि अस्त्र भी बनाते उन्हें देखा गया है।

मृतिका शिल्प हाँडी, सड़ा, कलस, घट, थाली, गिलास, सुराही आदि विविध प्रकार के बर्तन तथा प्रयोजनीय चीजें मिट्टी से बनाई जाती हैं। बहुत तरह के खिलौने और देव देवियों की मूर्तियों का निर्माण भी यहाँ विशेष रूप से उल्लेख योग्य है। चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने मिट्टी जिसे **Kaolin** कहा जाता है अगरतल्ला के करीब ही पाई जाती है। इसके द्वारा निर्मित चाय के प्याले और बर्तन उत्कृष्ट किस्म के बनाते देखे गये हैं।

दन्त व श्रृंग शिल्प गजदन्त द्वारा कोटा, बक्स, चेयर, खिलौने, मूर्तियां और विविध प्रकार के शिल्प कलाओं से समृद्ध वस्तुयें तैयार होती हैं। राज सिंहासन और राज दरबार के व्यवहार योग्य राजासन गज दंत जड़ित है। इसके अलावा नाना तरह के कारूकार्य समन्वित चीजें गजदन्त द्वारा बनाई जाती थी। राजमाला तृतीय लहर में इस तरह की चीजों के आदर्श वहाँ दिये गये हैं।

हिरन, भैंसे और गबय ''एक तरह के जंगली जानवर'' के सिंगों द्वारा नित्य व्यवहार में आने वाले वस्तुओं का भी निर्माण किया जाता है। सज्जा के अनेक उपकरण इनके द्वारा बनाये जाते हैं।

चर्म शिल्प बकरी, गौ, भेड़ और भैंसों के चमडे को पकाकर उसके द्वारा जूते, चट्टी आदि नाना तरह की वस्तुयें बनती हैं। उनमें जूते ही विशेष रूप से उल्लेख योग्य हैं। इाके अतिरिक्त गजचर्म का उपयोग शुरु हुआ था।इस तरह के चमड़े से बने बाक्स, बैठने के आसन आदि नाम उल्लेख योग्य है।

विविध शिल्प खड, घास, फूस और लताओं से नाना तरह के वस्तुयें बनाई जाती है। सीवन शिल्प त्रिपुरा की उल्लेखयोग्य सम्पदा है। इन सभी चीजों सम्यक उल्लेख करने में एक पृथक स्वतन्त्र ग्रंथ प्रणयन की आवश्यकता है।

चल–150

समाज तत्व

राजमाला चतुर्थ लहर की घटनाओं के समकालीन समाज की अवस्था कैसी थी, उसे सम्यक रूप से अवगत होने का कोई उपाय नहीं है। मामूली तौर से यह समझा जाता है कि साधारणतः सभी देव द्विज में श्रद्धावान और सत् कर्मनिष्ठ थे। राज परिवार के अनेक व्यक्तिओं को राज्य लाभ के लिए प्रयासी होकर असंगत पथ का सहारा लेते देखा गया है पर फिर भी वे धर्म कार्यानुष्ठान से विमुख नहीं थे। इस समय भी पहले की तरह मदिरा का प्रभाव बहुत अधिक प्रचलित रहने के प्रमाण मिलते हैं।

समाज में परिष्कृत नमक के व्यवहार इस युग की समाज सम्बन्धीय एक बात विशेष रूप से उल्लेखनीय योग्य है। महाराज गोविन्द माणिक्य के शासन काल के पहले त्रिपुरावासी परिष्कृत नमक के व्यवहार की बात तो दूर रही, यह चीज कभी उनकी दृष्टि गोचर हुई थी या नहीं इसमें भी सन्देह है। बंगाल की खाड़ी तक जिस राज्य की विस्तृत सीमा थी, उस राज्य में कभी नमक का अभाव हुआ, ऐसी बात सोची भी नहीं जा सकती। खासतौर से त्रिपुर राज्य में सामुद्रिक लवण के अलावा उद्‌भिज लवण या खनिज लवण के व्यवहार की बात स्मरणातीत काल से चली आ रही है। इस समय भी लवणाक्त उद्‌भिज पदार्थ एवं नमक खान राज में बहुत है एवं उनसे खार व नमक संग्रह करने की प्रणाली सबकी जानकारी में है। इसके अलावा किसी किसी पहाड़ी निर्झारिणी का पानी इतना क्षारधर्मी है कि उसके द्वारा रसोई बनाने पर नमक की कोई जरूरत ही नहीं पड़ती। इन सभी विवरणों की आलोचना से जाना जाता है कि राज्य में कभी भी नमक का अभाव नहीं हुआ। किन्तु अपरिष्कृत और कदर्य था, इसमें कोई संदेह नही।

महाराज गोविन्द माणिक्य के समय एक वनिक ने राज्य में शुभ्र और परिष्कृत नमक का प्रथम आमद किया। त्रिपुरेश्वर ने हाथी के बदले में उस नमक को खरीदा था। इस बारे में राजमाला में लिखा है।

एक जन सदागरे आनिलो लबण।	ले आया नमक एक सौदागर।
हस्ती दिया सेई लबण लोइलो राजन।।	बदले में हस्ती दे लाये नमक दोकर।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 13पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 13पृ

(इसका अर्थ हम पहले ही दे चुके हैं।)

महाराज क्षत्र माणिक्य के वंशजों के यहाँ सुरक्षित पुस्तक के वाक्य अधिकतर प्रांजल और परिष्कृत है। उसके कुछ अंश नीचे उद्धृत किये जाते है।

धनवन्त एक साधु देशेते आसिलो।
दुई सहस्त्र मन लवन नौकाये आनिलो।।

(इसका अर्थ भी पहले दिया गया है।)

चल–151

राजार साक्षाते साधु पत्र पठाइलो। पत्र शुनि महाराज सन्तोष होइलो।।
उपयुक्त चर पाठाइलो तार काछे। लबणेर किरूप मूल्य कहो सविशेषे।।
आनिछि राजार देशे हस्तीर कारण। लवण आनिछि आमि दुई सहस्र मन।।
साधुर एमत कथा राजाय सुनिया। साधुरे दिलेक हस्ती लबण राखिया।।

(इसका अर्थ पृष्ठ 14 पर दे चुके हैं।)

उन दिनों विनिमय वाणिज्य का प्रचलन था। चन्द्रधर और धनपति आदि राजकल्प प्राचीन वणिक गण विनिमय वाणिज्य के फलस्वरूप इस तरह धन कुबेर हो गये थे, प्राचीन साहित्यादि व्यक्तियों को यह ज्ञात है। त्रिपुरेश्वर ने दो हजार मन नमक के बदले हाथी दे दिया था। चन्द्रधर के ''जीरा के बदले हीरा'' लाभ की तुलना में इसे अतिरिक्त मूल्य कहा नहीं जा सकता। उन दिनों त्रिपुर राज्य में हाथी का वैभव इतना अधिक था कि साधारण गृहस्थ के गौ, बकरियों का जिस तरह मूल्य की विवेचना की जाती थी, राजा हाथी को उससे अधिक मूल्यवान नहीं मानते थे। राज्य में जंगली हाथियों की भरमार थी। हर साल बहुत से हाथियों को पकड़ने की व्यवस्था थी और त्रिपुरेश्वर गण बिना मूल्य के बहुत से हस्ती सम्पद के अधिकारी थे।

इस मूल्यवान और सुदुर्लभ वस्तु खरीदकर उदार हृदय गोविन्द माणिक्य ने अकेले भोग नहीं किया, अथवा केवल अपने परिवार में उसे वितरण किया है। ऐसी बात नहीं है।

उदयपुर प्रजा जतो पात्र मित्रगण। उदयपुर के प्रजा और पात्र मित्रगण।
सकलके महाराजा दिलो से लबण।। सभी को महाराजा ने दिया वह लवण।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 13पृ राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 13पृ

(इसका अर्थ पहले 13 पृष्ठ में दे दिया गया है।)

इस नमक के विवरण के साथ साथ ''निमकेर सत्य'' अर्थात नमक का सत्य पालन की बात भी सबको स्मरण करा दी गई थी। यथा –

राजा बोले एई लबण खाव जेई जन। नृप ने कहा यह नमक खायेगें जो सभी जन।
आमा वंशे दुष्ट भाव ना करो कखन।। मेरे वंश पर दुष्ट भावना न करो किसी क्षण।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 13पृ राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 13पृ

(इसका अर्थ पहले 13 पृष्ठ में दे दिया गया है।)

इसी समय से त्रिपुर राज्य में परिष्कृत नमक की आमदनी और व्यवहार आरम्भ हुआ था – यह स्पष्ट रूप से समझा जा रहा है। बनिये का लाया गया नमक अभिनव एवं आश्चर्यजनक मन में न लगने पर, उसे हाथी के बदले उसे ग्रहण करना संभव नहीं होता।

चल–152

शासन तंत्र

राजामाला चतुर्थ लहर में दी गई घटनाओं के समकालीन समय में, वजीर, सुबेदार और दीवान पदवीधारी प्रधान कर्मचारियों के द्वारा शासन परिषद गठित हुआ था। किसी किसी राजा के शासनकाल में युवराजों द्वारा राज्य शासित होने के प्रमाण भी मिल रहे है। पहले जिस पद्धति को अवलम्बन बनाकर शासन तन्त्र गठित होता था, इस समय उसमें कोई विशेष परिवर्तन हुआ है, ऐसा नहीं लगता।

शासन प्रणाली

शासन परिषद की अवस्था महाराज रत्न माणिक्य(प्रथम) ने मुसलमान शासन के अनुकरण से जिस शासन प्रणाली का राज्य में प्रर्वतन किया था, उसी समय तक उसके प्रबल रहने के प्रमाण मिलते है। काल स्रोत के आवर्तन के साथ साथ, समय समय पर शासन पद्धति कालोपयोगी करने के लिए अनुरोध पर साधारण से परिवर्तन होने पर भी उससे मूल नीति का कोई व्यतिक्रम नहीं हुआ। पहले से ही सेनापतियों के हाथों से शासनकार्य हटाकर वजीर, मंत्री और दीवान आदि पद पर नियोजित कर्मचारियों के हाथों में सौंपा गया था। इस समय भी यही प्रथा प्रबल थी। आवश्यकता पड़ने पर शासन परिषद में नियुक्त कर्मचारियों को भी युद्ध क्षेत्र में उतरने को मजबूर होना पड़ता था। अतएव उन दिनों सैनिक और शासन विभाग को सम्पूर्ण रूप से पृथक किया गया था, यह कहा नहीं जा सकता है, पर पहले की तरह सेनापतियों के हाथों में शासन और सैनिक विभाग का भार अविच्छिन्न भाव से न्यस्त नहीं था। इसके निदर्शन मिलते हैं।

विचार कार्य की अवस्था विचार कार्य के लिए उस समय भी कानून बनाना या अदालत की प्रतिष्ठा की कोई व्यवस्था नहीं थी। शासन करने वाले ही विचार के अधिकारी थे। इस विषय में अर्थी और प्रत्यार्थी (वादी और विवादी) किसी की भी, किसी तरह से व्यय की आवश्यकता नहीं होती थी। अभियोग उपस्थित करने के समय अर्थी को राजेश्वर के नजराने के रूप में यत्नसामान्य कुछ व्यय वहन करना पड़ता था। यह प्रथा प्रजाओं के लिए हितकारी थी एवं विचार कार्यतः सुनियत्रिंत था, यही समझा जाता है।

अपराधी की दण्ड व्यवस्था भयानक अपराध करने पर किसी के प्राण दण्ड का अपराध होने पर, प्रकाश्य जगह पर सबके सामने अपराधी का सिर छेद होता था। उस समय गुरु या लघु अपराध विवेचना पर कैद करने की व्यवस्था थी, किन्तु जेल में रहने का कोई विधान नहीं था। कैदी सरकारी कर्मचारी के नजरों में रहकर आदिष्ट कार्यो को करते थे। इस दण्ड भोग के समय वे सरकार से भरण पोषण पाते थे।

चल–153

राजकर राजमाला चतुर्थ लहर के समय पार्वत्य प्रजागण पूर्ववत वार्षिक भेंट, निर्दिष्ट राज कार्य सम्पादन द्वारा राजकर परिशोध करते थे। उस समय भी उनके मुद्रा कर देने की प्रथा चालू नहीं हुई थी। समतल प्रदेश के भूमि का राजस्व अति अल्प मात्रा में ग्रहण किये जाते थे। महाराज गोविन्द माणिक्य ने भूमि का प्रति कानी चार आना राजस्व का विधान और उसे स्मरणीय करने के अभिप्राय से सिकी मुद्रा(चार आना) का प्रचलन किया था। इस प्रसंग में राजमाला गोविन्द माणिक्य खण्ड में है–

चारि आना काणि भूमि कोरे राजकर।	चार आना कानि प्रति किया राजकर।
चारि आना निज नामे मारिलो मोहर।।	चार आना अपने नाम से लगा दिया मोहर।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 12पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 12पृ

अर्थात, ''चार आना प्रतिकानी भूमिकर अपने नाम से चार आने का मोहर बनाया।''

इस उक्ति से जाना जाता है कि प्रजाओं को कर के बोझ से पीड़ित करना राजाओं का अभिप्रेत नहीं था। इस कारणवश महाराज गोविन्द प्रतिकानी चार आना कर निर्धारण कर अपने स्मृति रक्षार्थ मुद्रा का प्रचलन किया था। केवल यही करके वे चुप बैठे नहीं रहे, भविष्य के राजाओं की दृष्टि जैसे इधर पड़े इसकी व्यवस्था भी उन्होंने किया था। उन्होंने कहा है, मेरे वंश में जो व्यक्ति कानि प्रति चार आना भूमि का राजस्व ग्रहण करेगा वही अपने नाम से चार आने की मुद्रा प्रचलन कर सकेगा। इसके अलावा कोई भी करग्राही राजा निजी सिकी मुद्रा प्रचार का अधिकारी नहीं होगा।(1) उसी समय से त्रिपुरेश्वर गण यह आदेश वाणी का प्रतिपालन करते आ रहे है।

राज्यकर की अवधारण मुसलमानों के प्रभाव के प्रारम्भ काल से ही वे लोग त्रिपुरेश्वर से कर लेने के लिए कोशिश कर रहे थे। महाराज राजधर माणिक्य, यशोधर माणिक्य, द्वितीय कल्याण मणिक्य आदि राजाओं के शासन काल में त्रिपुर राज्य से हस्तीकर ग्रहण करने के लिए मुसलमान शासकों ने बार बार कोशिशों की है। इसलिए युद्ध भी बहुत हुए है, लेकिन वे सफल नहीं हो सके। महाराज गोविन्द माणिक्य के शासनकाल में राज्य के कर स्वरूप पाँच हाथी देने के लिए नियम निर्धारित किया गया, उनमें एक हाथी का आधा दाम त्रिपुरेश्वर को मिलता था और साढे चार हाथी मुगल

---

(1) आमा वंशे चारि आना काणि कर लय।	मेरे वंश में चार आना होता है कानि कर।
सेई राजा चारि आनी मारिबो निश्चय।।	वही राजा चार आना लेगे जोड़कर।।
आर राजार सिकिर कार्य होयेत जखन।	और राजा एक चौथाई कार्य होगा जब।
गोविन्द माणिक्येर सिकि कोरिबो तखन।।	गोविन्दमाणिक्य का सिकि कार्य करेगा तब।।
राजार निषेध वाणी शुनहो राजन।	राजा की निषेध वाणी सुनो हे राजन।
अन्य राजा सिकि मोहर ना मारे कखन।।	अन्य राजा चारआने का न मारे कभी मुहर।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड12पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड12पृ

अर्थात, ''हमारे वंश में एक कानि का चार आना कर जो राजा लेगा वही चार आने के सिक्के पर अपने नाम का मोहर लगा सकेगा और जो राजा ऐसा नहीं करेगा वह जैसे अपने नाम का मोहर नहीं लगा सकेगा।

सरकार को मिलती थी। बाद में हस्तीकर की मात्रा बढकर साढे चार हाथी के बदले 53 हाथी हुई थी। अन्त में हाथी के बदले मूल्य के हिसाब से हर हस्ती निमित्त एक हजार रूपया निर्धारित किया गया। राज्य के पश्चिमांचल मुसलमानों के कर के अधीन हो जाने के पश्चात और वह अंश त्रिपुरेश्वरों के जमीदारी के रूप में बदल जाने पर यह प्रथा बन्द हो गई। इस विषय का विशद विवरण प्रासांगिक क्रम में क्रमशः आलोचित होगा।

कूटनीति का अनुसरण — आवश्यकता पड़ने पर त्रिपुरेश्वर गण कूटनीति का सहारा लेने पर कभी कुठिंत नहीं होते थे। महाराज धन्य माणिक्य और विजय माणिक्य के कूटनीति का विवरण राजमाला के द्वितीय लहर में मिला है। आलोच्य लहर में महाराज द्वितीय धर्म माणिक्य के शासन काल में सैनिक विभाग में बहुत सी मघ सेनायें थी एवं राज्य में मघ प्रजा की भी संख्या अत्यधिक बढ़ गई थी। ये अपने संख्याधिक्य के कारण दलबद्ध होकर हर पग पर राजाज्ञा की अवहेलना करने लगे। महाराज धर्म ने सोचा, इन्हें अभी ही दमन करना एकान्त आवश्यक है। किन्तु कूटनीति का सहारा लिये बिना संघबद्ध प्रबल शक्ति को निर्यातन करना आसान नहीं है। इसलिए उनके दमन के लिए प्रकाश्य में किसी तरह का अनुष्ठान न करके सदय व्यवहार से राज भवन में आहार के लिए निमंत्रण किया गया। राजा के आमंत्रण की रक्षा के लिए सभी विशेष आग्रह के साथ उपस्थित हुए थे। प्रचुर मात्रा में मदिरा और मांस इत्यादि की व्यवस्था की गई थी और उन्हें तुष्ट किया गया। अतिरिक्त मदिरा पान कर वे विह्वल हो पड़ने के बाद सदर दरवाजे का फाटक बन्द कर दिया गया और अधिकांश अपना प्राण न बचा सके। इनके कुछ लोग किले की दीवार कूद कर अपनी प्राण रक्षा कर पाए। बाकी सभी ने नंगी तलवार के आगे अपना जीवन विसर्जन किया। इस घटना के पश्चात मघ प्रजाओं ने वश्यता स्वीकार और वे नियोजित हुए थे।

त्रिपुरेश्वरगणों की उदारता — उस समय सभी त्रिपुरेश्वर बड़े ही उदार चेतना सम्पन्न थे। उनमें महाराज गोविन्द माणिक्य का नाम सबसे पहले उल्लेख योग्य है। वे पिता के सिंहासन पर अधिरूढ हुए, किन्तु उनके सौतेले भाई नक्षत्र राय इससे संतुष्ट नहीं थे। भ्रातृ स्नेह वश महाराज गोविन्द ने उनके इस मानसिकता को जानते हुए भी, सरल चित्त से उन्हें प्रतिनिधि के दायित्व पूर्ण कार्य में नियोग कर उन्हें नवाब के दरबार में भेजा। भ्राता के मन राज्य भोग लालसा रहने पर भी उनके द्वारा किसी तरह की अनिष्ट आशंका को, उन्होंने अपने मन में कोई स्थान नहीं दिया। किन्तु इसी कार्य के द्वारा नक्षत्र राय को मनोवांछना पूर्ण करने का पथ भी सुगम कर दिया। वे एक साल तक नवाब के दरबार में रहकर विशेष प्रभाव पैदा कर लिया था।

चल–155

उन्होंने महाराज गोविन्द को सिंहासन से हटाकर स्वयं राज्य प्राप्ति के लिए कोशिशों में जुट गये।

थोड़े दिनों में ही बंगेश्वर की दी हुई सेनाओं के साथ नक्षत्र राय ने त्रिपुरा के विरूद्ध युद्ध यात्रा किया। गोविन्द माणिक्य को पहले ही यह खबर मिल चुकी थी। मंत्रियों ने युद्धादेश के निमित्त बार बार अनुमति प्रार्थना करने लगे, किन्तु महाराज इससे सहमत नहीं हुए। उन्होंने कहा –

भाई संगे कोरि युद्ध किसेर कारण।।	भ्राता संग युद्ध करूँ मैं किस कारण।।
आत्म कलह होइले प्रजा नष्ट होय।	आत्म कलह से प्रजा होती नष्ट।
पापे त होइबो स्थिति बोलिलो निश्चय।।	पाप से बिगडे स्थिति यही है स्पष्ट।।
राजत्व कोरिलो आमि बर्ष परिमाण।	राजत्व किया हूँ एक वर्ष परिमाण।
एखनि राजत्व ज्ञान ताहान विधान।।	अभी राजत्व ज्ञान उनका विधान।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 6–7पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 6–7पृ

(इसका भावार्थ 138 पृष्ठ भी पर दिया गया है।)

राजर्षि गोविन्द भ्रातृ रक्त से अनुरंजित सिंहासन भोग करने से अपेक्षा राज्य त्याग करना ही उचित समझा। उन्होंने भ्राता के हाथों राज्य भार समर्पण कर, महिषी का हाथ पकड़ निसम्बल अवस्था में बिना किसी तरह की मोह ममता किये राज्य छोड़ चले गये। यह महाराज गोविन्द माणिक्य का कोई साधारण औदार्य का परिचय नहीं है।

उनकी उदारता के और भी बहुत से उदाहरण है। सम्राट शाहजाँह के पुत्र शाहसुजा गोविन्द माणिक्य के विरूद्ध अस्त्र धारण कर उन्हें विपन्न किया था। महाराज गोविन्द ने नितान्त निराश्रय अवस्था में शाहसुजा के आपातकाल में उन्हें आश्रय दान और यथोचित सहायता करने में जरा सा भी कुंठा बोध नहीं किया। विशेषतः उनके नाम को स्मरणीय करने के लिए एक मस्जिद की प्रतिष्ठा द्वारा अलौकिक औदार्य का परिचय प्रदान किया है। इसका विवरण इसके बाद विवृत होगा।

महाराज गोविन्द के दूसरी बार राजत्व प्राप्ति के पश्चात, अपने प्रतिद्वन्दी छत्र माणिक्य के (नक्षत्र राय) पुत्र उत्सव राय को नवाब दरबार में प्रतिभू स्वरूप भेजने में बिन्दु मात्र भी द्विधा बोध नहीं किया, यह एक असाधारण औदार्य और अलौकिक अमायिकता का परिचायक नहीं है क्या?

महाराज गोविन्द ''जीवे दया'' (प्राणी के प्रति दया) को सर्वश्रेष्ठ धर्म माना था। उन्होंने प्राणी हिंसा वर्जन के उद्देश्य से देवालयों में जीव बलि पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। चतुर्दश देवता के और त्रिपुर सुन्दरी के मन्दिर के महंत (चंताई) इस कार्य के विरूद्ध खड़े हुए। उन्होंने धर्म नाश की दुहाई देकर प्रजाओं को राजा के विरूद्ध उत्तेजित किया। राजा के वैमात्रेय भ्राता (सौतेला भाई) नक्षत्र राय राज्य प्राप्ति की लिप्सा परितृप्त का यही एक सुवर्ण सुयोग समझकर, उन्होंने चंताई के साथ मिलकर षड़यन्त्र में लिप्त होकर, एवं उसके बाद मुगल वाहिनी की सहायता से राज्य और सिंहासन पर अधिकार

चल–156
कर लिया। महाराज गोविन्द स्वछन्द चित्त से राज्य त्याग करके चले गये। किन्तु उन्होंने धर्म कहकर जो जाना था, उसे कार्य में परिणत करने का संकल्प कभी उन्होंने त्याग नहीं किया। इसके अलावा वहाँ एक ओर आन्तरिक विप्लव दूसरी ओर बाहरी विप्लव की घटनाओं से राज्य में और राज्य की जो दुर्गति हुई थी, उसके प्रति वे दृगपात नहीं करते थे।

इसके अलावा रियां सम्प्रदाय के प्रति महाराज गोविन्द माणिक्य और उनकी महिषी महारानी गुणवती महारानी गुनवती महादेवी की दया की कथा विशेष रूप से उल्लेख योग्य है। उसे यथा स्थान लिपिबद्ध किया जायेगा।

गोविन्द माणिक्य के पुत्र महाराज रामदेव माणिक्य अतिशय उदार पुरूष थे। सराईल के जमीदार नूर मौहम्मद के पुत्र नाछिर मौहम्मद के साथ(1) राम माणिक्य के एक कुमार का विशेष सद्भाव था। एक समय दोनों एक साथ मृगया के लिए निकले। हठात् दैवयोग से नाछिर मौहम्द के बन्दूक की गोली से राजकुमार की मृत्यु हो गई(2) नूर मौहम्मद यह सब सुनकर राजपुत्रघाती अपने पुत्र नाछिर को राज दरबार में भेजकर खबर किया। "मेरे पुत्र नाछिर मौहम्मद ने राजकुमार की हत्या की है। उसके इस भयंकर अपराध के लिए दण्ड विधान के हित महाराज के यहाँ भेज रहा हूँ। इस विषय में उदार ह्रदय महाराज के कार्य पद्धति के बारे में राजमाला का कहना है,

राम माणिक्य राजा पुण्येर भाजन।	राम माणिक्य राजा पुण्य भाजन।
पुत्र बधि नाछिरके ना मारे राजन।।	पुत्र हंता नासिर को, नहीं मारे राजन।।
राजा बोले ताके बधि किबा फल होबे।	राजा ने कहा उसके बध का होगा क्या फल।
तार फल परलोके सेई जे पाइबे।।	अपना फल उसे परलोक में जायेगा मिल।।
राजमाला चल राम माणिक्य खण्ड 17पृ	राजमाला चल राम माणिक्य खण्ड 17पृ

अर्थात, "राम माणिक्य राजा पुण्य भाजन थे। पुत्र हन्ता नाछिर को उन्होंने नहीं मारा। राजा ने कहा उसका वध करके क्या फल होगा। उसका फल उसे परलोक में मिलेगा।

महाराज ने सोचा, यह दुर्घटना नाछिर की इच्छाकृत नहीं है। उसे वध करने पर भी तो मृत पुत्र लौटकर नहीं आयेगा। अतएव यह दण्ड विधान करके भी कोई फल नहीं होगा। इसके कार्य का उपयुक्त फल भगवान ही इसे देगें। महाराज ने उसका किसी तरह का दण्ड विधान नहीं किया। इसके अतिरिक्त उसे स्नह वाक्यों द्वारा आश्वासन देकर पिता के यहाँ लौटाने का आदेश प्रदान किया।

---

(1) नाछिर मौहम्मद का नाम राजमाला में नाछिर अली लिखा है।

(2) निहत राजकुमार का नाम चन्द्रसिंह लिखा गया है। वंशावली की आलोचना से जाना जाता है कि राम माणिक्य के चतुर्थ पुत्र मुकुन्द माणिक्य का अन्य नाम चन्द्रमणि था। उन्होंने पिता के परलोक सिधारने के पश्चात राज्य लाभ किया था। अतएव नाछिर मौहम्मद के द्वारा इनकी मृत्यु नहीं हुई थी। यह स्पष्ट ही समझा जाता है। सारी अवस्थाओं की पर्यालोचना करने पर यह जाना जाता है कि महाराज राम माणिक्य के अन्य एक पुत्र का नाम चन्द्रसिंह था। उनकी ही मृत्यु नाछिर मौहीम्मद के हाथों हुई थी। अल्प उम्र में मृत्यु हो जाने के कारण राजमाला वंशावली में उनका नाम नहीं लिखा गया।

चल–157

नाछिर ने कहा – अनिच्छाकृत होने पर भी उसके कार्य के द्वारा राजपुत्र की मृत्यु हुई है। अतएव उसे उचित दण्ड मिलना चाहिए। खासतौर पर जिसके पिता ने उसके वध के लिए राज दरबार में भेज दिया है। उस पिता के आश्रय में पुनः जाने में नाछिर असम्मत है। उसकी अवस्था देख राजा के कोमल हृदय में दया संचार हुआ। उन्होंने उसे बहुत सा अर्थ और सम्पत्ति से परिपृष्ठ करके विदा किया और पिता से स्वतन्त्र रूप से रहने की व्यवस्था भी कर दिया।

नाछिर मौहम्मद ने राज अनुकम्पा से मिले अर्थ द्वारा एक नये भवन का निर्माण का काम आरम्भ किया। भवन बनाने वाले कारीगर लकडी के सुबृहत और वजनदार बहुत से खम्बों को ढो कर बहुत क्लान्त हो गये और बडे दुख के साथ जो कुछ कहा था वह आज भी ग्राम्य कहावतों में प्रचलित है। उस सबों ने कहा था –

राजारे पाइलो भूते।	राजा को भूत ने पकड़ा
ठुनी(1) बहाइया मारे नूर मामूदेर पूते।।	खम्भें ठोकर(1) मारता नूर मौहम्मद के पुत्र ने।।

अर्थात, (राजा को पकड़ा है भूत, खम्भा ठोकर मारता नूर मौहम्मद पुत्र)

यह एक घटना ही महाराज राम माणिक्य की उदारता का उज्जवल चित्र हमारी आँखें के सामने उद्भाषित हो उठता है। उनकी सरलता और उदारता के और भी उदाहरण है। यथा स्थान उनका उल्लेख किया जायेगा।

महाराज रत्न माणिक्य(द्वितीय) के उदारता की बात सोचने पर विस्मित होना पड़ता है। इनके राजत्व काल में अपने भ्राता घनश्याम ठाकुर को मुर्शिदाबाद दरबार में प्रतिनिधि स्वरूप रखा गया था। इस सुयोग को पाकर घनश्याम ठाकुर ने पहले के प्रतिनिधियों की नीति का ही अनुसरण किया। नवाब को वशीभूत करके एक दल सेना के साथ त्रिपुरा के विरूद्ध खड़े हुए। इस वार्ता को पाकर मंत्रियों ने युद्ध का आयोजन करना चाहा, किन्तु राजा ने भ्रातृ स्नेह के वश इसमें सम्मति प्रदान नहीं की। इधर घनश्याम सेनाओं के साथ उदयपुर आकर राजपुरी में प्रवेश किया एवं राजा का हाथ पकड़ सिहांसन से खींचकर नीचे उतार दिया। रत्नमाणिक्य भ्राता के इस तरह के अप्रत्याशित आचरण से बिन्दु मात्र भी दुखी या विचलित नहीं हुए बल्कि आनन्द के साथ कहा –

राजा बोले भाई महेन्द्र क्षणेते आसिलो।	राजा ने कहा भाई महेन्द्र क्षण में आया।
महेन्द्र माणिक्य नाम राजाऐ राखिलो।।	महेन्द्र माणिक्य नाम राजा ने रख दिया।।
राजमाला चल रत्न माणिक्य खण्ड 23पृ	राजमाला चल रत्न माणिक्य खण्ड 23पृ

अर्थात, ''राजा ने कहा भाई महेन्द्र क्षण में आया है। इसलिए इसका नाम महेन्द्र माणिक्य होगा।''

राजा का दिया नाम ही रह गया। घनश्याम ठाकुर महेन्द्रमाणिक्य नाम धारण कर सिंहासनरूढ हुए। वे केवल सिंहासन अधिकार करके ही चुप नहीं बैठे, साथ साथ रत्नमाणिक्य को कारारूद्ध किया। इस समय नवीन

....

(1) ठुनी – खम्बा।

चल–158

भूपति के नये सहचर नीचाशय चाटुकार गण प्रभु के प्रीति विधान के लिए कहने लगे।

एक देशे दुई राजा ना होये उचित।	एक देश में दो राजा का रहना नहीं उचित।
एक बने दुई ब्याघ्र थाके कदाचित।।	एक वन में दो ब्याघ्रों का रहना कदाचित।।
एक स्त्रीते दुई स्वामी ना थाके कखन।	दो स्वामी एक स्त्री के कभी नहीं होते।
एक कोषे दुई खड्ग न होये पोषण।।	एक म्यान में दो खड़ग कभी नहीं रहते।।
हेनो मते राजा स्थाने कुतर्क जन्माये।	इस तरह के कुतर्क करते राजा के यहाँ।
भ्रातृ बध भय राजा ना चिंतिलोताये।।	भ्रातृ वध का भय, राजा को हुआ कहाँ।।
राजमाला चल रत्न माणिक्य खण्ड 24पृ	राजमाला चल रत्न माणिक्य खण्ड 24पृ

अर्थात, "एक देश में दो राजा कभी नहीं होते। कदाचित ही एक वन में दो शेर रहते हैं। एक स्त्री के दो स्वामी नहीं रहते। एक म्यान में दो तलवार नहीं रहती। इस तरह राजा के सामने वे कुतर्क पैदा करने लगे। राजा के मन में भी भ्रातृ वध का भय व्याप्त नहीं हुआ।"

ये मन्त्रणायें महेन्द्र माणिक्य को उचित लगी। उन्होंने कारारूद्ध रत्नमाणिक्य का वध करके सिंहासन को निष्कटंक किया। राजाओं की उदारता और सरलता का परिचय प्रदान करते जाकर, प्रसंग क्रम से महेन्द्रमाणिक्य के चरित्र की अवतारण करनी पड़ी। यह अशोभनीय होने पर भी, महाराज रत्नमाणिक्य के चरित्र का उज्जल्य प्रतिपादन के लिए, उनके ही बाद इस कालिमामय चित्र उद्घाटन की आवश्यकता है। उदार हृदय महाराज रामदेव माणिक्य के पुत्रों में चरित्र का परस्पर कितना पार्थक्य हुआ था। उस विवरण को पढ़ने से यह बात हृदयगंम होगी

राजा और राज्य की अवस्था

राजमाला चतुर्थ लहर के अन्तर्निविष्ट समय के भीतर बहुत से राजा शान्तिपूर्वक राज्य सुख भोग नहीं सके। अन्तर्विप्लव और बाहरी विप्लव के कारण उन्हें सदा व्यस्त रहना पड़ता था। पारिवारिक विरोध और मुगल शक्ति के प्रभाव से त्रिपुरा की राजनीतिक प्रतिभा दिनों दिन क्षीण होती गई। बाद के लिखे जाने वाले विवरणों को पढ़ने पर यह विषय और भी स्पष्ट रूप से हृदयगंम होगा।

महाराज गोविन्द माणिक्य का शासन काल

महाराज गोविन्द माणिक्य का राज्यलाभ का काल त्रिपुरेश्वर कल्याण माणिक्य के लोकान्त के बाद उनके ज्येष्ठ पुत्र गोविन्द माणिक्य 1070 त्रिपुराब्द (1582 शक) में पितृ सिहांसन पर समारूढ हुए। ये ही राजमाला चतुर्थ लहर के प्रथम राजा हैं।

नवाब दरबार में प्रतिनिधि रखने का नियम पहले ही कहा गया है कि महाराज गोविन्द को कुछ माने में मुगल शक्ति का अनुगत्य स्वीकार करना पड़ा था। उनके राजत्व काल में मुर्शिदाबाद के नवाब दरबार में एक प्रतिनिधि रखने का नियम चालू हुआ। महाराज गोविन्द ने अपने सौतेले भाई नक्षत्र राय को प्रतिनिधि मनोनीत किया था। अग्रज का उल्लघंन कर राज्य प्राप्ति की आकांक्षा

चल–159
नक्षत्र राय के हृदय में जागरूक थी। यह महाराज गोविन्द के सम्पूर्ण अगोचर थी, ऐसा नहीं लगता। किन्तु उनके द्वारा राजद्रोह रूप अनिष्टकर कार्य अनुष्ठित हो सकता है, महाराज के सरल हृदय में शायद यह सन्देह एक क्षण के लिए पनप नहीं सका था।

महाराज गोविन्द के विरुद्ध षडयन्त्र इस हालत में एक वर्ष बीतने चला था। किन्तु नक्षत्र राय ने अपनी मनोकांक्षा पूरी करने के पथ को उन्मुक्त कर लेने का संकल्प भुलाया नही। थोड़े दिनों में ही उनके अभीष्ट प्राप्ति का उत्तम सुयोग उपस्थित हुआ था। दयार्द्र हृदय महाराज गोविन्द प्राणी–हिंसा महा पाप समझते थे। उन्होंने देवालयों में जीव बलि की चिराचरित प्रथा को बन्द कर दिया। इसी सूत्र से देवालय के प्रधान महंत (चंताई) ने रूष्ट होकर राजा के विरूद्ध आन्दोलन खड़ा किया। समाज में उनका अमोघ प्रभाव था। उन्होंने धर्म लोप की दुहाई देकर भीषण अन्तर्विप्लव की सूचना की थी। यह अन्तर्विप्लव कुमार नक्षत्र राय के लिए विशेष हितकर साबित हुआ। कवि रविन्द्र नाथ ठाकुर ने महाराज गोविन्द माणिक्य की घटनाओं को लेकर ''राजर्षि'' उपन्यास और ''विसर्जन'' नाटक की रचना की थी। उनके रचित ग्रंथ में उस चन्ताई का नाम ''रघुपति'' लिखा गया है। यह नाम काल्पिनिक है। चंताई का प्रकृत नाम बिना संकोच निर्धारण करना इस समय सहज साध्य नहीं है। श्रेणी माला ग्रंथ की आलोचना से जाना जाता है कि नक्षत्र राय के (छत्र माणिक्य के) अधस्तन चतुर्थ स्थानीय, राजा धनंजय की दुहिता से खितंग चंताई के पुत्र युधिष्ठर ने विवाह किया था(1)। स्थानान्तर पर देखा जाता है कि उक्त राजा धनंजय के अनुज, राजा अभिमन्यु की कन्या मनाई ठाकुरानी खितंग चंताई के दूसरे पुत्र वीरमणि के हाथ अर्पित हुई थी।(2) इस खितंग के पूर्ववर्ती का दीर्घकाल में अन्य किसी भी चंताई का नाम नहीं मिलता। इसके द्वारा यह अनुमान किया जा सकता है कि महाराज गोविन्द माणिक्य के शासन समय ये ही चंताई के पद पर आसीन थे और इन्होंने ही बागी होकर राज्य में अशांति का सूत्रपात किया था। नक्षत्र राय के वंशजों के साथ संबंध रचने के विषय की चिन्ता करने से भी यह अनुमान समर्थित होगा।

---

(1) राजा धनंजय सुत परसुराम राजा।
लक्ष्मीप्रिया कुमारी जे ताहान अनुजा।।
आरेक भगिनी कृष्णप्रिया शिष्टमती।
चंताई खितंगेर पुत्र युधिष्ठर पति।। श्रेणीमाला।

अर्थात, ''राजा धनंजय की कन्या से खितंग चंताई के पुत्र युधिष्ठर ने विवाह किया था। राजा धनंजय के अनुज राजा अभिमन्यु की कन्या मनाई ठाकुरानी खितंग चन्ताई के अपर पुत्र वीर माणिक को सौंपी गई थी। उनकी अनुजा का नाम था लक्ष्मीप्रिया और एक शिष्ट स्वभाव की भागिनी थी जिसका नाम था कृष्णप्रिया।

(2) अभिमन्यु राजकन्या मनाई ठाकुरानी।
चंताई खितंग पुत्र पति बीरमणि।। श्रेणीमाला।

इसका अर्थ ऊपर आ चुका है।

चल–160

चंताई के कार्य पद्धति के साथ कुमार नक्षत्र का सहानुभूति रहना कोई असंभव व आश्चर्य की बात नहीं है। चंताई की चेष्टा से धर्मभीरू प्रजा के हृदय में अतिआसानी से राजद्रोहिता की बीज बोई गई थी। इस समय नक्षत्र राय ने और एक पंथा का सहारा लिया। कुछ दिनों तक नवाब दरबार में रहने के बाद, उन्होंने अपनी प्रतिभा से बंग के शासक (सम्राट शाहजाँह के पुत्र) शाहसुजा को वशीभूत कर लिया। समय सुयोग देखकर नवाब के यहाँ अपना अभिप्राय व्यक्त किया। नवाब ने सहानुभूतिवश, कुमार नक्षत्र राय की सहायता के लिए बहुत भारी फौज उन्हें दिया। नक्षत्र राय ने उस विशाल सेना वाहिनी को लेकर त्रिपुरा के विरूद्ध युद्ध यात्रा की।

यह वार्ता यथा समय महाराज गोविन्द माणिक्य के कानों तक पँहुची। मंत्रियों ने युद्ध की तैयारी के लिए महाराज को उत्साहित करने लगे। किन्तु भ्रातृ वत्सल, ततोधिक शांति प्रिय महाराज गोविन्द उनके प्रस्तावों पर सहमत नहीं हुए। उन्होंने कहा –भ्राता विरूद्ध युद्ध क्षेत्र में अवतीर्ण होने पर अपने प्राणों की आहुति प्रदान करनी होगी अथवा भाई के खून से समरांगण लाल हो जायेगा। इसके अलावा प्रजा क्षय अवश्यंभावी है। भ्राता के साथ इस तरह के नृशंस कलह में लिप्त होकर राज्य सुख भोग करने से अपेक्षा वनवासी होना श्रेय है। मैंने एक साल तक राज्य किया है, अब नक्षत्र राय राज्य भोग करे। यही विधाता की इच्छा है, अतएव मैं युद्ध नहीं करूँगा।

महाराज गोविन्द का राज्य छोडना

यह कहकर महाराज गोविन्द राज्य–लोलुप सौतेले भाई के लिए राज्य छोड़कर राज महिषी गुणवती महादेवी को साथ लेकर राजधानी से निकल गये। इस विपद काल में राजा का कनिष्ठ सहोदर जगन्नाथ ठाकुर, ज्येष्ठ पुत्र राम ठाकुर (बाद में रामदेव माणिक्य), द्वितीय पुत्र दुर्गा ठाकुर, भ्रातृष पुत्र(जगन्नाथ ठाकुर का पुत्र) सूर्य प्रताप नारायण, चम्पक राय एवं जगन्नाथ ठाकुर का एक जामाता सहयात्री हुए थे।(1) रामचन्द्र के कनिष्ठ भ्रातृ अनुगामी लक्ष्मण की तरह जगन्नाथ ठाकुर महाराज

---

(1) चट्ट ग्रामे चलिलेक सेई तो राजन।	चट्ट ग्राम को वहाँ से चले राजन।
जगन्नाथ अनुज संगे चले सेई क्षण।।	जगन्नाथ अनुज चले संग उस क्षण।।
रामठाकुर राजपुत्र सुनीति प्रचुर।	राम ठाकुर राजपुत्र सुनीतिवान।
द्वितीय ताहान भ्रातृ दुर्गा नाम ठाकुर।।	द्वितीय उनका भाई जिसका दुर्गा ठाकुर नाम।।
जगन्नाथ सुत सूर्यप्रतापनारायण।	जगन्नाथ सुत सूर्यप्रताप नारायण।
चम्पक राय आर पुत्र युद्धे बिचक्षण।।	चम्पक राय और एक पुत्र युद्ध में विचक्षण।।
जगन्नाथ तनय छिले आर एकजन।	और एक थे जगन्नाथ तनय।
पंथ होइते फिरि आइसे स्वदेशे गमन।।	लौटे स्वदेश, पथ से ही वहाँ उस समय।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 8पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 8पृ

अर्थात, "राजा चट्ट ग्राम की ओर चल पड़े। जगन्नाथ के अनुज भी उसी क्षण साथ साथ चलने लगे। रामठाकुर सुनीति राजपुत्र थे। उनके द्वितीय भाई का नाम दुर्गा ठाकुर था और जगन्नाथ के पुत्र का नाम सूर्य प्रताप नरायण था। युद्ध में विचक्षण और एक पुत्र थे चम्पक राय। जगन्नाथ के और एक पुत्र थे। जो रास्ते से लौट चले थे घर की ओर स्वदेश में।

चल–161
गोविन्द माणिक्य की सम्पद और विपदा में छाया की तरह उनके सहचर थे। राज्य छोड़कर गये पूर्वोक्त व्यक्तिगण के अलावा जगन्नाथ ठाकुर के और एक पुत्र अपने पिता के अग्रज के अनुगामी हुए थे, पर रास्ते में क्या सोचकर, राजधानी में लौटने के लिए रास्ते में ही राजा का संग त्याग किया। जगन्नाथ ठाकुर, पुत्र के इस व्यवहार से बहुत ही क्षुब्द्ध हुए एवं जामाता से कहा, ''शीघ्र जाकर पुत्र को लौटा लाओ'' जामाता कुमार के स्वभाव से परिचित थे। उन्होंने पूछा ''कुमार यदि लौटने में असमर्थ हो तब मैं किस उपाय का सहारा लूँगा।'' जगन्नाथ ने आदेश दिया, ''आने में आपत्ति करने पर उसका मस्तक छेदन कर ले आना।'' जामाता ने इस तरह आदिष्ट होकर कुमार का अनुसरण किया एवं रास्ते में पाकर उसे पिता का आदेश सुनाया। कुमार ने पितृ आज्ञा श्रवण से ही क्रोधित होकर जामाता को वध करने के लिए खड्ग उत्तोलन किया। जामाता ने कुमार को आघात करने का अवसर न देकर, हस्त से उसका सिर काट, छिन्न मुंड लेकर लौट आये। महाराज गोविन्द और जगन्नाथ ठाकुर एक साथ बैठे थे और इसी समय जामाता ने लौटकर छिन्न मुंड जगन्नाथ ठाकुर के सामने रख दिया। गोविन्द माणिक्य वह कटा सिर देखते ही सारी कहानी सुनकर विस्मित और दुखी हुए और इस तरह के कठोर व्यवहार के लिए भ्राता का भर्त्सना करने लगे। राजमाला में अथवा और किसी ग्रन्थ में और जगह इस कुमार का और जामाता का नामोल्लेख नहीं है।

इधर कुमार नक्षत्रराय छत्रमाणिक्य नाम धारण कर त्रिपुर सिंहासन पर बैठे। शास्त्रानुमोदित नियम से उनके राज्याभिषेक की क्रिया सम्पन्न हुई।

रियां सम्प्रदाय का दुर्व्यवहार

महाराज गोविन्द ने राजधानी परित्याग के पश्चात राजमहिषी और अनुचरों के साथ रियां जाति के आवास स्थल पर आश्रय लिया।(1) यह स्थान उन दिनों त्रिपुरा राज्य के अन्तर्गत था। इस समय पार्वत्य चट्टग्राम (Chittagong Hill Tracts) में शामिल हुआ है। सभी अवस्था की पूजा करते हैं। राज्य–भ्रष्ट महाराज गोविन्द को रियां सम्प्रदाय ने श्रद्धा के साथ अभ्यर्थना नहीं किया। इससे महाराज बहुत मर्म्माहत हुए। इनके आचरण

---

(1) महाराज गोविन्द माणिक्य के वास भवन का भग्नावशेष अब भी विद्यमान है। पार्वत्य चट्टगाँव के भूतपूर्व डिप्टी कमिश्नर लेविन साहब ने इस बारे में लिखा है –

"Far in the jungles on the banks of the Myanee, an affluence of the Kassalong River, are found tanks, fruit-trees and the remains of masonry building, – evidence that at some bygone period, the land here was cultivated and inhabited by men of the plains. Tradition attributes this ruins to a former Raja of Hill Tipperah who, it is said, was driven from that part of the country."

Lewin's Hill Tracts of Chittagong p. 6.

चल–162
इतने अशांति पैदा करने वाले थे, कि उसे देखकर चिर करूणारूदया राजमहिषी के मुँह से सहसा रियां जाति के प्रति अभिसंपात के वाक्य निकल पड़े।

शाहसुजा और गोविन्द माणिक्य रियां देश में रहते समय महाराज गोविन्द माणिक्य के प्रतिद्वन्दी शाहजादा सुल्तान सुजा, अपने भ्राता औरंगजेब द्वारा विताडित होकर प्राण भय से त्रिपुरा आया। उसका विश्वास था महाराज छत्र माणिक्य ने उसी की ही सहायता से राज्य लाभ किया है, अतएव वे इस विपदा के समय अवश्य ही आश्रय प्रदान करेगे। किन्तु त्रिपुरा में आने के पहले ही खबर मिली थी कि सम्राट औरंगजेब ने उसे पकड़ कर ले जाने के लिए महाराज गोविन्द माणिक्य के पास बन्धु भाव से एक पत्र लिखकर भेजा है और बन्द पत्र महाराज छत्र माणिक्य के हस्तगत हुआ है। यह वार्ता पाकर शाहसुजा भयभीत और चिंतित हो उठे। उन्होंने सोचा कि सम्राट के साथ सौहार्द रक्षा के लिए उन्हें शत्रु के हाथों में अर्पण करना छत्र माणिक्य के लिए असंभव नहीं होगा। इस भय से उन्होंने राजधानी में प्रवेश न करके अरण्यमय पथ से आराकान के लिए त्रिपुरा के पार्वत्य प्रदेश में प्रवेश किया एवं पथ में अतर्कित भाव से महाराज गोविन्द के रियां देश स्थित आवास स्थल में जाकर उपस्थित हुए। वहाँ पर अपने प्रतिद्वन्दी गोविन्द माणिक्य को देखकर वे अधिक भयभीत और चंचल हो उठे थे। सुजा ने सोचा इस बार महाराज गोविन्द निश्चय ही प्रतिहिंसा परायण होकर उन्हे विपन्न करेगें।

शाह सुजा के कार्य द्वारा ही जो राज्य भ्रष्ट और वनवासी हुए है, विधि विडम्बना से थोडे समय में ही सुजा को ततोधिक विपन्नावस्था में उसी गोविन्द माणिक्य के हाथों में उन्हें आना पड़ा। उदार हृदय महाराज गोविन्द, सुजा की दुरावस्था देखकर व्यथित हुए एवं उनके पूर्व आचरण को भूलकर सम–अवस्थापन्न ज्ञान करके उन्हें आदर के साथ ग्रहण किये। सुजा महाराज के सौजन्य को देखकर मुग्ध हो गये और निःसंकोच चित्त से सपरिवार वहीं रहने लगे।

महाराज गोविन्द माणिक्य का आराकान गमन इस अवस्था में कुछ दिनों तक बीत जाने के बाद अबाध्य रियां लोगों के संश्रय में रहना महाराज गोविन्द ने असंगत सोचा। वे अपने विश्वस्त अमात्य विश्वासनारायण के तत्वाधान में राजमहिषी को बगासाइ परगना के अन्तर्गत श्रीपुर ग्राम में कुंडु चाौधरियों के घर में रखकर अनुचर वर्गों के साथ रियां देश परित्याग कर आराकान के राज दरबार चले गये। आराकान राज सन्द–सु–धर्म(1) ने उन्हें सादर ग्रहण और

---

(1) 1652 ई0 सन् में सन्द–सु–धर्म (चन्द्र सुधर्म) आराकान के सिंहासन पर बैठे। उनके समय शाहसुजा बंगला देश से भाग कर आराकान आये थे। 1684 ई0 सन् में उनकी मृत्यु हुई। — चट्ट ग्राम का इतिहास चतुर्थ अध्याय 33पृ

वासोपयोगी भवन और आवश्यकीय लोगों को देकर बहुत सहायता की थी। महाराज गोविन्द आराकान राज के आश्रय में निश्चिंत मन से रहने लगे। बिना काम के अकेले समय व्यतीत करना बडा ही कष्टप्रद होता है। इसलिए वे अधिकांश समय राज दरबार में ही व्यतीत करते थे। इस अवस्था में उन्हें प्रायः छह साल आराकान में उन्हें रहना पड़ा था।

शाह सुजा का आराकान यात्रा सुल्तान सुजा इस समय चट्ट गाँव चले गये। उनकी खोज के लिए सम्राट के चर चारों ओर निकले थे। इस हालत में सुजा ने और अधिक दिनों तक चट्ट गाँव में रहना निरापद नहीं समझा। आराकान में जाकर अनुकूल हवा मिलने पर ही वहाँ से जलयान की सहायता से मक्का यात्रा का संकल्प पहले से ही अपने हृदय में पोष रखा था। इस समय उसी संकल्प अनुयायी कार्य करने के लिए आराकान जाना ही उन्होंने उचित समझा।

एक बार आराकान राजा सन्द–सु–धर्म और महाराज गोविन्द माणिक्य एक साथ बैठकर वार्तालाप कर रहे थे। उसी समय सुल्तान सुजा वहाँ उपस्थित हुए। महाराज गोविन्द पहले से ही सुजा को पहचानते थे। उन्होंने सुजा को समागत देखकर ससम्मान अभ्यर्थना पूर्वक अपने आसन पर उन्होंने उन्हें बैठाया। यह देख आराकान राज विस्मयाविष्ट होकर महाराज गोविन्द से पूछा –

''म्लेच्छ को इस तरह अभ्यर्थना करने का कारण क्या है?(1) उस समय –

राजा बोले नरेश्वर कोरि निवेदन।	कहा राजा ने मैं करता हूँ निवेदन।
ऐई तो सुजा बादशा विख्यात भुवन।।	यही तो सुजा बादशाह विख्यात भुवन।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 9पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 9पृ

शाह सुजा प्रदत्त उपहार महाराज गोविन्द ने शाह सुजा का परिचय प्रदान किया और उनकी विपन्नावस्था की वर्णना की। समस्त विवरण से अवगत होकर आराकान राज्य में उन्हें यत्न के साथ आश्रय दान किया। सभा भंग के बाद महाराज गोविन्द और शाह सुजा एक साथ राज भवन से निकले। महाराज के सौजन्य से सुजा विमुग्ध हुए थे। शाह सुजा ने आन्तरिक कृतज्ञता के साथ अपनी कटिबन्ध स्थित पारस्य देश के बहु मूल्यवान निमचा तलवार और अँगुली स्थित हीरा की अँगूठी निकालकर गोविन्द माणिक्य के हाथों में अर्पण कर विनीत भाव से कहा ''मैं भारत सम्राट का पुत्र एवं बंग का शासक होकर भी विधि बिडम्बना से आज रास्ते का भिखारी हो गया हूँ। इस विपद काल में आप

---

(1) रसांगेर महाराजा बोलिलो आपन।	रसांग के राजा ने तब कहा स्वयं।
कि कारणे म्लेच्छ राजा दिछो सिंहासन।।	किस कारण म्लेच्छ को दे दिया सिंहासन।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 9पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 9पृ

अर्थात, ''रसांग के महाराजा ने गोविन्द माणिक्य से कहा कि एक म्लेच्छ को तुमने अपना सिंहासन किस कारण दिया ?''

जो सहानुभूति प्रदर्शन कर रहे हैं, इसलिए मैं आपके यहाँ मैं विशेष ऋणी हूँ। मेरी गहरी कृतज्ञता के निदर्शन स्वरूप आपको देने लायक कोई वस्तु मेरे पास नहीं हैं। ये साधारण सी दो चीजें आपको उपहार स्वरूप देने के अयोग्य होने पर भी अपने सौजन्य गुण से इन अकिंचित कर उपहार ग्रहण करने पर मुझे अपार हर्ष होगा।'' महाराज गोविन्द ने शहजादा के प्रदत्त उपढौकन को सादर ग्रहण किया था। सुजा की दी हुई तलवार को त्रिपुरेश्वर गण पुरूष परम्परा से सयत्नपूर्वक रक्षा करते आ रहे है।

आराकान में कुछ दिनो तक रहने बाद, विशेष घटनावश सुल्तान सुजा और आराकान राजा में मतान्तर होने के बाद, सुजा को आराकान राज्य त्याग कर, दूसरी जगह जाना पड़ा था। इस विषय में मूल घटना हम यथा स्थान प्रदान करेगे।

शाह सुजा के अनुसंधान के लिए आराकान राजा ने बहुत कोशिशें की, पर कृतकार्य नहीं हो सके। शाह सुजा के व्यवहार से दुखी हो आराकान राजा ने सोचा, विदेशी विशिष्ट व्यक्तियों को राज्य में आश्रय देना निरापद नहीं है। यह धारणा मन में आते ही उन्होंनें विशिष्ट शिष्टाचार के साथ –

गोविन्द माणिक्य प्रति बोलेन राजन्।	गोविन्द माणिक्य प्रति बोले राजन्।
राज्ये याव नरेश्वर आपन भुवन।।	नरेश्वर तुम जाओ अब अपने भवन।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 11पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 11पृ

अर्थात, ''गोविन्द माणिक्य से आराकान राजा ने कहा। नरेश्वर अब अपने राज्य और अपने घर जाओ।''

महाराज गोविन्द का आराकान परित्याग

महाराज गोविन्द ने भी अब और रसांग में रहना उचित नहीं समझा। वे अपने अनुचरों के साथ आराकान राज्य परित्याग करने के लिए प्रस्तुत हो गये। आराकान राज ने उन्हें विदाई के उपहार द्वारा सम्मानित किया था। उपहार में कौन कौन सी चीजें दी गई थी, राजमाला में उसकी एक छोटी सी तालिका है।

कोतो घर मघ अष्टधातु सिंहासन।	कुछ घर मघ और अष्ट धातु सिंहासन।
देव जन्ये मघ राजा कोरिलो अर्पण।।	देवता के लिए मघ राजा ने किया अर्पण।।
घटि एक भरटेर द्रव्य नाना मत।	एक घडा भर पूर्ण नाना द्रव्यों के साथ।
एई सब दिया राजा विदाय राज्येत।।	यह सब देकर विदा किया राजा को साक्षात्।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 11पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 11पृ

अर्थात, ''कुछ घर मघों के साथ अष्ट धातु सिंहासन दिया। देवता के लिए मघों को राजा ने अर्पण किया। एक घडे में नाना तरह के मूल्यवान द्रव्यों को भर दिया। ये सब देकर राजा ने उन्हें राज्य से विदा किया।''

मघराज के प्रदत्त उपढौकन द्रव्यों में अष्ट धातु निर्मित सिंहासन आज भी चतुर्दश देवता के व्यवहार में है। इस सिंहासन का विशद विवरण राजमाला के प्रथम लहर के 148 पृष्ठ में मिलेगा।

महाराज गोविन्द आराकान राज्य त्याग के पश्चात चट्ट गाँव में जाकर रहने लगे। महाराज छत्र माणिक्य के राजत्व में उनका प्रत्यावर्तन करना असम्भव समझकर ही वे चट्टगाँव में रहने पर मजबूर हो गये थे।

महाराज छत्र माणिक्य का शासन काल

महाराज छत्र माणिक्य का राज्यलाभ काल भ्रातृ वत्सल ओर शांति प्रिय महाराज गोविन्द माणिक्य राज्य से निष्क्रान्त होने के पश्चात नक्षत्र राय ने 1583 शक में छत्र माणिक्य नाम धारण पूर्वक सिंहासन पर आरोहण किया।

महाराज छत्र माणिक्य का प्रासाद उनके छः साल के राजत्व काल में सुदृश्य राजप्रासाद निर्माण के अलावा कोई भी उल्लेख योग्य कार्य नहीं हुआ। यह प्रासाद गोमती नदी के उत्तर तीरवर्ती एक छोटी सी पहाड़ी के ऊपर आज भी जीर्ण देह लेकर दर्शकों की दृष्टि आकर्षण कर रहा है। इसका छत गिर गया है, किन्तु मजबूत बनावट के कारण अधिकांश दीवार अब भी अक्षुण्ण अवस्था में खडे है। इनका प्रलेप/अस्तर इतना दृढ है कि अब भी वह दीवार के अंगच्युत नहीं हुआ है। खासतौर से इनके चूनाकाम की शुभ्र ज्योति सुदीर्घ काल की धूप बारिश में भी नष्ट नहीं हुई। यह अट्टालिका द्वितल विशिष्ट है। निम्न तल के प्रकोष्ठ सदर और अन्दर दो भागों में विभक्त थे – यह देखने से ही पता चलता है। यह राजनिकेतन ''पुरातन राजबाडी'' (पुरातन महल) के नाम से परिचित है।

यह प्रसाद जिस श्रृंग पर है, वह श्रृंग गोमती नदी के वक्ष स्थल से सीधा ऊपर उठा है। इस उच्च श्रृंग पर खडे होने पर चारों ओर बहुत दूर दूर तक सभी स्थान दिखाई देते हैं। नदी के परिखा और पर्वत प्राचीर द्वारा यह इस तरह सुरक्षित है कि इस प्रासाद द्वारा सुरक्षित दुर्ग का कार्य भी साधित होता था।

विदेशीय परिव्राजकगण महाराज छत्र माणिक्य के शासन काल में फारसी देश के दो परिब्राजक भारत के नाना देश परिभ्रमण करके बंग देश में आये। उनमें एक का नाम था बनिर्यार। वे चिकित्सा व्यवसायी थे। दूसरे का नाम था टेवार्नियार –ये थे रत्न व्यवसायी। शेषोक्त व्यक्ति ने छत्र माणिक्य का नाम और उनकी प्रचारित एक मुद्रा की प्रतिकृति के साथ त्रिपुरा राज्य के संक्षिप्त विवरणों को, अपने भ्रमण वृतान्त में उल्लेख किया है। इस ग्रंथ की आलोचना से जाना जाता है कि उन दिनों त्रिपुरा में रेशम की खेती होती थी और खान से सोना संग्रह किया जाता था। ये सभी उत्पन्न वस्तुयों को चीन आदि विभिन्न देशों में भेजे जाने की व्यवस्था थी।(1) बनिर्यार के कुछ दिन पहले टेवार्नियार के भारत में आने पर भी उनके भ्रमण काल में परस्पर एक दूसरे से मिले

---

(1) **Tavernier's Travells in India - Book III, Part II, Chap XVI.**

चल–166
थे। अतएव दोनों एक ही समय भारतवर्ष में थे, यह जाना जाता है।(1)

महाराज छत्र माणिक्य के द्वारा खनन किया गया उदयपुर स्थित छत्र सागर का नाम उल्लेख किया गया है। इनके नामानुसार त्रिपुरा पर्वत के सर्वोच्च श्रृंग का नाम छत्रचुडा या छाताचुडा हुआ है। इसके अलावा छत्र का खिल, छत्र का कोट, छत्रपुर आदि ग्रामों के नाम महाराज छत्र माणिक्य की स्मृति को संजोये चले आ रहे हैं।

महाराज छत्र माणिक्य द्वारा प्रदत्त शासन महाराज छत्र माणिक्य की एक कीर्ति आज भी बरकार है। पहले कहा गया है, महाराज विजय माणिक्य ने ''साखा सेप'' और ''थांगा चेप'' के नाम से ख्यात हालाम जाति को अष्ट धातु निर्मित एक हस्ती और एक व्याघ्र की प्रतिमूर्ति प्रदान किया था।(2) उन दिनो ''लांगाई'' सम्प्रदाय के हालाम लोग पूर्वोक्त रूप के राजप्रसाद से वंचित थे। सुदीर्घ कालों के पश्चात महाराज छत्र माणिक्य के शासन काल में ये सभी इस तरह के उपहार पाने के लिए प्रार्थी होने पर महाराज ने इस सम्प्रदाय के सरदार को एक धातु निर्मित अश्वारोही योद्धा की मूर्ति प्रदान किया। त्रिपुरा के भूतपूर्व प्रधान मंत्री स्वर्गीय धनंजय ठाकुर महोदय ने इस मूर्ति को देखकर लिखा है–''साखा सेप'' और ''थांगा चेप'' नाम के हालाम गण दोनों प्रतिकृतियों को पाने के बहुत दिनों के बाद उसी तरह के राज प्रदत्त निदर्शन पाने के अभिलाषी होकर ''लागांई'' कहे जाने वाले हालाम लोगों ने राजा के यहाँ प्रार्थना किया एवं उसके बहुत दिनों के पश्चात उसी तरह की धातु निर्मित सुसज्जित तलवार धारी स–सवार एक विशेषज्ञ रूप से स्पष्ट और सुन्दर कलाकृति पूर्ण अश्व प्राप्त किया। उस अश्व पृष्ठ पर राजनीति कुशल वीरवर महाराज विजय माणिक्य और महाराज छत्र माणिक्य और जिस सरदार को वह दिया गया था उसका नाम उत्कीर्ण किया गया है।

वह मूर्ति इस समय कैला शहर विभाग के अन्तर्गत कमलपुर थाना ईलाके के कचुछडा निवासी छानाईसन् गालिम के यहाँ है। मूर्ति सात इंच उँची और अश्व की लम्बाई साढे छः इंच थी। सवार के बाँये हाथ में अश्व की लगाम है। दाँये हाथ में तलवार है। तलवार का आखिरी हिस्सा टूटा हुआ है। तलवार का निचला हिस्सा मुठ केवल सवार के हाथ में है।

....

(1) **"The sixth, being arriv'd at a considerable Town, call'd Donapour, six Leagues from *Rage Mehale*, I parted Monsieur Bernier, who was going to *Casembasar* and thence to Ogoule by Land ; for when the River is low, there is no going by water, by reason of a great Bank of Sand that lies before a city call'd *Santiqui*". –**

Tavernier's Travels in India- Book I, Part II, Chap. VIII.

(2) राजमाला द्वितीय लहर 162 पृष्ठ देखे।

चल–167

अश्व के अंग में अनेक बातें लिखी हुई है। इस लिपि की भाषा अस्पष्ट एवं असंपूर्ण है। संस्कृत और बंगला भाषा के मिश्रण से बंगला अक्षरों में सारे वाक्य उत्कीर्ण किये हुए हैं। अश्व के जिस अंग में जो वाक्य उत्कीर्ण हुआ है। वह नीचे दिया जा रहा है।

(अश्व के बॉयी ओर की दो पंक्तिया)
"श्रीश्रीयुत बिज
य माणिक्य देबेन

(दक्षिण की ओर की दो पंक्तियां)
याचिगांछाके
"स्थापितो अश्वाकृति" (1)

(पूच्छ देशे)
"सेन्गचाम"

(गले की दो पंक्तिया)
"+ + शासनेर(2) त्रिपुर इन्द्र
श्रीश्रीयुत छत्रमाणिक्येर स्थापइरौ" (3)

(बायें पद पर)
"साब्दा 1584"

उत्कीर्ण अक्षरों के क्षय होने कारण जगह जगह पर वे अस्पष्ट हो चुके हैं और अंकित की गई बातें नितान्त ही असंपूर्ण और दुर्बोध्य है। विशेष कोशिशों के बावजूद निःसंदिग्ध भाव से पाठोद्धार नहीं किया जा सका। पूर्ण विवरण ज्ञात रहने की वजह से, उत्कीर्ण वाक्यावली का यह भावोद्धार किया जा सकता है – कि श्रीश्रीयुत विजय माणिक्य देव ने सेंगचाम (सांगाचेप) सम्प्रदाय को जो शासन दिया था, उसी के अनुरूप यह अश्वाकृति शासन, याचिन्गछा नाम के सरदार को त्रिपुरेन्द्र श्रीश्रीयुत छत्र माणिक्य ने 1584 शक में स्थापन(प्रदान) किया था।

इसके अलावा लिपि द्वारा अन्य कोई भावों का उद्धार नहीं किया जा सकता। सम्भवतः उत्कीर्ण कारी से ही गलती से अनेक शब्द विकृत हो गये हैं। शकाब्दा शब्द की जगह साब्दा उत्कीर्ण करना ही इसका प्रमाण है। इस शकांक द्वारा भी मूर्ति महाराज छत्र माणिक्य द्वारा प्रदान करना निर्णित होता है। हलाम लोग इस मूर्ति को देवता समझकर पूजा करते हैं गले में उत्कीर्ण + + दो दो अक्षर अपाठ्य है।

मणिपुर के इतिहास में त्रिपुरा कथा

मणिपुर के इतिहास में 1584 शक के (1662–63 ई) विवरण में लिखा है, "**a messenger arrived from Tipperah with an elephant and a woman** " अर्थात एक हाथी और एक औरत को लेकर त्रिपुरा से दूत का आगमन हुआ।

---

(1) स्थापिता अश्वाकृति ?
(2) शासकेन ?
(3) स्थापइतारौ ?

चल–168

1584 शक में महाराज छत्र माणिक्य का राजत्व काल था। इस समय मणिपुर में दूत भेजना राजमाला अथवा त्रिपुरा के किसी ऐतिहासिक ग्रंथों में नहीं मिल रहा है।

महाराज छत्र माणिक्य ने छः साल से कुछ अधिक राज्य शासन करके वसन्त रोग से अपनी जीवन लीला समाप्त की।

महाराज गोविन्द माणिक्य के द्वितीय दफे का राजत्व।

गोविन्द माणिक्य के द्वितीय दफे का राज्यलाभकाल महाराज गोविन्द माणिक्य आराकान राज्य त्याग करने के पश्चात कुछ दिनों तक चट्ट गाँव में रहे। इस समय महाराज छत्र माणिक्य के लोकान्तरित होने की खबर सुनकर वे 1589 शक (1667 ई0 सन्) के अन्तिम चरण में राज्य में लौट आये और पुनः सिंहासन पर बैठे।

हस्तीकर निर्धारण महाराज छत्र माणिक्य के राज्य प्राप्ति के लिए सहायता करने के उद्देश्य से मुगल शक्ति ने त्रिपुर पर जो अपने प्रभाव का विस्तार किया था, महाराज गोविन्द माणिक्य के राजत्व काल में वह प्रभाव पूर्ण मात्रा में कार्यकर हुआ था। इस समय मुगल शासक ने त्रिपुरा के ऊपर हस्तीकर निर्धारण किया था। यह बात हम पहले भी बता चुके है। इसके पूर्व मुगल, त्रिपुरा को कर प्रदायी नहीं कर सके थे। महाराज गोविन्द ने सालाना साढे चार हाथियों को कर स्वरूप देने पर अपनी स्वीकृति दी थी।(1)

नबाब दरबार में उत्सव राय प्रतिनिधि छत्र माणिक्य के पुत्र उत्सव राय शांति प्रिय थे। उन्होंने सोचा राज्य के भीतर कलह का बीज रोपा गया है। यहाँ शांति से रहने की आशा नहीं की जा सकती। इस अशांति में रहने की अपेक्षा, त्रिपुरेश्वर के प्रतिनिधि के रूप में नवाब दरबार में रहना ही निरापद है। इस कार्य के लिए जो वृत्ति देने की व्यस्था है, उसी के उपयोग से जीवन यात्रा निर्वाह करना ही उन्होंने

---

(1)

गोविन्द माणिक्य पूर्वे राजा त्रिपुरार।	गोविन्द राजा के पहले नृप त्रिपुरा को।
केह नृप नाहि दिछे कर बादसार।।	दिया नहीं राजकर त्रिपुर राजा को।।
गोविन्द माणिक्य राजा पुनर्बार होइलो।	गोविन्द माणिक्य हुए राजा आकर।
तदबधि नजराना हस्ती कर दिलो।।	तद्बधि नजराना आकर दिया हस्ती कर।।
बत्सरे पंच हस्ती करे निबंधिया।	वर्ष प्रति पाँच हाथी, हुआ कर निर्धारण।
ताहा होते एक हस्ती अर्द्धक मापिया।।	उसमें एक हस्ती का होगा अर्द्ध नापकरण।।
सेइतो अर्द्धक हस्ती राज करे जाये।	वही अर्द्धक हस्ती राजकर में आये।
आर अर्द्धकेर मूल्य नृपति जे पाए।।	और अर्द्धक मूल्य नृपति ही पाये।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 11पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 11पृ

चल–169
श्रेयस्कर समझा। महाराज गोविन्द ने भी प्रतिद्वन्द्वी भ्राता के पुत्र को प्रतिनिधि के रूप में दरबार में भेज देने में कोई द्विधा बोध नहीं किया। पहले रत्ननगर परगना प्रतिनिधि के वृत्ति स्वरूप था। उत्सवराय को इसके बदले में कादबा, बेदराबाद और अमीराबाद तीनों परगना दिये गये। कुमार उत्सवराय इससे ही संतुष्ट होकर, राजधानी परित्याग करके नवाब दरबार में चले गये। ढाका में अपना आवास स्थल निर्वाचन किया। उनके वंशजों की एक शाखा अब भी ढाका नगरी में राजा की हवेली में रह रही है। उत्सव राय ने नवाब दरबार में कभी भी त्रिपुरेश्वर के विरूद्ध कोई हानिकारक काम नहीं किया।

त्रिपुराधिप गोविन्द माणिक्य धर्मप्राण राजा थे। उनके जलाशय खनन, देवायतन गठन और देवता की प्रतिष्ठा आदि धर्म कार्यानुष्ठान का विवरण पहले ही प्रदान किया गया है। उन्होने गंगा स्नान उपलक्ष में गंगा के किनारे कनक का तुला पुरूष दान और ब्राह्मणों को बहुत सी भूमि दान की थी। उन दिनों राज्य वासियों को मुगल साम्राज्य के भीतर जाने की अनुमति लेनी पड़ती थी। भिन्न राज्य वासियों को बिना अनुमति के त्रिपुरा राज्य में प्रवेश करने का अधिकार नहीं था। किस समय से यह प्रथा चालू हुई, यह जानने का कोई उपाय नहीं है। महाराज गोविन्द के बाद भी बहुत समय तक दोनों राज्यों में यह नियम प्रबल रहने के प्रमाण मिलते हैं। कुछ साल पहले भी अनेक देशीय व्यक्ति और अंग्रेजों को त्रिपुरा प्रवेश के लिए अनुमति पत्र की प्रतीक्षा में सीमावर्ती जगहों पर इन्तजार करते हुए देखा गया है। अनुसंधान करने पर अब भी कुछ लोगों के यहाँ त्रिपुरा राज्य में प्रवेश का अनुमति पत्र मिल जायेगा। भिन्न राज्य का दिया हुआ एक अनुमति पत्र हमें मिला है। वह 1197 सन अर्थात 1200 त्रिपुराब्द का है। तीर्थ यात्रा के उपलक्ष्य में स्व0 जयदेव वजीर महोदय को प्रदान किया गया था। यह प्रथा कितनी व्याप्त थी एवं महाराज गोविन्द माणिक्य के गंगा स्नानार्थ यात्रा के लिए अनुमति लेने की आवश्यकता हुई थी या नहीं जानने का कोई उपाय नहीं है।

महाराज गोविन्द माणिक्य की कीर्ति

राज्य के उन्नति विधान एवं प्रजा के सुख स्वाछन्द के प्रति महाराज गोविन्द की तीव्र दृष्टि थी। उनके राजत्व के पहले गोमती नदी के बाढ़ से शब्य हानि होने पर मेहेरकुल परगना में कृषकों को चाष आबाद में विघ्न उपस्थित हुआ। महाराज ने बडी भारी रकम खर्च करके गोमती नदी के दोनों किनारे पर बहुत उँची मेड बना देने पर, उस विशाल सुविस्तीर्ण परगने में कृषि कार्य की बहुत बडी सुविधा हो गई। वह बडी मेड़ गंगा आइल (गंगा – नदी, आइल – मेड़) अब भी उसी तरह है और महाराज गोविन्द की कीर्ति की घोषणा कर रही है। उन्होंने भूमिकर को कम कर कानि प्रति चार आना अवधार्य कर प्रजाओं का अशेष कल्याण कर दिया था। इस विषय का पूर्ण विवरण पहले ही दिया गया है।

चल–170

महाराज गोविन्द माणिक्य का प्रासाद गोविन्द माणिक्य ने उदयपुर नगरी में गोमती नदी के दक्षिण तीर पर एक प्रासाद निर्माण किया था। इस प्रासाद के भग्नावशेष और अन्तःपुर के महिलाओं की बंशी द्वारा मछली पकड़ने का स्थान इत्यादि देखने पर त्रिपुरेश्वरों के अतीत समृद्धि का परिचय मिलता है। इस प्रासाद की गाँथनी(बनावट) बहुत मजबूत थी। छत ढह गई है, किन्तु दीवारें अभी भी अक्षुण्ण अवस्था में खड़ी हैं। प्राचीन काल की अट्टालिकाओं की तुलनाओं में यह प्रासाद उच्च किस्म का था।

सुजा मस्जिद महाराज गोविन्द और एक कार्य के द्वारा अपने नाम के साथ शाह सुजा का नाम चिर स्मरणीय कर गये हैं। पहले ही कहा गया है, गोविन्द माणिक्य और शाह सुजा राज्याच्युतावस्था में आराकान राज्य में एक साथ रहते समय सुजा द्वारा महाराज को एक हीरा की अँगूठी प्रदान की गई थी। महाराज ने उस अँगूठी के बदले सुजा का नाम स्मरणीय करने के अभिप्राय से, कुमिल्ला के गोमती नदी के किनारे एक मस्जिद का निर्माण कराया था। जहाँ पर यह मस्जिद बनाई गई थी, उस जगह का नाम सुजागंज रखा गया था और यह सुप्रसिद्ध भजनालय, साधारण में "सुजा मस्जिद" के नाम से प्रसिद्ध है।(1) अभी भी महाराज गोविन्द माणिक्य के प्रदत्त करहीन भूमि के आय से इस भजनालय का व्यय संचालन होता है। आवश्यकता पड़ने पर राज सरकारी खर्चे से इसकी मरम्मत करवा दी जाती थी। 1341–42 त्रिपुराब्द में त्रिपुरा के वर्तमान अधीश्वर श्रीश्रीयुत महाराज वीरविक्रमकिशोर माणिक्य की अनुज्ञा से इस मस्जिद का पुनः संस्कार किया गया है।(2)

---

(1) इस बारे में राजमाला में है।

गोमती नदीर कूले मजिद स्थापिया।	गोमती नदी तीर किया मस्जिद निर्माण।
सुजा बादशार नामे मजिद कोरिया।।	सुजा बादशाह के नाम कर दिया अर्पण।।
सुजा नामे एक गंज राजाए बोइसाइलो।	सुजा नाम एक गंज, राजा ने बैठाया।
सुजागंज बोलि नाम ताहार राखिलो।।	सुजागंज नाम उसका नृपति ने किया।।
राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 14पृ	राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 14प

अर्थात, "गोमती नदी के किनारे एक मस्जिद की स्थापना करके सुजा बादशाह के नाम से एक मस्जिद स्थापित किया। उस जगह पर एक बाजार भी बैठाया और सुजा गंज नाम रख दिया।

(2) राजमाला के संग्राहक स्वर्गीय कैलाश चन्द्र सिंह महाशय ने कहा है –शाह सुजा ने त्रिपुरा जय करके उस विजय वृतान्त को चिरस्मरणीय करने के अभिप्राय से इस मस्जिद का निर्माण किया था। इस तरह का एक प्रवाद प्रचलित है। वे इसी प्रवाद वाक्य को ही सत्य मानते है और पुनः उन्होंने ही स्थानांतर पर कहा है–नक्षत्र राय सुजा के द्वारा सहायता की बात पर वे विश्वास नहीं करते हैं क्योकि उन दिनों सुजा, सम्राट औरंगजेब के आक्रमणों से विपन्न थे। नक्षत्र राय को सुजा ने सहायता की थी, यह बात संपूर्ण असंभव है। फिर भी सुजा का त्रिपुरा पर विजय प्राप्त करने की उक्ति संभव है। इन दो बातों के परस्पर सामंजस्य की रक्षा नहीं हो रही है। नक्षत्र राय के त्रिपुरा आक्रमण के बहुत दिनों के पश्चात कथित मस्जिद का निर्मित होना तय है। अतएव इसके पहले सुजा द्वारा त्रिपुरा आक्रान्त होने पर भी उस समय मस्जिद का निर्माण नहीं हुआ। यह बात निश्चित रूप से कही जा सकती है। खासतौर से कैलाश बाबू के कथित प्रवाद वाक्य की बात दूसरा और कोई जानता है। ऐसा हमें ज्ञात नहीं है।

चल–171

राजा द्वारा प्रचलित मोहर व छाप

महाराज गोविन्द ने अपने दरबार से सम्पादित सनद आदि दलिलों में व्यवहार के लिए एक नये आकार की मोहर का प्रचलन किया था। इस जाती की मोहर को पद्म मोहर के नाम से जाना जाता है। इसके चारों ओर वृत्ताकार महाराज गोविन्द के पहले के पाँच राजाओं के नाम और मध्य भाग में अपना नाम उन्होंने अंकित किया था। तब से त्रिपुरा के सभी नृपति अपने अपने नाम से पद्म मोहार (मोहर) प्रस्तुत करवाकर व्यवहार करते आ रहे हैं। शिल्प कला निपुण महाराज वीर चन्द्र माणिक्य के शासन काल में इस मोहर की आकृतिगत उन्नति हुई है। उन्होंने एक पंच दल पद्म के एक एक पद्म दल पर धारावाहिक तरीके से पूर्व के एक एक राजा का नाम अंकन करना और मध्य स्थल पर अपना नाम उत्कीर्ण कराया था। इसके बाद भी सभी नृपति इसी नीति का अनुसरण करते आ रहे हैं। इसके अलावा राजाओं में और एक प्रकार की मोहर प्रचलित है जिसे "आज्ञा मोहर" कहा जाता है। इन सभी मोहरों का विस्तृत वर्णन यथा स्थान प्रदान किया जायेगा।

हाथी के बदले में नमक खरीदना

महाराज गोविन्द माणिक्य ने राज्य में आए एक बनिये से हाथी के बदले में नमक खरीदा था। यह हम पहले ही बता चुके हैं।(1) जिस राज्य में हाथी के बदले में नमक खरीदा गया है, उस राज्य में नमक दुर्भिक्ष था, साधारणतः यही समझा जाता है। पर इस तरह का अनुमान संगत नहीं होगा। उन दिनों त्रिपुरा में विदेशी नमक की तरह साफ सुथरा और सदृश्य नमक का अभाव होना असंभव नहीं है, किन्तु उस समय नमक के उपयोगी बहुत से उपादान थे। बंगाल की खाडी, राजधानी उदयपुर से बहुत दूर नहीं थी। इसके अलावा उदयपुर के करीब और राज्य के नाना जगह नमक बनाने के ढेल(आकर), नमकीन पानी के बहुत से स्रोते थे। इस उपलक्ष में लबन छडा, नुन छडा, हाजा छडा और रामभद्र छडा आदि का नामोल्लेख किया जा सकता है। ये सभी स्रोते हैं और नमकीन पानी बहता है। उन स्रोतों के उद्गम नमक की खान है। भैंसे, गबय या गायाल एक तरह के जानवर, हिरन, घोडा और हाथी आदि जंगली जानवर सदा यहाँ नमकीन कीचड में भरी नमकीन मिट्टी खाते हैं। नमक निकाल लेना या बनाना कष्ट साध्य होने पर भी असंभव नहीं है। बहुत से नमकीन स्रोतों के पानी को उबालकर नमक बनाया जाता है। इस समय भी पहाड़ी जन जाति के लोग मुरली बाँस की नरम जडों को और किसी किसी वनज गुल्मलता पत्तों को जलाकर उसके क्षार से नमक बनाना जानते हैं। अतएव नमक अकाल के कारण हाथी के बदले में नमक लिया था, ऐसी बात नहीं है। विदेशी नमक परिशुद्ध सुदृश्य, तीव्र आस्वादमय और व्यवहार के लिए भी सुविधाजनक है। खासतौर पर त्रिपुरा में यह

---

(1) राजमाला चल गोविन्द माणिक्य खण्ड 13पृ देखें।

चल–172
एक अभिनव वस्तु के रूप में प्रतीत होने पर उक्त लवण, विशेष आग्रह के साथ गृहीत हुआ था। ऐसा प्रतीत होता है।

महाराज गोविन्द माणिक्य के शासन विवरणी की आलोचना से हम देख पाते हैं कि ये न्यायवान, धर्म परायण, देव–द्विज में श्रद्धाशील एवं प्रजा वत्सल नृपति थे। राज्य की उन्नति के लिए उन्होंने बहुत कुछ किया है। उनके शासन काल में बहुत सी जंगलाकीर्ण भूमि, राज अनुकम्पा से कृषि क्षेत्र में परिणत होने पर राजकोष में अर्थ समागम का पथ सुगम हुआ था। त्रिपुरा जिला के गोविन्दपुर नाम से बहुत से गाँव हैं। उनमें अधिकांश ही गोविन्द माणिक्य के द्वारा आबाद किये गये हैं। इसके अलावा एक और गाँव के नामकरण का विवरण यहाँ उल्लेख योग्य है। त्रिपुरेश्वर के जमीदारी के अन्तर्गत दक्षिणाशिक परगना के एक जंगलाकीर्ण गाँव का ''आंधार'' नाम था। महाराज गोविन्द माणिक्य उदयपुर से चन्द्रनाथ तीर्थ में जाते समय, इस गाँव के सड़क के किनारे एक विशाल वट वृक्ष के नीचे शिविका रखकर विश्राम कर रहे थे। इस समय गाँव के बहुत से ब्राह्मण और पंडितों ने उपस्थित होकर महाराज की अभ्यर्थना किया। महाराज ने उनके व्यवहार से संतुष्ट होकर कहा, ''इस गाँव के ''आंधार'' नाम के साथ से हमारी उपाधि ''माणिक्य'' शब्दयुक्त होकर इसका नाम होगा– ''आंधार माणिक्य''। तब से उसी नाम से वह गाँव परिचित हुआ है। उस गाँव के पुरूषानुक्रमिक अधिवासी श्रीयुक्त नन्दकुमार चक्रवर्ती महाशय से यह विवरण संग्रह किया है। ये वयस्क और प्राचीन व्यक्ति हैं। वंशानुक्रम से त्रिपुरेश्वर के अनुगत प्रजा है। एक समय इनकी ख्याति चारों ओर थी और प्रभावशाली व्यक्ति थे।

महाराज गोविन्द माणिक्य की सहायता से बंग साहित्य महाराज गोविन्द केवल धार्मिक और राजनीतिक कुशल व्यक्ति थे, ऐसी बात नहीं है। उन्होंने धर्म के साथ संश्लिष्ट भाव से बंग वाणी के सेवाव्रत में भी आत्मनियोग किया था। इनकी ही अनुज्ञा से राजमाला की तृतीय लहर रचित हुई। इसके अतिरिक्त इन्होंने पंडित मंडलियों की सहायता से वृहन्नारदीय पुराण का जो बंगानुवाद करवाया था, वह साहित्य क्षेत्र में विशेष आदरणीय हुआ है। इस ग्रंथ के कुछ स्थूल विवरण पहले ही दिये गये हैं।

महाराज गोविन्द माणिक्य की कीर्ति–कणिका को लेकर विश्वकवि रविन्द्रनाथ ठाकुर ने ''राजर्षि'' उपन्यास की रचना की है। इस ग्रंथ के रचना का प्रथम सूत्रपात किस तरह हुआ था। रविन्द्र नाथ के आत्मवाक्य में इसकी झलक है। उन्होंने कहा है –

''–दो एक संख्या ''बालक'' प्रकाशित होने पर, एक बार दो एक दिन के लिए देवघर राजनारायण बाबू को देखने के लिए गया था। कलकत्ता लौटते दफे रात की गाड़ी में भीड़ थी। अच्छी तरह नींद नहीं आ रही थी। ठीक आँखों के ऊपर बत्ती जल रही थी। मन में सोचा, नींद जब आ ही नहीं रही है, तो इस सुयोग को ''बालक'' के लिए एक कहानी

चल–173

सोचकर रखूँ। कहानी के बारे में सोचने की व्यर्थ चेष्टा के फलस्वरूप मुझे नींद आ गई। स्वप्न में देखा कि किसी एक मंदिर के सीढी पर बलि का रक्त–चिन्ह देखकर बालिका अत्यन्त करूण व्याकुलता के साथ अपने बाप से पूछती है, बाबा यह क्या। यह तो रक्त है। बालिका के इस कातरता से उसका हृदय से व्यथित हुआ, पर बाहर से क्रोध का भाव दिखाकर किसी तरह प्रश्नों को दबाने की चेष्टा कर रहा है। जागते ही मन में आया यही हमारी स्वप्न लब्ध कहानी है। इस स्वप्न के साथ त्रिपुरा के राजा गोविन्द माणिक्य के पुरावृत्त को मिलाकर ''राजर्षि'' की कहानी लिखते लिखते ''बालक'' में प्रकाशित करने लगा।

जीवन स्मृति – 191–192 पृष्ठ।

विगत 1335 त्रिपुराब्द के फागुन महीने में विश्वकवि रविन्द्रनाथ ने अगरतल्ला राजधानी में पदार्पण किया। उन दिनों अगरतल्ला किशोर–साहित्य समाज द्वारा आहुत सम्बोधन सभा में उन्होंने स्वकीय अविभाषणा में ''राजर्षि'' उपन्यास रचना के बारे में जो दो एक बातें कही थी, उसकी आलोचना करने से यह ज्ञात होता है कि त्रिपुरेश्वर स्वर्गीय वीरचन्द्र माणिक्य से उन्होंने उस ग्रंथ के रचना का ऐतिहासिक उपादान प्राप्त किया था। उन्होंने महाराज वीरचन्द्र के प्रसंग का उत्थापन करके कहा था।

''–इसके बाद से नाना समय नाना तरह के उपदेश एवं विशेष करके, राजर्षि लिखने के समय ''राजमाला'' से संस्कृत विषयों को छापकर भेजा था। उनसे मैं गोविन्द माणिक्य के प्रकृत इतिवृत्त को जान सका था।''

इस विवरण संग्रह के बारे में महाराज वीरचन्द्र माणिक्य और कवि–सम्राट में जो पत्र व्यवहार हुए थे, विगत 1341 त्रिपुराब्द (1338 साल बंगाब्द) रविन्द्र–जयन्ती के कलकत्ते के प्रदर्शनी में राज सरकार की ओर से वह भेजा गया था। उस समय बहुत से लोगों को उसे देखने का सुयोग हुआ था। रविन्द्रनाथ का पत्र नीचे दिया जा रहा है।

ऊँ

23 वैशाख 1293 सन्
बुधवार।

''यथाविहित सम्मानपुरःसर निवेदन,

आप लोगो के राज परिवार के साथ हमारे परिवार का पहले से ही परिचय है। इस तरह मैने सुना है – इसलिए साहसी होकर महाराज को पत्र लिखने को प्रवृत्त हुआ हूँ। हमारे पहले के सम्बन्ध महाराज को स्मरण होगा, यही मेरा अभिप्राय है।

''महाराज शायद सुने होगें कि मैं त्रिपुरा राजवंश के इतिहास को अवलम्बन करके ''राजर्षि'' नाम का एक उपन्यास लिख रहा हूँ, किन्तु उसमें इतिहास की रक्षा नहीं कर सका। इसका कारण है, खुला इतिहास प्राप्त नहीं हुआ। इसलिए यहाँ मार्जना(क्षमा) प्रार्थना विहित विवेचना कर रहा हैँ। इस समय यद्यपि बहुत विलम्ब हो चुका है, तथापि महाराज यदि गोविन्द माणिक्य और उनके भ्राता के राजत्व काल के विशेष इतिहास को मेरे यहाँ प्रेरण करने की अनुमति दे तो मैं यथासाध्य परिवर्तन करने की चेष्टा करूँगा। महाराज गोविन्द माणिक्य

चल–174
उनके निर्वासन की दशा में चट्टगाँव किस स्थान पर किस अवस्था में थे। यह जानना चाहता हूँ। इससे हमारी यथेष्ट सहायता होगी। प्राचीन राजधानी उदयपुर के एवं ऐतिहासिक त्रिपुरा के दूसरी जगहों के फोटोग्राफ यदि मिलना संभव हो, तो हमारा बड़ा ही उपकार होगा।''

''इस पत्र का उत्तर मिलने पर एवं महाराजा के साथ आलाप होने पर, मैं अपना सौभाग्य ज्ञान करूँगा।''

6 नं0 द्वारकाठाकुर का लेन प्रणतः
जोडा साँको। श्रीरविन्द्रनाथ देव शर्म्मणः
कलकत्ता

इस समय 1242 त्रिपुराब्द (बंगला 1339सन्) चल रहा है। पत्र 46 साल पहले रविन्द्रनाथ ने अपने हाथों से लिखा था। उस समय की हस्तलिपि के उनके वर्तमान काल के हस्ताक्षर का कितना पार्थक्य हुआ है, पत्र को देखने पर वह सहज ही ह्रदयंगम होता है। इस पत्र के उत्तर में, महाराज वीरचन्द्र माणिक्य ने जो पत्र लिखा था। वह भी यहाँ प्रदान किया जा रहा है।

श्रीहरि।

सद्गुणान्वितेषु –

आपका पत्र पाकर इतना सुखी हुआ जिसका अन्त नहीं है। आपने लिखा है, हमारे परिवार के साथ आप लोगों का जो सम्बन्ध था उसे याद करा देना ही आपका उद्देश्य है। उस सुख का सम्बन्ध मैं भूला नहीं हूँ। आप पुनः उसकी गौरव वृद्धि में अग्रसर हुए हैं। इसके लिए मैं विशेष आप्यायित और वाधित हुआ हूँ। भरोसा करता हूँ, बीच बीच में आपके अवसर के हिसाब इस तरह आमायिक भाव पूर्ण पत्र मैं पाँउगा।

''मुकुट'' और ''राजर्षि'' नाम के दोनों प्रबन्धों को मैने पाठ करके देखा है। ऐतिहासिक घटना के बारे में जो जो स्खलन हुआ है, उसका संशोधन करना आपको विशेष कष्टसाध्य नहीं होगा।

''राज रत्नाकर'' नाम से त्रिपुर राजवंश एक धारावाहिक संस्कृत इतिहास है। यह ग्रंथ धर्म माणिक्य के राजत्व काल में संकलित होना प्रारंभ हुआ। धर्म माणिक्य ने ''जीवारिबसुमाने'' त्रैपुराब्द में अर्थात त्रिपुरा 868 सन् में राज्य भार ग्रहण किया। इस समय त्रिपुर 1296 सन् है। उस राज रत्नाकर में और एक प्राचीन संस्कृत भाषा में लिखित राजमाला का उल्लेख है। किन्तु वह प्राचीन राजमाला अनुसंधान करने पर कहीं नहीं मिलती।(1) ''राजमाला'' कहकर जो प्रचलित है, वह राजरत्नाकर से संक्षिप्त और संग्रहित है एवं बांग्ला पदय में लिखित है। साधारण लोग पाठ करके जैसे उसे आसानी से समझ सके, इसी अभिप्राय से ही दूसरी ''राजमाला'' की रचना की गई है। इसमें महाराज दैत्य के जीवनवृत्त से वर्णना की गई है। इसके पहले के बहुत से राजाओं का उसमें इतिहास नहीं है। दूसरी बांग्ला राजमाला के लेखक को मैने बालक उम्र में देखा है।(2)

(1) यह ग्रंथ बाद में अगरतल्ला के वजीर भवन में मिला है। –राजमाला संग्राहक।

(2) राजमाला प्रथम लहर के पूर्वाभाष में (90 पृष्ठ में) महाराज की इस उक्ति की आलोचना की गई है। यह पुनः आलोचना निष्प्रयोजन है।

चल–175
इसके अलावा उस तरह बंगला कविता में केवल कृष्ण माणिक्य महाराज के चरित्र को अवलम्बन करके एक इतिहास है, उसका नाम है ''कृष्णमाला''। पर्वतीय प्रजाओं में इस तरह की प्रथा है कि वे अपनी अपनी भाषा में रचना करके महाराजाओं के जीवन–चरित्र के किसी किसी विशेष घटना के अवलम्बन में गीत गाते है। इन गीतों से बहुत से विवरण संगृहीत होने की सुविधा है। यह कहना ही अधिक है।

आपने जो त्रिपुर इतिहास अवलम्बन करके नये उपन्यास लिखने की कोशिश किया है, इससे मैं चिरकृतज्ञ हूँ। जहाँ जहाँ पर इतिहास की जरूरत हो –मैं आदर के साथ पूर्वोक्त नाना स्त्रोतों से उसे संकलन कर देने के लिए प्रस्तुत हूँ। आपके दूसरे दूसरे विषय के प्रबन्धों में इतिहास की यथावत व्याख्या रहे –यह मेरी भी एकान्त वासना है। ऐतिहासिक किसी विशेष अंश के बारे में, संकीर्ण समय के भीतर जिज्ञासा कर, मुझे खबर भेजने पर केवल राज रत्नाकर से जो सहायता मिलती है, उसे दे सकूँगा। थोड़ी सी समय रहने पूछने पर, स्थानीय अवस्था संग्रह करके भी बताने की कोशिश करूँगा। शायद शेषोक्त प्रणाली आपके लिए सन्तोष जनक रहेगी।

हमारे पूर्व पुरूषों की उदयपुर के अलावा धर्मनगर, कल्याणपुर, अमरपुर आदि जगहों पर भी राजधानी थी। उन जगहों पर भी बहुत से कीर्ति कलापों के चिन्ह मिलते है। आपकी आवश्यकता पर, उन जगहों का इतिहास भी बता सकूँगा।

उदयपुर का जो कुछ फोटोग्राफ है, उनका विवरण लिखने के पश्चात वह आपके पास भेज दूँगा।

राज रत्नाकर में गोविन्द माणिक्य के और उनके भ्राता छत्र माणिक्य का चरित्र जिस तरह वर्णित है, उसकी नकल कराई गई है। जल्दी कैसे छपाया जाय उसका उद्योग कर रहा हूँ। मुद्रांकन समाप्त होने पर आपके पास भेज दिया जायेगा।(1) ''राजर्षि'' में कहाँ कहाँ पर इतिहास रक्षित नहीं किया जा सका, उसे राज रत्नाकर के उक्त उद्धृत अंगों को देखकर समझ जायेगें।

''राज रत्नाकर'' को छापने का उद्योग कर रहा हँ सम्पूर्ण आयोजन अभी तक नहीं हो सका है। यदि ईश्वर इच्छा से छाप दिया गया तो उसका एक खण्ड आपके पास भेज दूँगा।

राज रत्नाकर में पौराणिक और ऐतिहासिक दो भाग है। पौराणिक भाग में महाराज दैत्य आदि जीवन चरित्र है और ऐतिहासिक भाग में बंगला यवनों के अधीन था –उस समय के अनेक भाग सुन्दर हैं, उसी अंश का अवलम्बन कर आप अगर नव उपन्यास लिखे तो तुलनात्मक रूप से बहुत प्रशंशनीय होगा। यह मेरा विश्वास है।

यहाँ का सब कुशल है। आपका सर्वागींण निरामय संवाद देखकर सुखी करें इति –
1296 त्रिपुरा, तारीख **18** ज्येष्ठ।

प्रणत –
श्रीवीरचन्द्र देववर्मा

---

(1) यह मुद्रितांश हमारे हाथों में है। निष्प्रयोजनवश उसे यहाँ प्रदान नहीं किया गया। अगरतल्ला ''किशोर साहित्य समाज'' के अभिभाषण में रविन्द्र नाथ ठाकुर ने भी इस मुद्रित विवरण प्राप्ति की बात का उल्लेख किया है।

चल–176

उद्धृत पत्रद्वय में एक भाव विशेष रूप से लक्षणीय है। रविन्द्र नाथ के पत्र में अपने नाम साक्षर करने के पहले ''प्रणतः'' शब्द का व्यवहार किया है। वे महाराज का पितृतुल्य श्रद्धा और सम्मान करते थे। इसलिए ब्राह्मण होते हुए भी क्षत्रिय नरपति के प्रति उस तरह के शब्द प्रयोग में कोई द्विधा बोध नहीं किया। दूसरी ओर महाराज वीरचन्द्र देव–द्विज के प्रति असाधारण श्रद्धावान थे। अतएव रविन्द्र नाथ को अपना स्नेह भाजन के रूप में ज्ञान करने पर भी अपने नाम का साक्षर करने के पहले ''प्रणत'' शब्द के प्रयोग द्वारा ब्राह्मण मर्यादा को पूर्ण मात्रा में सम्मान दिया है। समाज में इस रुप में मधुर भाव का आदान प्रदान बहुत कम देखा जाता है।

''राज रत्नाकर'' ग्रंथ के प्राचीनत्व के बारे में जो लोग संदेह भाव का पोषण करते हैं, महाराज वीरचन्द्र माणिक्य के पत्र का पाठ करने से उनके संदेह का निराकरण होगा, ऐसा मैं विश्वास कर सकता हूँ।

उद्धृत पत्र के साथ ''राजर्षि'' उपन्यास का घनिष्ठ सम्पर्क है एवं ''राजर्षि'' द्वारा महाराज गोविन्द माणिक्य के मधुर चरित्र का विश्लेषण हुआ है। इसी कारणवश गोविन्द माणिक्य के प्रसंग में उन सभी विषयों की अवतारणा करनी पड़ी है। रविन्द्रनाथ का ''विसर्जन'' नाटक भी महाराज गोविन्द माणिक्य के चरित्र पर आधारित है। महाराज वीरचन्द्र माणिक्य के समय से त्रिपुरा के राजा और राजपरिवार के साथ, विश्वकवि रविन्द्रनाथ का जो घनिष्ट सम्पर्क हुआ है, वह थोड़े शब्दों में कहा नहीं जायेगा, विशेषतः यह स्थान कहने का नहीं है। श्री भगवान के कृपा से यदि महाराज वीरचन्द्र के और उनके बाद के राजाओं का विवरण वर्णना का सौभाग्य हो जाये तो उसी समय इस विषय की आलोचना करने की आकांक्षा है।

रियां सम्प्रदाय के प्रति महारानी गुणवती महादेवी की दया महाराज गोविन्द माणिक्य की तरह उनकी महिषी महारानी गुणवती महादेवी भी क्षमाशीला एवं दयार्द्रहृदया थी। उन्होंने रियां सम्प्रदाय के प्रति जो अपरिसीम दया का प्रकाश किया था, उसे सोचने पर विस्मय लगता है। सुप्राचीन प्रथानुसार, त्रिपुरेश्वरगण हर साल माघ महीने की शुक्लाष्टमी तिथि में नदी के ऊपर गंगा पूजन करते हैं। इस पूजा के उपलक्ष्य में पूजा के सात दिवस पहले मुली बाँस के बेत द्वारा बनाया गया रस्सी के दानों किनारे से नदी के दोनों किनारे बाँधकर नदी पथ को रोक दिया जाता है। पूजा समाप्ति के पहले, उस रस्सी को छिन्न करना या हटाना निषिद्ध होता है। महाराज गोविन्द माणिक्य के शासन काल में एक समय गोमती नदी का जल पथ पूर्वोक्त रूप से बन्द कर दिया गया था। उस समय रियां गण बहुत से मुली बाँसों को एक साथ बाँध कर भेला या बोंग की तरह बनाकर बेचने के लिए बहाकर ले आ रहे थे। देवयोग से इस भेला के प्रबल स्रोत ने प्रबल वेग से आकर जल–पथ के अवरोधक रस्सी को छिन्न कर दिया। रियांग लोग बहुत कोशिशों के बावजूद भेला के वेग को रोकने में समर्थ नहीं हो सके। इस तरह राजकर्म————————

असंपूर्ण

दुर्गामणि

1111 व ।।। क्या है?पेज 133,135 1 अर्थ 1/4

111 द्वारा तीन चौक अर्थात बारह कानि अंक का प्रतीक है।

लेखक की अन्य पुस्तके

1	1 RAJMALA Royal Size 462 page With fotoF page isbn to upload 220826
2	2 RAJMALA Royal Size 454 page With fotoF page isbn to upload 220826
3	3 RAJMALA Royal Size 457 page With fotoF page isbn to upload 220826
4	4 RAJMALA Royal Size 182 page With fotoF page isbn to upload 220826
5	book tripura at a glance HINDI fin NOV21 ISBN
6	
7	Banda History 00 front page bnd hist
8	Banda History 00.0 Banda History Index addhyay
9	Banda History 1.01 Etihasik Sanrachana o atihas
10	Banda History 1.02 Etihasik Sanrachana Gosai Himmat Bahadur etc
11	
12	Banda History 2.01 Bhaugolic
13	Banda History 2.02 Nadi Bandh Dam
14	Banda History 2.03 Minrals Soil
15	Banda History 2.04 Mitty Soil Bhumi prakar
16	Banda History 2.05 Patha Pahad ke Prakar
17	Banda History 2.06 Talab Nahar Nale
18	Banda History 2.07 Rain Jal Samasya
19	Banda History 2.08 Muhalle Namkaran
20	Banda History 2.09 Mandir and other Religious places
21	Banda History 2.10 Jansankhya Census 1901 1961
22	Banda History 2.11 Animal, Birds, Trees, Shrubs, Herbs Forests
23	
24	Banda History 3.01 Aarthik Sanrachana Economic Structure
25	Banda History 3.02 Krashi Agricultural Structure
26	Banda History 3.03 Mahua chirongi
27	Banda History 3.04 Tourism Paryatan mandir musium forest jungle
28	Banda History 3.05 Lok Hast shilp Kausal bazar Vyapaar Handicraft & trade
29	Banda History 3.06 Transport Yatayaat Sadak Rail Jal
30	Banda History 3.07 pichhadapau Backwardness Reason and Solutions
31	Banda History 3.08 pichadapan Backeardness - Industry, Causes & solution
32	Banda History 3.09 Pichhadapan Aatmhatya Backeardness Causes & solution
33	Banda History 3.10 Akal sukha Drought, Femine- Causes & solution
34	
35	Banda History 4.01 Bhaasha Sthaniya Boliya Language & Local

	Dialects
36	Banda History 4.02 NEWSPAPER Hist
37	
38	Banda History 5.01 Raaja va Rajnaitik Parivesh Kingdom & Political Scenario
39	Banda History 5.02 Fort Durg kile garh makaan Fort & Selected Building
40	
41	Banda History 6.01 aavaas gramin Rural Housing, LifeStyle
42	Banda History 6.02 Saanskratik Sanrachana Cultural Cunstruct
43	Banda History 6.03 gramin devata Reti Revaz
44	Banda History 6.04 Reti Revaz Rasm lokjeevan
45	Banda History 6.05 Sanskar 16 Sacred Rites
46	Banda History 6.06 16 sringar 16 Traditional Adornments
47	Banda History 6.07 Aabhushan Gudana Metal Craft Ornament Tattoo
48	Banda History 6.08 Veshbhusha Pahnava Attire
49	
50	Banda History 7.01 manoranjan cinema kavi Enterainment
51	Banda History 7.02 Tyohar Festival Celebration
52	Banda History 7.03 Lok chitra kala Folk Painting Art
53	Banda History 7.04 Lok Geet Folk Song
54	Banda History 7.05 Lok Natya Folk Theatre
55	Banda History 7.06 Lok Nratya Folk Dance
56	Banda History 7.07 Lok Sangeet Folk Music
57	Banda History 7.08 Lok Vadya yantra Musical Instrument
58	Banda History 7.09 kahaani Folk Tales
59	Banda History 7.10 Lok Kahavate muhavare Folk ProverbSayings Idioms
60	
61	Banda History 8.01 Food Bhojan va Bhojan Vyastha Food & Dish
62	Banda History 8.01 Food ODOC Sohan halva p8
63	Banda History 8.02 health in Food med geet Food & Health
64	Banda History 8.03 Jaati va Vyastha Caste System
65	Banda History 8.04 Lok Visvas Lokachaar Kuretiya Folk Faith, Ethos & Bad Customs
66	
67	Banda History 9.01 CLUB Maidan Club & Ground
68	Banda History 9.02 Purane Bhavan Old building
69	
70	Banda History 10.01 sambhranto ka bhramanan Elite Visit
71	
72	Banda History 11.0 Sandarbh Sabhaar Saujanya Context Reference Greatfully Courtesy